उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जनवरी-मार्च, 2015

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
ओरियंटल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड **बनाम** सुदेश कुमारी और अन्य	99
कनक बाला मंडल (श्रीमती) और अन्य **बनाम** श्रीमती अंजलि करमाकर	68
जय प्रकाश शर्मा **बनाम** सुशील कुमार शर्मा	110
न्यू इंडिया इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड **बनात** श्रीमती फूलमतिया और अन्य	1
परमा और अन्य **बनाम** शिव सिंह (मृत) **मार्फत** उसके विधिक प्रतिनिधिगण	141
परस राम **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	162
बिन्द्रा प्रसाद गौड़ **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	46
भारत संघ **बनाम** राम कृष्ण	131
राजेन्द्र प्रसाद सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	22
सुप्यार कंवर (श्रीमती) और अन्य **बनाम** प्यारे लाल और अन्य	73

संसद् के अधिनियम

आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (19) – (51)

जनवरी-मार्च, 2015 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

सहायक संपादक
कमला कान्त

महत्वपूर्ण निर्णय

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 का नियम 16] – पदच्युति आदेश रद्द होना – पद बहाली होना – पिछली मजदूरियों की मांग करना – यदि कोई सरकारी कर्मचारी पदच्युति आदेश रद्द होने के कारण पुनः पद पर बहाल हो जाता, तो वह अधिकारस्वरूप पिछली मजदूरियों को पाने का हकदार नहीं हो जाता – यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है क्योंकि ऐसे मामले में "काम नहीं वेतन नहीं" का मौलिक सिद्धान्त लागू होता है ।

राजेन्द्र प्रसाद सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 22

संसद् के अधिनियम

आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (19) – (51)

पृष्ठ संख्या 1 – 169 **(2015) 1 सि. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका – जनवरी-मार्च, 2015 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 1 – 169)

संपादक-मंडल

डा. संजय सिंह,
सचिव, विधायी विभाग

श्री के. बिस्वाल, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

प्रो. डा. वैभव गोयल,
सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
विधि विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

श्री महमूद अली खां,
संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री विनोद कुमार आर्य, कमला कान्त, अविनाश शुक्ला, असलम खान और राकेश उपाध्याय

उप-संपादक : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 12

वार्षिक : ₹ 135

© 2015 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 166क तथा धारा 173 – यान दुर्घटना – क्षतिपूर्ति का दावा – क्षतिपूर्ति का अवधारण – अविवाहित मृतक की आयु – उसकी मासिक आय – आश्रितों की प्रास्थिति – यदि यान दुर्घटना में कारित क्षतियों के लिए क्षतिपूर्ति अवधारित करते समय अविवाहित मृतक की आयु, उसकी मासिक आय, आश्रितों की प्रास्थिति आदि तथा उस समय के अन्य सुसंगत तथ्यों को ध्यान में रखा जाता है तो इस प्रकार अवधारित क्षतिपूर्ति को अल्प या अयुक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता है तथा ऐसी क्षतिपूर्ति न्यायसंगत, क्षति के अनुरूप, युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी अन्यथा नहीं ।

सुप्यार कंवर (श्रीमती) और अन्य बनाम **प्यारे लाल और अन्य** 73

– धारा 173 – प्रश्नगत यान (ट्रक) को उपेक्षापूर्वक और उतावलेपन से चलाया जाना – ट्रक द्वारा कारित दुर्घटना के कारण हुई क्षतियों के परिणामस्वरूप आहत की मृत्यु होना – प्रश्नगत ट्रक के पास यात्रियों को ले जाने का परमिट न होना – प्रतिकर – बीमा कंपनी का दायित्व – जहां बीमा पालिसी की शर्तों के भंग में यान चलाया गया हो वहां भी कारित दुर्घटना में बीमा कंपनी प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है तथापि, बीमा कंपनी, बीमाकृत यान के स्वामी से स्वयं द्वारा संदत्त प्रतिकर की रकम वसूल करने की हकदार होगी ।

न्यू इंडिया इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती फूलमतिया और अन्य** 1

पृष्ठ संख्या

– धारा 173 और 2(21) – यानीय दुर्घटना – ट्रैक्टर चालक द्वारा ट्रैक्टर को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण स्कूटर से टक्कर होना – टक्कर के परिणामस्वरूप स्कूटर चालक की मृत्यु होना – दुर्घटना के समय ट्रैक्टर चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति होना – बीमा पालिसी के अधीन ट्रैक्टर चलाया जाना – बीमाकर्ता का दायित्व – यदि यह साबित कर दिया जाता है कि ट्रैक्टर बीमा पालिसी के अधीन चलाया जा रहा था तथा ट्रैक्टर चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति थी और ट्रैक्टर चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक ट्रैक्टर चलाने के कारण दुर्घटना घटित हुई जिसके परिणामस्वरूप स्कूटर चालक क्षतिग्रस्त हुआ और कारित क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हुई तो बीमा कंपनी अपने दायित्व से इस आधार पर बच नहीं सकती कि यान बीमा पालिसी के अधीन नहीं चलाया जा रहा था ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड बनाम **सुदेश कुमारी और अन्य** 99

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 – धारा 2(i) और धारा 47] – याची का सेवा के दौरान जीर्ण खंडित मनस्कता के रोग से पीड़ित होना – इस आधार पर याची को सेवानिवृत्त किया जाना – याची द्वारा तत्समय प्रवृत्त राज्य की अनुकम्पा नीति के अनुसार अपनी पत्नी या पुत्र को नियुक्ति प्रदान करने के लिए आवेदन किया जाना – आवेदन नामंजूर किया जाना – चुनौती – ऐसे मामलों में, यदि तत्समय प्रवृत्त विधि और विभागीय अनुकम्पा नीति के अधीन, दोनों में से किसी एक विकल्प के

पृष्ठ संख्या

अधीन फायदा प्राप्त कर लिया जाता है तो दूसरे विकल्प के अधीन भी फायदा प्राप्त करने का दावा नहीं किया जा सकता है ।

परस राम बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 162

– अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 का नियम 16] – पदच्युति आदेश रद्द होना – पद बहाली होना – पिछली मजदूरियों की मांग करना – यदि कोई सरकारी कर्मचारी पदच्युति आदेश रद्द होने के कारण पुनः पद पर बहाल हो जाता, तो वह अधिकारस्वरूप पिछली मजदूरियों को पाने का हकदार नहीं हो जाता – यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है क्योंकि ऐसे मामले में ''काम नहीं वेतन नहीं'' का मौलिक सिद्धान्त लागू होता है ।

राजेन्द्र प्रसाद सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 22

– अनुच्छेद 226, 311(1)(2)(3) [सपठित उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 का नियम 8 और 16] – रिट – पुलिस अधिकारी की पदच्युति – समुचित जांच नहीं किया जाना – नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन नहीं किया जाना – यदि किसी सरकारी कर्मचारी को समुचित जांच किए बिना और उसे सुनवाई का अवसर दिए बिना उसके पद से पदच्युत किया जाता है तो ऐसा पदच्युति आदेश न केवल नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों की अवहेलना करता है अपितु संविधान, 1950 का भी अतिक्रमण करता है ।

राजेन्द्र प्रसाद सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 22

पृष्ठ संख्या

– अनुच्छेद 226 और 342 [सपठित संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967] – रिट – किसी भारतीय व्यक्ति की जाति का अवधारण करना – विधि और विहित प्रक्रिया का पालन नहीं करना – पारित आदेश मनमाना, शून्य और अविधिमान्य होने के नाते कायम रखे जाने योग्य नहीं होना – यदि किसी भारतीय व्यक्ति की जाति अवधारित करने में विधि और विहित प्रक्रिया का अनुपालन नहीं किया जाता है और मनमाने तरीके से उसकी जाति अवधारित की जाती है तो यह न केवल मनमाना, शून्य और अविधिमान्य होगा अपितु विधि में भी कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

बिन्द्रा प्रसाद गौड़ बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 46

– अनुच्छेद 227 [सपठित उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68) – धारा 21(ख)] – उच्च न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता – प्रयोग – गलती से उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल करने के कारण जिला उपभोक्ता अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील फाइल करने में असाधारण विलंब – विलंब की माफी के लिए आवेदन – राज्य उपभोक्ता आयोग द्वारा आवेदन खारिज किया जाना – अनुच्छेद 227 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन – उच्च न्यायालय ऐसे किसी मामले में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 21(ख) के अधीन उपचार उपलब्ध होते हुए भी अपनी अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग करके हस्तक्षेप कर सकता है ।

कनक बाला मंडल (श्रीमती) और अन्य बनाम **श्रीमती अंजलि करमाकर** 68

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 100 और आदेश 39 – द्वितीय अपील – स्थायी व्यादेश – विवादित संयुक्त आबादी भूमि अधिकारधारकों

पृष्ठ संख्या

के बीच विभाजित नहीं होना – भूमि का प्रयोग सामान्य प्रयोजनों जैसे रास्ते आदि के लिए किया जाना – अधिकारधारकों में एक द्वारा उस भूमि पर सेप्टिक टैंक का निर्माण करना – सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् भूमि बराबर करना जिससे भूमि का सार्वजनिक उपयोग बाधित न हो – इस प्रकार की भूमि अधिक्रमण को रोकने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की मांग करना – मांग खारिज होना – उपर्युक्त परिस्थितियों में स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की मांग खारिज करना समुचित, सही और न्यायोचित है ।

जय प्रकाश शर्मा बनाम **सुशील कुमार शर्मा** 110

– धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रत्यास्थापन अधिनियम, 1976 की धारा 13 और परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 18] – द्वितीय अपील – बंधक विलेख की अभिस्वीकृति – अभिस्वीकृति विधिमान्य नहीं होना – परिसीमा अवधि की गणना विधिमान्य अभिस्वीकृति की तारीख से किया जाना – बंधक मोचन कराने के लिए विधि में विहित परिसीमा अवधि व्यतीत हो जाना – यदि बंधक मोचन कराने के लिए विधिमान्य अभिस्वीकृति की तारीख से विहित परिसीमा अवधि व्यतीत हो जाती है और तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन उपलब्ध अन्य उपचार का भी लाभ नहीं उठाया जाता है तो तत्पश्चात् बंधक मोचन के लिए फाइल वाद विबंधित हो जाएगा ।

परमा और अन्य बनाम **शिव सिंह (मृत)** मार्फत **उसके विधिक प्रतिनिधिगण** 141

सेवा नियम, 1954

– नियम 13(3) [सपठित पेंशन विनियम 173, 173क, 183, 186 और विनियम 173 के परिशिष्ट 2

पृष्ठ संख्या

का नियम 1 और 2] – निःशक्तता पेंशन – शारीरिक क्षति के कारण रिट याची को निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में रखा जाना – हताश होकर याची द्वारा सेना की सेवा से उन्मुक्ति का अनुरोध किया जाना – अनुरोध का अनुमोदन करते हुए याची को सेवोन्मुक्त किया जाना – याची को केवल सेवा पेंशन प्रदान करते हुए निःशक्तता पेंशन प्रदान करने से इनकार करना – ऐसे मामलों में अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्ति के लिए अनुरोध करने के कारण ही निःशक्तता पेंशन का दावा करने का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता है ।

भारत संघ बनाम **राम कृष्ण** 131

न्यू इंडिया इंश्योरेंश कम्पनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती फूलमतिया और अन्य

तारीख 29 फरवरी, 2012

न्यायमूर्ति सत्यपूत महरोत्रा और न्यायमूर्ति वाई. सी. गुप्ता

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – प्रश्नगत यान (ट्रक) को उपेक्षापूर्वक और उतावलेपन से चलाया जाना – ट्रक द्वारा कारित दुर्घटना के कारण हुई क्षतियों के परिणामस्वरूप आहत की मृत्यु होना – प्रश्नगत ट्रक के पास यात्रियों को ले जाने का परमिट न होना – प्रतिकर – बीमा कंपनी का दायित्व – जहां बीमा पालिसी की शर्तों के भंग में यान चलाया गया हो वहां भी कारित दुर्घटना में बीमा कंपनी प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है तथापि, बीमा कंपनी, बीमाकृत यान के स्वामी से स्वयं द्वारा संदत्त प्रतिकर की रकम वसूल करने की हकदार होगी ।

वर्तमान मामले में, प्रताप **उर्फ** राम प्रताप एक ट्रक जिसका रजिस्ट्रेशन सं. यू पी 90बी 9557 से एक बारात में गया था; और कि तारीख 5 जून, 2009 को लगभग सुबह 9.00 बजे, जब उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप बारात के साथ वापस आ रहा था तो प्रश्नगत यान (ट्रक) जिसे उसके चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जा रहा था जिसके कारण वह उलट गया और उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उक्त क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । प्रत्यर्थी सं. 5 प्रश्नगत यान का स्वामी था जबकि अपीलार्थी-बीमा कंपनी से प्रश्नगत यान बीमाकृत था । प्रत्यर्थी सं. 4 प्रश्नगत यान का चालक था । अधिकरण ने अन्य बातों के साथ यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत दुर्घटना प्रश्नगत यान के चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण घटित हुई थी जिसके परिणामस्वरूप उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप को गंभीर क्षतियां पहुंचीं

थीं और उक्त क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय अपीलार्थी-बीमा कंपनी से बीमाकृत था । अधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान के चालक के पास प्रश्नगत दुर्घटना के समय विधिमान्य और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति थी । अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान का परमिट माल ढोने के लिए था और यात्रियों या बारात को ले जाने के लिए नहीं था, और इस प्रकार, प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन करते हुए चलाया जा रहा था । उपरोक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने तारीख 28 जुलाई, 2011 को आक्षेपित निर्णय और आदेश/अधिनिर्णय पारित किया, अन्य बातों के साथ, दावेदार-प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 के लिए अंतिम संदाय की तारीख तक दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से 6 प्रतिशत ब्याज की दर के साथ 4,03,000/- रुपए की प्रतिकर रकम अधिनिर्णीत की है । तथापि, अधिकरण द्वारा अभिलिखित किए गए उपरोक्त तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन करते हुए चलाया जा रहा था, अधिकरण ने यह निदेश दिया है कि प्रतिकर की रकम अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा संदत्त करनी होगी और इसके पश्चात्, अपीलार्थी-बीमा कंपनी को प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) से उसे वसूल करने का अधिकार होगा । इससे व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 147 के अधीन बीमा पालिसी जारी करने वाला कोई बीमाकर्ता उस व्यक्ति की या उन वर्गों के व्यक्तियों की जो पालिसी में विनिर्दिष्ट हैं, किसी ऐसे दायित्व की बाबत क्षतिपूर्ति करने के लिए जिम्मेदार होगा जिसकी उस व्यक्ति या उन वर्गों के व्यक्तियों के मामले में पूर्ति के लिए वह पालिसी तात्पर्यित है । यदि पालिसी द्वारा बीमाकृत किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई निर्णय या अधिनिर्णय प्राप्त कर लिया गया है तो बीमाकर्ता उसके अधीन देय बीमाकृत रकम से अनधिक कोई रकम का उस व्यक्ति को जो डिक्री का फायदा पाने का हकदार है, इस प्रकार संदाय करेगा मानो वे खर्चों और ब्याज की रकम के साथ दायित्व के संबंध में निर्णीत-ऋणी हो । ऐसा तब भी होगा जब बीमाकर्ता पालिसी से इनकार करने या रद्द करने का हकदार हो अथवा इनकार या रद्द कर सकता हो । उपर्युक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए न्यायालय का यह मत है कि अधिकरण द्वारा दिए गए इस निदेश

में जिसके द्वारा आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन प्रतिकर जमा करने के लिए बीमा कंपनी-अपीलार्थी से अपेक्षा की गई है और उसके पश्चात् उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी से विधि के अनुसार उसे वसूल करने का निदेश दिया गया है, कोई त्रुटि नहीं है । विनिश्चयों में अनुध्यात निदेशों की अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा निष्पादन न्यायालय के समक्ष उस समय ईप्सा की जा सकती है जब अपीलार्थी-बीमा कंपनी आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन अधिनिर्णीत रकम को जमा करने के पश्चात् बीमाकृत व्यक्ति अर्थात् प्रश्नगत यान के स्वामी (इसमें के प्रत्यर्थी सं. 3) से उक्त रकम वसूल करने के लिए निष्पादन न्यायालय के समक्ष समुचित आवेदन करे और जब दावाकर्ता अधिनिर्णय के निष्पादन के लिए या अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा जमा की गई रकम को निर्मुक्त करने के लिए आवेदन फाइल करे । न्यायालय इस संबंध में कोई राय व्यक्त नहीं कर रहा है । उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए न्यायालय का यह मत है कि अधिकरण ने बीमा कंपनी-अपीलार्थी को प्रतिकर की रकम जमा करने और बीमाकृत व्यक्ति अर्थात् प्रश्नगत यान के स्वामी-प्रत्यर्थी सं. 5 से उसे वसूल करने का निदेश देने में कोई अवैधता कारित नहीं की है । आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन रकम जमा करने के पश्चात् बीमा कंपनी-अपीलार्थी के लिए यह विकल्प खुला है कि वह उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) से उसे वसूल करने के लिए अधिकरण के समक्ष समुचित कार्यवाहियां आरंभ करे और ऐसी कार्यवाहियों में समुचित निदेश प्राप्त करे । यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि दावेदार-प्रत्यर्थी सं. 1, 3 और 4 या उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) द्वारा आक्षेपित अधिनिर्णय के विरुद्ध कोई अपील फाइल की जाती है तो बीमा कंपनी-अपीलार्थी के लिए यह विकल्प खुला रहेगा कि वह विधिक आधारों पर उसका विरोध करे । अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा वर्तमान अपील फाइल करते समय जमा की गई 25,000/- रुपए की रकम आक्षेपित निर्णय में दिए गए निदेशों के अनुसार अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा जमा की जाने वाली रकम में समायोजित करने के लिए अधिकरण को लौटाई जाएगी । (पैरा 19, 21, 22, 35, 39, 40, 41 और 42)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	2009 (1) ए. डब्ल्यू. सी. 355 : **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **श्रीमती खुर्शीदा बानो और अन्य ;**	38

[2008]	2008 (1) टी. ए. सी. 803 (एस. सी.) : **प्रेम कुमारी और अन्य** बनाम **प्रह्लाद देव और अन्य ;**	23,30
[2007]	(2007) 3 एस. सी. सी. 700 = 2007 (2) टी. ए. सी. 398 (एस. सी.) : **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **लक्ष्मी नारायण दत्त ;**	23,28,30
[2007]	2007 (1) टी. ए. सी. 20 (इलाहाबाद) : **श्रीमती भूरी और अन्य** बनाम **श्रीमती शोभा रानी और अन्य ;**	37
[2005]	2005 (1) टी. ए. सी. 4 (एस. सी.) : **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **छल्ला भरथम्म्मा ;**	15,34
[2004]	[2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531 = (2004) 3 एस. सी. सी. 297 = 2004 (1) टी. ए. सी. 321 : **नेशनल इंश्योरेंश कम्पनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य ;**	23,26 28,29,30
[2004]	2004 (2) टी. ए. सी. 12 (एस. सी.) : **ओरियंटल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **श्री नन्जप्पन और अन्य ;**	15,33
[1998]	ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 588 : **ओरियन्टल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **इंदरजीत कौर और अन्य** ।	23,26

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की प्रथम अपील सं. 3102.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री अमित मनोहर

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री ए. आर. द्विवेदी और ए. आर. मनोहर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सत्यपूत महरोत्रा ने दिया ।

न्या. महरोत्रा – वर्तमान अपील मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन दावेदार-प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने 2009 की मोटर दुर्घटना मामला सं. 253/70 में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, बांदा द्वारा पारित तारीख 28 जुलाई, 2011 के निर्णय और ओदश/अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई, दुर्घटना में प्रताप **उर्फ** राम प्रताप की मृत्य तारीख 5 जून, 2009 को लगभग सुबह 9.00 बजे हुई थी ।

2. दावा याचिका में पक्षकथन यह था कि उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप एक ट्रक जिसका रजिस्ट्रेशन सं. यू पी 90बी 9557 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "प्रश्नगत यान" कहा गया है) से एक बारात में गया था; और कि तारीख 5 जून, 2009 को लगभग सुबह 9.00 बजे, जब उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप बारात के साथ वापस आ रहा था तो प्रश्नगत यान (ट्रक) जिसे उसके चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जा रहा था जिसके कारण वह उलट गया और उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उक्त क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई ।

3. प्रत्यर्थी सं. 5 प्रश्नगत यान का स्वामी था जबकि अपीलार्थी-बीमा कंपनी से प्रश्नगत यान बीमाकृत था । प्रत्यर्थी सं. 4 प्रश्नगत यान का चालक था ।

4. पक्षकारों के बीच अभिवाकों के आदान-प्रदान के पश्चात् अधिकरण ने उक्त मामले में विवाद्यक विरचित किए ।

5. उक्त दावा याचिका में साक्ष्य का अवलंब लिया गया ।

6. अभिलेख पर रखी गई सामग्री पर विचार करते हुए, अधिकरण ने अनेकों विवाद्यकों पर अपने निष्कर्ष अभिलिखित किए थे ।

7. अधिकरण ने अन्य बातों के साथ यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत दुर्घटना प्रश्नगत यान के चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण घटित हुई थी जिसके परिणामस्वरूप उक्त प्रताप **उर्फ** राम प्रताप को गंभीर क्षतियां पहुंचीं थीं और उक्त क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई ।

8. अधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय अपीलार्थी-बीमा कंपनी से बीमाकृत था ।

9. अधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान के

चालक के पास प्रश्नगत दुर्घटना के समय विधिमान्य और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति थी ।

10. अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत यान का परमिट माल ढोने के लिए था और यात्रियों या बारात को ले जाने के लिए नहीं था, और इस प्रकार, प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन करते हुए चलाया जा रहा था ।

11. उपरोक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने तारीख 28 जुलाई, 2011 को आक्षेपित निर्णय और आदेश/अधिनिर्णय पारित किया, अन्य बातों के साथ, दावेदार-प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 के लिए अंतिम संदाय की तारीख तक दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से 6 प्रतिशत ब्याज की दर के साथ 4,03,000/- रुपए की प्रतिकर रकम अधिनिर्णीत की है ।

12. तथापि, अधिकरण द्वारा अभिलिखित किए गए उपरोक्त तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि प्रश्नगत यान दुर्घटना के समय बीमा पालिसी के निबंधनों का उल्लंघन करते हुए चलाया जा रहा था, अधिकरण ने यह निदेश दिया है कि प्रतिकर की रकम अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा संदत्त करनी होगी और इसके पश्चात्, अपीलार्थी-बीमा कंपनी को प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) से उसे वसूल करने का अधिकार होगा ।

13. हमने अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री अमित मनोहर को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

14. अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री अमित मनोहर ने यह दलील दी कि अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि पूर्वोक्त प्रश्नगत यान बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों के विरुद्ध चलाया जा रहा था, अधिकरण ने प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए अपीलार्थी बीमा कंपनी को निदेश देने में और उसके पश्चात् प्रश्नगत यान के स्वामी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 5 से उसे वसूल करने का आदेश करने में गलती की है ।

15. अमित मनोहर ने यह दलील दी कि किसी भी दशा में अपीलार्थी-बीमा कंपनी का हित प्रश्नगत यान के स्वामी (जो प्रत्यर्थी सं. 3 है) के विरुद्ध उचित रूप से सुरक्षित किया जाना चाहिए था ताकि आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन प्रतिकर का संदाय करने के पश्चात् अपीलार्थी-बीमा कंपनी उपर्युक्त प्रश्नगत यान के स्वामी से उसे वसूल करने में समर्थ हो

सके । श्री बी. सी. नायक ने इस संबंध में निम्नलिखित विनिश्चयों का अवलंब लिया है :–

1. **ओरियन्टल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **श्री नन्जप्पन और अन्य**[1];

2. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **छल्ला भरथम्मा**[2];

16. हमने अपीलार्थी-बीमा कंपनी की ओर से विद्वान् काउंसेल अमित मनोहर द्वारा दी गई दलीलों पर विचार किया ।

17. जहां अमित मनोहर द्वारा दी गई इस दलील का संबंध है कि अधिकरण ने प्रतिकर का संदाय करने के लिए और उसके पश्चात् प्रश्नगत यान के स्वामी से उसे वसूल करने के लिए बीमा कंपनी को निदेश करने में गलती की है, इस संबंध में मोटर यान अधिनियम, 1988 के सुसंगत उपबंधों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा ।

18. मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 147 की उपधारा (5) इस प्रकार है :–

> "147. **पालिसियों की अपेक्षाएं तथा दायित्व की सीमाएं** – (1) से (4) .....
>
> (5) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में किसी बात के होते हुए भी, कोई बीमाकर्ता जो इस धारा के अधीन बीमा पालिसी देता है, उस व्यक्ति की या उन वर्गों के व्यक्तियों की जो पालिसी में विनिर्दिष्ट हैं, किसी ऐसे दायित्व की बाबत क्षतिपूर्ति करने के लिए जिम्मेदार होगा जिसकी उस व्यक्ति या उन वर्गों के व्यक्तियों के मामले में पूर्ति के लिए वह पालिसी तात्पर्यित है ।"

19. इस प्रकार, उपर्युक्त उपबंध यह उपबंधित करता है कि मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 147 के अधीन बीमा की पालिसी जारी करने वाला कोई बीमाकर्ता उस व्यक्ति की या उन वर्गों के व्यक्तियों की जो पालिसी में विनिर्दिष्ट हैं, किसी ऐसे दायित्व की बाबत क्षतिपूर्ति करने के लिए जिम्मेदार होगा जिसकी उस व्यक्ति या उन वर्गों के व्यक्तियों के मामले में पूर्ति के लिए वह पालिसी तात्पर्यित है ।

20. मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 149 में जहां तक यह सुसंगत है, निम्नलिखित उपबंधित है :–

---

[1] 2004 (2) टी. ए. सी. 12 (एस. सी.).

[2] 2005 (1) टी. ए. सी. 4 (एस. सी.).

"149. **पर-व्यक्ति जोखिमों की बाबत बीमाकृत व्यक्तियों के विरुद्ध हुए निर्णयों और अधिनिर्णयों की तुष्टि करने का बीमाकर्ताओं का कर्तव्य** – (1) यदि किसी व्यक्ति के पक्ष में, जिसने पालिसी कराई है, धारा 147 की उपधारा (3) के अधीन बीमा-प्रमाणपत्र दे दिए जाने के पश्चात्, धारा 147 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन पालिसी द्वारा पूरा करने के लिए अपेक्षित दायित्व के संबंध में (जो दायित्व पालिसी के निबंधनों के अंतर्गत है) (या धारा 163क के उपबंधों के अधीन है) ऐसे किसी व्यक्ति के विरुद्ध निर्णय और अधिनिर्णय अभिप्राप्त कर लिया जाता है जिसका पालिसी द्वारा बीमा किया हुआ है तो इस बात के होते हुए भी कि बीमाकर्ता पालिसी को शून्य करने या रद्द करने का हकदार है अथवा उसने पालिसी शून्य या रद्द कर दी है, बीमाकर्ता इस धारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए डिक्री का फायदा उठाने के हकदार व्यक्ति को, उस दायित्व के संबंध में उसके अधीन देय राशि, जो बीमाकृत राशि से अधिक न होगी, खर्चों की बाबत देय किसी रकम तथा निर्णयों पर ब्याज संबंधी किसी अधिनियमिति के आधार पर उस राशि पर ब्याज की बाबत देय किसी रकम सहित इस प्रकार देगा मानो वह निर्णीत-ऋणी हो ।

(2) से (7).....।"

21. उपर्युक्त उद्धृत उपबंध से यह दर्शित होता है कि यदि बीमा पालिसी द्वारा बीमाकृत किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई निर्णय या अधिनिर्णय प्राप्त कर लिया गया है तो बीमाकर्ता उसके अधीन देय बीमाकृत रकम से अनधिक कोई रकम का उस व्यक्ति को जो डिक्री का फायदा पाने का हकदार है, इस प्रकार संदाय करेगा मानो वे खर्चों और ब्याज की रकम के साथ दायित्व के संबंध में निर्णीत-ऋणी हो । ऐसा तब भी होगा जब बीमाकर्ता बीमा पालिसी से इनकार करने या रद्द करने का हकदार हो अथवा इनकार या रद्द कर सकता हो ।

22. उपर्युक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए हमारा यह मत है कि अधिकरण द्वारा दिए गए इस निदेश जिसके द्वारा आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन प्रतिकर जमा करने के लिए बीमा कंपनी-अपीलार्थी से अपेक्षा की गई है, उसके पश्चात् उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी से विधि के अनुसार उसे वसूल करने का निदेश दिया गया है, कोई त्रुटि नहीं है ।

23. उपरोक्त निष्कर्ष माननीय उच्चतम न्यायालय के विभिन्न विनिश्चयों द्वारा समर्थित है :–

1. **ओरियंटल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **इंदरजीत कौर और अन्य**[1]

2. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[2]

3. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **लक्ष्मी नारायण दत्त**[3]

4. **प्रेम कुमारी और अन्य** बनाम **प्रह्लाद देव और अन्य**[4]

24. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **ओरियंटल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **इंदरजीत कौर और अन्य**[1] वाले मामले में मत व्यक्त किया है :–

> "7. अतः, हमारे समक्ष यही स्थिति है । बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 64-फख द्वारा सृजित वर्जन के बावजूद अपीलार्थी, प्राधिकृत बीमाकर्ता ने बस के लिए प्रीमियम प्राप्त किए बिना बीमा पालिसी जारी कर दी थी । मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 147(5) और धारा 149(1) के उपबंधों के आधार पर अपीलार्थी उस दायित्व के संबंध में तृतीय पक्षकार की जिसके लिए पालिसी ली गई थी, क्षतिपूर्ति के लिए और इसकी हकदारी होते हुए भी उसके संबंध में प्रतिकर के अधिनिर्णयों का समाधान करने के लिए दायी है, (जिस पर हम कोई राय व्यक्त नहीं कर रहे हैं) भले ही वह इस कारण से पालिसी से इनकार करे या रद्द कराए कि प्रीमियम के संदाय में जारी चैक का आदरण नहीं हुआ था ।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

25. इस प्रकार, यह विनिश्चय, मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 147(5) और 149(1) के आधार पर उपर्युक्त उल्लिखित निष्कर्ष का समर्थन करता है ।

26. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

> "105. इन याचिकाओं में उठे विभिन्न विवाद्यकों से संबंधित हमारे निष्कर्षों का सारांश इस प्रकार है –

---

[1] ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 588.

[2] [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531 = (2004) 3 एस. सी. सी. 297 = 2004 (1) टी. ए. सी. 321.

[3] (2007) 3 एस. सी. सी. 700 = 2007 (2) टी. ए. सी. 398 (एस. सी.).

[4] 2008 (1) टी. ए. सी. 803 (एस. सी.).

(i) मोटर यान अधिनियम, 1988 का अध्याय 11 जिसमें पर-व्यक्तियों के जोखिमों के विरुद्ध यानों के अनिवार्य बीमा के लिए उपबंध है, मोटर यानों के प्रयोग के द्वारा कारित दुर्घटनाओं के शिकार व्यक्तियों को प्रतिकर द्वारा अनुतोष प्रदान करने के लिए एक समाज कल्याणकारी विधान है । सभी यानों का अनिवार्य बीमा सुरक्षा उपबंध इस सर्वोपरि उद्देश्य की दृष्टि से है और अधिनियम के उपबंधों का निर्वचन उक्त उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए किया जाना चाहिए ।

(ii) बीमाकर्ता मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 163क या धारा 166 के अधीन फाइल दावा याचिका में, अन्य बातों के साथ-साथ, उक्त अधिनियम की धारा 149(2)(क)(ii) के निबंधनों के अनुसार प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने का हकदार है ।

(iii) बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से बचने के लिए पालिसी की शर्त का भंग अर्थात् अधिनियम की धारा 149 की उपधारा 2(क)(ii) में यथाअंतर्विष्ट चालक अयोग्यता या चालक द्वारा अविधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति को बीमाकृत व्यक्ति द्वारा किया गया साबित होना चाहिए । मात्र चालन अनुज्ञप्ति का न होना, उसका जाली या अविधिमान्य होना या सुसंगत समयबिंदु पर यान चालन के लिए चालक की अयोग्यता स्वयमेव ही बीमाकृत व्यक्ति या पर-व्यक्ति के विरुद्ध बीमाकर्ता को उपलब्ध प्रतिरक्षाएं नहीं हैं । बीमाकृत व्यक्ति के विरुद्ध अपने दायित्व से बचने के लिए बीमाकर्ता को यह साबित करना चाहिए कि बीमाकृत व्यक्ति उपेक्षा का दोषी था और वह सम्यक् रूप से अनुज्ञप्ति प्राप्त चालक या ऐसे व्यक्ति द्वारा जो सुसंगत समय पर यान के चालन के लिए अयोग्य नहीं था, यानों के प्रयोग के संबंध में पालिसी की शर्तों को पूरा करने के मामले में युक्तियुक्त सावधानी बरतने में विफल रहा ।

(iv) तथापि, बीमा कंपनियों को अपने दायित्व को टालने के लिए न केवल उक्त कार्यवाहियों में उपलब्ध प्रतिरक्षा(ओं) को सिद्ध करना चाहिए अपितु यान के स्वामी की ओर से 'भंग' को भी सिद्ध करना चाहिए ; जिसके सबूत का भार उन पर होगा ।

(v) न्यायालय इस प्रकार का कोई मानदंड अधिकथित

नहीं कर सकता है कि उक्त भार का किस प्रकार निर्वहन किया जाएगा क्योंकि यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा ।

(vi) यहां तक कि जहां बीमाकर्ता चालक द्वारा विधिमान्य अनुज्ञप्ति धारण करने या सुसंगत अवधि के दौरान यान चालन की अपनी अर्हता से संबंधित पालिसी की शर्त से संबंधित बीमाकृत व्यक्ति के भंग को साबित कर देता है तो उसे (बीमाकर्ता को) उस समय तक बीमाकृत व्यक्ति के प्रति अपने दायित्व को टालने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक कि चालन अनुज्ञप्ति की शर्तों के उक्त भंग इतने मौलिक न हों कि वे दुर्घटना से संबंधित पाए जाएं । पालिसी की शर्तों का निर्वचन करते समय अधिकरण अधिनियम की धारा 149(3) के अधीन बीमाकृत व्यक्ति को उपलब्ध प्रतिरक्षाओं को अनुज्ञात करने से संबंधित मूल भंग की संकल्पना और मुख्य प्रयोजन के नियम को लागू करेगा ।

(vii) यह प्रश्न कि क्या स्वामी ने यह पता लगाने के लिए युक्तियुक्त सावधानी बरती है कि क्या चालक द्वारा प्रस्तुत चालन अनुज्ञप्ति (जाली अनुज्ञप्ति या अन्यथा) विधि की अपेक्षा को पूरा करती है या नहीं, प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर अवधारित किया जाएगा ।

(viii) यदि दुर्घटना के समय यान ऐसे व्यक्ति द्वारा चलाया जा रहा था जिसके पास शिक्षार्थी अनुज्ञप्ति थी तो बीमा कंपनियां डिक्री की तुष्टि करने की दायी होंगी ।

(ix) धारा 168 के साथ पठित धारा 165 के अधीन गठित दावा अधिकरण मोटर यान के प्रयोग के कारण होने वाली दुर्घटनाओं, जिनमें पर-व्यक्ति की मृत्यु या शारीरिक क्षति या उसकी संपत्ति को नुकसान अंतर्वलित होता है, के संबंध में सभी दावों का न्यायनिर्णयन करने के लिए सक्षम है । अधिकरण की उक्त शक्ति एक ओर दावाकर्ता या दावाकर्ताओं और दूसरी ओर बीमाकृत व्यक्ति बीमाकर्ता और चालक के मध्य के आंतरिक दावों का विनिश्चय करने तक निर्बंधित नहीं है । प्रतिकर के दावे का न्यायनिर्णयन और बीमाकर्ता को उपलब्ध प्रतिरक्षा या प्रतिरक्षाओं की उपलब्धता का विनिश्चय करने के दौरान अधिकरण को बीमाकर्ता और बीमाकृत व्यक्ति के मध्य के परस्पर विवादों का विनिश्चय

करने के लिए आवश्यक रूप से शक्ति और अधिकारिता प्राप्त है । दावाकर्ता द्वारा प्रतिकर के दावे के न्यायनिर्णयन और इस पर किए गए अधिनिर्णय के दौरान बीमाकर्ता और बीमाकृत व्यक्ति के मध्य के परस्पर दावों और विवादों पर दिया गया विनिश्चय दावाकर्ताओं के पक्ष में अधिनिर्णय के प्रवर्तन और निष्पादन के लिए अधिनियम की धारा 174 में यथाउपबंधित रीति में प्रवर्तनीय और निष्पादनीय है ।

(x) जहां अधिनियम के अधीन दावे का न्यायनिर्णयन करने पर अधिकरण का यह निष्कर्ष हो कि बीमाकर्ता ने उपधारा (7) के साथ पठित धारा 149(2) के उपबंधों के अनुसार अपनी प्रतिरक्षा को संतोषप्रद रूप से साबित कर दिया है, जैसाकि इस न्यायालय द्वारा ऊपर निर्वचन किया गया है, वहां अधिकरण यह निदेश दे सकता है कि बीमाकर्ता प्रतिकर के और उन रकमों के संबंध में जिनका संदाय करने के लिए उस अधिकरण के अधिनिर्णय के अधीन पर-व्यक्ति को संदाय करने के लिए बाध्य किया गया है बीमाकृत व्यक्ति को प्रतिपूर्ति करे । अधिकरण द्वारा दावे का इस प्रकार अवधारण प्रवर्तनीय होगा और बीमाकृत व्यक्ति से बीमाकर्ता को देय ठहराई गई रकम राजस्व के रूप में अधिनियम की धारा 174 के अधीन दी गई रीति में अधिकरण द्वारा कलक्टर को जारी प्रमाणपत्र पर वसूल की जाएगी । प्रमाणपत्र भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूली के लिए केवल तभी जारी किया जाएगा जैसाकि अधिनियम की धारा 168 की उपधारा (3) द्वारा यथाअपेक्षित है, जब बीमाकृत व्यक्ति अधिकरण द्वारा अधिनिर्णय की घोषणा की तारीख से बीस दिनों के भीतर बीमाकर्ता के पक्ष में अधिनिर्णीत रकम जमा करने में असफल रहता है ।

(xi) उपधारा (4) के परंतुक के साथ इसके उपबंधों और उपधारा (5) जिनमें बीमाकृत व्यक्ति की ओर से बीमा की संविदा के अधीन संदत्त रकम वसूल करने के लिए बीमाकर्ता को समर्थ बनाने के लिए इसमें उल्लिखित विनिर्दिष्ट आकस्मिकता आशयित है का आश्रय अधिकरण द्वारा लिया जा सकता है और इन्हें ऐसे मामलों में जहां दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में दुर्घटना के शिकार व्यक्तियों के पारस्परिक दावों

के न्यायनिर्णयन में विलंब होगा, बीमाकृत व्यक्ति के विरुद्ध बीमाकर्ता की प्रतिरक्षाओं और दावों को नियमित न्यायालय में उपचार माना जा सकता है ।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

27. प्रतिपादना संख्या (vi) और (x) से जिनको ऊपर उद्धृत किया गया है, इस निष्कर्ष को समर्थन मिलता है कि वर्तमान मामले में आक्षेपित अधिनिर्णय में अधिकरण द्वारा दिया गया निदेश विधि अनुसार है ।

28. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **लक्ष्मी नारायण दत्त**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[2] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय पर विचार करते हुए इस प्रकार मत व्यक्त किया :–

"35. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि पर-व्यक्ति के अधिकार और निजी नुकसान के मामलों के बीच वैचारिक संकल्पनात्मक मतभेदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए । आरंभिक रूप से, यह साबित करने का भार बीमाकर्ता पर होता है कि विज्ञप्ति जाली थी । यदि एक बार यह साबित हो जाता है तो नैसर्गिक परिणाम उत्पन्न होंगे ।"

उपरोक्त विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित स्थितियां उत्पन्न होती हैं :–

"(1) **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले में दिया गया विनिश्चय पर-व्यक्ति जोखिम वाले मामलों के अतिरिक्त अन्य मामलों में लागू नहीं होता ।

(2) जहां अनुज्ञप्ति मूल रूप से जाली थी वहां नवीकरण अन्तर्निहित दोष को दूर नहीं कर सकता है ।

(3) पर-व्यक्ति जोखिम के मामले में बीमाकर्ता को रकम की क्षतिपूर्ति करनी होती है और जहां ऐसा हो, वहां बीमाकृत से उसे वसूल भी किया जा सकता है ।

---

[1] (2007) 3 एस. सी. सी. 700 = 2007 (2) टी. ए. सी. 398 (एस. सी.).

[2] [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531 = (2004) 3 एस. सी. सी. 297 = 2004 (1) टी. ए. सी. 321.

(4) सप्रयोजन निर्वचन की संकल्पना अधिनियम की धारा 149 से संबंधित मामलों को लागू नहीं होती ।

उच्च न्यायालय/आयोग, विधि की स्थिति के प्रकाश में जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, मामले पर नए सिरे से विचार करेगा ।

अपीलें खर्चों के बारे में कोई आदेश पारित किए बिना उपर्युक्त रूप में स्वीकार की जाती हैं ।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

29. उपर्युक्त विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में दिया गया विनिश्चय तृतीय पक्षकार के जोखिम के मामले में लागू होता है और बीमाकर्ता को तृतीय पक्षकार को रकम की क्षतिपूर्ति करनी होती है और इसके पश्चात् बीमाकृत से इस रकम को वसूल किया जा सकता है ।

30. **प्रेम कुमारी और अन्य** बनाम **प्रह्लाद देव और अन्य**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **लक्ष्मी नारायण दत्त**[3] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को स्पष्ट करते हुए **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को स्पष्ट किया है और इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"8. **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले में अधिकथित सिद्धांतों के प्रभाव और विवक्षा (तात्पर्य) और नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लि. **बनाम** लक्ष्मी नारायण दत्त (पूर्वोक्त) वाले मामले में हममें से एक (न्यायमूर्ति डाक्टर अरिजीत पसायत) ने विचार करते हुए स्पष्ट किया है । पैरा 38 में निकाला गया निम्नलिखित निष्कर्ष सुसंगत है –

38. उपरोक्त विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए निम्नलिखित स्थितियां उत्पन्न होती हैं –

(1) **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का तृतीय पक्ष जोखिम वाले मामलों को छोड़कर

---

[1] [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531 = (2004) 3 एस. सी. सी. 297 = 2004 (1) टी. ए. सी. 321.

[2] 2008 (1) टी. ए. सी 803 (एस. सी.).

[3] (2007) 3 एस. सी. सी. 700 = 2007 (2) टी. ए. सी. 398 (एस. सी.).

अन्य किसी मामले में कोई उपयोग नहीं है ।

(2) जहां अनुज्ञप्ति मूल रूप से जाली है, वहां नवीकरण अन्तर्निहित दोष दूर नहीं हो सकता ।

(3) तृतीय पक्ष जोखिम वाले मामलों में बीमाकर्ता को रकम की क्षतिपूर्ति करनी होती है और यदि ऐसा उपदर्शित किया है तो वह बीमाकृत से उसकी वसूली कर सकता है ।

(4) सप्रयोजन निर्वचन की संकल्पना का अधिनियम की धारा 149 से संबंधित मामलों में कोई उपयोग नहीं होता ।

9. ओरियंटल इंश्योरेंश कंपनी लि. **बनाम** मीना वारीयान और अन्य [(2007) 5 एस. सी. सी. 428 = 2007 (2) टी. ए. सी. 417] वाले मामले में दिया गया पश्चात्वर्ती विनिश्चय, जो दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा दिया गया विनिश्चय है, **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले में अधिकथित सिद्धांतों पर विचार करते हुए निष्कर्ष निकाला गया कि किसी ऐसे मामले में जहां कोई व्यक्ति अधिनियम अर्थान्तर्गत तृतीय पक्ष नहीं है, बीमा कंपनी को केवल **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले का अवलंब लेकर अपने आप दायी नहीं बनाया जा सकता । ऐसा निष्कर्ष निकालते हुए न्यायालय ने **लक्ष्मी नारायण दत्त** (पूर्वोक्त) वाले मामले के पैरा 38 में उल्लिखित विश्लेषण को उद्धृत किया और उसके साथ सहमति व्यक्त की । हम संगतता को दृष्टि में रखते हुए **स्वर्ण सिंह** (पूर्वोक्त) वाले मामले के निर्वचन और प्रयोजनीयता को ध्यान में रखते हुए **लक्ष्मी नारायण दत्त** (पूर्वोक्त) वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धांत को दोहराते हैं ।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

31. उपरोक्त विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए, यह सुस्पष्ट होता है कि प्रथमतः अधिकरण द्वारा दिए गए निदेश जिसके द्वारा अपीलार्थी-बीमा कंपनी से आक्षेपित निर्णय के अधीन अधिनिर्णीत रकम जमा करने और उसके पश्चात् प्रश्नगत यान के स्वामी से उसे वसूल करने की अपेक्षा की गई है जो सही और विधिमान्य है ।

32. जहां तक श्री अमित मनोहर द्वारा दी गई इस दलील का संबंध है कि अपीलर्थी-बीमा कंपनी का हित प्रश्नगत यान के स्वामी (जो प्रत्यर्थी सं. 3 है) के विरुद्ध संरक्षित होना चाहिए जिससे कि यदि अपीलार्थी-बीमा कंपनी

प्रतिकर की रकम नकद रूप में जमा करे तो वह उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी से उसे वसूल करने के लिए समर्थ हो सके, इस संबंध में श्री अमित मनोहर द्वारा अवलंब लिए गए विनिश्चयों का निर्देश करना प्रासंगिक है ।

33. **ओरियंटल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **श्री नन्जप्पन और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "7. अतः हम उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हुए **बलजीत कौर** 2004 (1) टी. ए. सी. 366 (एस. सी.) वाले मामले में अभिव्यक्त मत के निबंधनों में यह निदेश करते हैं कि बीमाकर्ता अधिकरण द्वारा नियत किए गए उस प्रतिकर के परिमाण का आज से तीन मास के भीतर संदाय करेगा जिसके संबंध में प्रत्यर्थियों-दावाकर्ताओं ने कोई विवाद नहीं किया है । बीमाकर्ता से उसे वसूल करने के प्रयोजन के लिए बीमाकर्ता को वाद फाइल करने की आवश्यकता नहीं होगी । वह निष्पादन न्यायालय के समक्ष इस प्रकार कार्यवाही आरंभ कर सकता है मानो अधिकरण के समक्ष निर्धारण की विषयवस्तु से संबंधित विवाद बीमाकर्ता और स्वामी के बीच था और विवाद्यक स्वामी के विरुद्ध और बीमाकर्ता के पक्ष में विनिश्चित किया गया है । बीमाकृत को रकम के जारी करने से पहले यान के स्वामी को नोटिस जारी किया जाएगा और उस संपूर्ण रकम के लिए प्रतिभूति दाखिल करने की अपेक्षा की जाएगी जिसका बीमाकर्ता दावाकर्ताओं को संदाय करेंगे । दुर्घटना से संबंधित यान प्रतिभूति के भाग के रूप में कुर्क किया जाएगा । यदि निष्पादन न्यायालय आवश्यक समझे तो वह संबंधित क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण की सहायता ले सकता है । निष्पादन न्यायालय उस रीति के बारे में विधि के अनुसार समुचित आदेश पारित करेगा जिसमें बीमाकृत यान का स्वामी बीमाकर्ता को संदाय करेगा । यदि इस मामले में कोई चूक होती है तो निष्पादन न्यायालय के लिए यह विकल्प खुला होगा कि वह प्रतिभूतियां के निपटान द्वारा या बीमाकृत यान के स्वामी की किसी अन्य संपत्ति या संपत्तियों से वसूलने का निदेश करे । अपील का उपर्युक्त निबंधनों में निपटान किया जाता है और खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।"
>
> (रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

---

[1] 2004 (2) टी. ए. सी. 12 (एस. सी.).

34. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लि.** बनाम **छल्ला भरथम्मा**[1] वाले मामले में इस प्रकार अधिकथित किया गया है :–

> "प्रश्न यह रहता है कि समुचित निदेश क्या होगा । अधिनियम के फायदा संबंधी उद्देश्य पर विचार करते हुए बीमाकर्ता के लिए यह उचित होगा कि वह अधिनिर्णय का समाधान करे भले ही विधि में उसका कोई उत्तरदायित्व न हो । कुछ मामलों में बीमाकर्ता को बीमाकृत से रकम वसूल करने के लिए विकल्प और स्वतंत्रता दी गई है । स्वामी से संदेय रकम वसूल करने के प्रयोजन के लिए बीमाकर्ता से वाद फाइल करने की अपेक्षा नहीं की गई है । वह संबंधित निष्पादन न्यायालय के समक्ष इस प्रकार कार्यवाही आरंभ कर सकता है मानो अधिकरण के समक्ष निर्धारण करने के लिए संबंधित विवाद्यक की विषयवस्तु विवाद्यक बीमाकर्ता और स्वामी के बीच हो और विवाद्यक स्वामी के विरुद्ध और बीमाकर्ता के पक्ष में विनिश्चित किया गया हो । दावाकर्ताओं के लिए रकम को निर्मुक्त करने से पूर्व दुर्घटना से संबंधित यान का स्वामी उस संपूर्ण रकम के लिए प्रतिभूति देगा जो बीमाकर्ता दावेदारों को देगा । दुर्घटना से संबंधित यान प्रतिभूति के भाग के रूप में कुर्क किया जाएगा । यदि आवश्यकता हुई तो निष्पादन न्यायालय संबंधित क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण की सहायता लेगा । निष्पादन न्यायालय विधि के अनुसार उस रीति के बारे में समुचित आदेश पारित करेगा जिसमें यान का स्वामी बीमाकर्ता को संदाय करेगा । यदि इस संबंध में कोई चूक होती है तो निष्पादन न्यायालय यान के स्वामी अर्थात् बीमाकृत की प्रतिभूतियों के निपटान द्वारा या किसी अन्य संपत्ति या संपत्तियों से वसूली करने के लिए निदेश देगा । वर्तमान मामले में हम अन्तर्वलित रकम की मात्रा पर विचार करते हुए इस विनिश्चय को बीमाकर्ता के विवेक पर छोड़ते हैं कि बीमाकृत से रकम वसूल करने के लिए क्या कदम उठाया जाए ।"
>
> (रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

35. हमारी राय में, अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा उपरोक्त विनिश्चयों में अनुध्यात निदेशों की निष्पादन न्यायालय के समक्ष उस समय ईप्सा की जा सकती है जब अपीलार्थी-बीमा कंपनी आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन अधिनिर्णीत रकम को जमा करने के पश्चात् बीमाकृत व्यक्ति अर्थात्

---

[1] 2005 (1) टी. ए. सी. 4 (एस. सी.).

प्रश्नगत यान के स्वामी (इसमें के प्रत्यर्थी सं. 5) से उक्त रकम वसूल करने के लिए निष्पादन न्यायालय के समक्ष समुचित आवेदन करे और जब दावाकर्ता अधिनिर्णय के निष्पादन के लिए या अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा जमा की गई रकम को निर्मुक्त करने के लिए आवेदन फाइल करे । हम इस संबंध में कोई राय व्यक्त नहीं कर रहे हैं ।

36. तथापि, हम इस न्यायालय के उन दोनों विनिश्चयों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जिनमें उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त विनिश्चयों पर विचार किया गया है ।

37. **श्रीमती भूरी और अन्य** बनाम **श्रीमती शोभा रानी और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के एक विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

> "5. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यथानिर्दिष्ट उपरोक्त निर्णयज विधि से यह स्पष्ट होता है कि इस तथ्य के बावजूद कि बीमाकर्ता को मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 149 के अधीन पालिसी के अन्तर्गत दावाकर्ताओं को प्रतिकर के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया गया है फिर भी इस संदर्भ में उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा विकसित विधि के अधीन संदाय करने का दायित्व बीमा कंपनी को ठहराया गया है । इसके साथ-साथ बीमा कंपनी को भी मोटर यान अधिनियम, 1988 के उपबंधों के भीतर बीमाकृत व्यक्ति से उक्त रकम वसूल करने के लिए और इस प्रयोजन के लिए कोई वाद फाइल करने का भार डाले बिना स्वतंत्रता दी गई है । आरंभतः विधि का यह सिद्धांत **बलजीत कौर** (पूर्वोक्त) वाले मामले में घोषित किया गया था और इसका संबंधित पक्षकारों द्वारा ऊपर निर्दिष्ट मामले में अनुसरण किया गया है । किन्तु पश्चात्वर्ती मामलों में विशेषतया **नन्जप्पन** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया है कि बीमाकृत/यान का स्वामी न्यायालय के समक्ष जमा रकम को निर्मुक्त करने से पहले एक सूचना जारी करेगा और उससे उस संपूर्ण रकम के लिए प्रतिभूति देने की अपेक्षा की जाएगी जो बीमा कंपनी दावाकर्ताओं को संदाय करेगी । नोटिस के पश्चात् न्यायालय प्रतिभूति के भाग के रूप में दुर्घटना करने वाले यान की कुर्की करने का निदेश कर सकता है और विधि के अनुसार समुचित आदेश पारित कर

---

[1] 2007 (1) टी. ए. सी. 20 (इलाहाबाद).

सकता है । चूक होने की दशा में न्यायालय के लिए यह विकल्प होगा कि वह प्रतिभूति के निपटान द्वारा बीमाकृत/स्वामी से या यान के स्वामी की किसी अन्य सम्पत्ति या सम्पत्तियों से रकम को सीधे वसूल करने का निदेश कर सकेगा । तथापि, ये सभी तरीके उच्चतम न्यायालय द्वारा बीमाकर्ता द्वारा बीमाकृत से वसूली के लिए उपबंधित किए गए हैं । तथापि, उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए इन सभी निदेशों से तात्पर्य यह है कि न्यायालय उन दावाकर्ताओं के हित को कम नहीं मानेगा जिनके कल्याण के लिए उच्चतम न्यायालय ने मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 149 के साथ बीमाकर्ता के दायित्व के अन्यथा निर्वचन द्वारा इन सभी मामलों के माध्यम से इस विधि का विकास किया है । इस प्रकार, वर्तमान मामले में निष्कर्ष यह है कि पुनरीक्षणकर्ता-दावेदार को तब भी नुकसान न हो जब बीमाकृत/यान का स्वामी प्रतिभूति नहीं देता है या वह न्यायालय के समक्ष उसको जारी किए नोटिस के अनुसरण में हाजिर नहीं होता है । अधिनियम के उपबंधों के भीतर रकम वसूल करने का भार उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णय में स्वयं बीमाकर्ता पर डाला गया है । दावाकर्ताओं को जिन्होंने अपने पक्ष में अधिनिर्णय प्राप्त किया है, इन मामलों में उच्चतम न्यायालय ने अपने संप्रेक्षण के माध्यम से हानि नहीं होने दी है । इस प्रकार, मामले को उपरोक्त दृष्टि से देखते हुए मेरा यह मत है कि यदि निचला न्यायालय प्रथमतः बीमाकृत/यान के स्वामी को नोटिस जारी करने का निदेश देता है और यदि उसके पश्चात् न्यायालय के समक्ष जमा राशि दावाकर्ताओं के पक्ष में निर्मुक्त की जाती है तो यह न्यायोचित और ठीक होगा ।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

38. **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लिमिटेड** बनाम **श्रीमती खुर्शीदा बानो और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने इस प्रकार अधिकथित किया है :–

"4. विद्वान् काउंसेल ने यह सिद्ध करने के लिए नेशनल इंश्योरेंश कंपनी **बनाम** छल्ला भरथम्मा और अन्य (2004) 8 एस. सी. सी. 517 = 2005 (1) टी. ए. सी. 2 (एस. सी.) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का उल्लेख किया है कि

[1] 2009 (1) ए. डब्ल्यू. सी. 355.

बीमा कंपनी के दावे को स्वामी द्वारा प्रत्याभूत किया जाना चाहिए । हमारे समक्ष इस प्रतिपादना के संबंध में कोई विवाद नहीं है । हम यह कहना चाहते हैं कि जब तक वसूली के प्रयोजन के लिए बीमा कंपनी द्वारा उसी कार्यवाही में कोई समुचित आवेदन नहीं दिया जाता है तब तक स्वामी द्वारा प्रतिभूति प्रदान करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । ऐसी प्रास्थिति अब परिपक्व हो चुकी है । इस प्रक्रम पर हम केवल दावाकर्ताओं के लिए प्रतिकर का संदाय करने से संबंधित मुद्दे पर विचार कर रहे हैं जिनसे इनकार नहीं किया जा सकता है और जिसका स्वामी तथा बीमा कंपनी के बीच दायित्व के संबंध में विवाद से कोई संबंध नहीं है । पीड़ित एक पर-व्यक्ति है । इसके अलावा, ऐसे निर्णय में, उच्चतम न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अधिनियम के फायदाग्राही उद्देश्य पर विचार करते हुए स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है, 'बीमाकर्ता के लिए यह उचित होगा, कि वह अधिनिर्णय का समाधान करे भले ही विधि में उसका कोई दायित्व न हो' प्रभावतः यह अधिनिर्णय के समाधान के लिए एक कामचलाऊ (अन्तरकालीन) प्रबंध है जैसे ही इसे पारित किया जाता है । नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लि. **बनाम** स्वर्ण सिंह और अन्य [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531 = (2004) 3 एस. सी. सी. 297 = 2004 (1) टी. ए. सी. 321 वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने अपने निर्णय के पैरा 110 में इस प्रकार मत व्यक्त किया कि अधिकरण यह निदेश कर सकता है कि बीमाकर्ता प्रतिकर और अन्य रकमों के लिए बीमाकृत को प्रतिपूर्ति करने के लिए दायी है जिसके द्वारा उसे अधिकरण के अधिनिर्णय के अधीन पर-व्यक्ति को संदाय करने के लिए बाध्य किया गया है । अतः विधान-मंडल का आशय और उच्चतम न्यायालय तथा विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा किए गए निर्वचन के आधार पर यह बात सुस्थापित है कि दावाकर्ताओं के लिए प्रतिकर के संदाय से किसी भी परिस्थिति में इनकार नहीं किया जाएगा । हम दोहराते हुए यह भी कह सकते हैं कि इसका स्वामी या बीमाकर्ता के दायित्व के संबंध में विवाद से कोई संबंध नहीं है जिस पर उसी मामले में पृथक् आवेदन में या बीमा कंपनी द्वारा प्रस्तुत निष्पादन आवेदन में विचार किया जा सकता है ।'

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है)

39. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि अधिकरण ने बीमा कंपनी-अपीलार्थी को प्रतिकर की रकम जमा करने और बीमाकृत व्यक्ति अर्थात् प्रश्नगत यान के स्वामी प्रत्यर्थी सं. 5 से उसे वसूल करने का निदेश देने में कोई अवैधता कारित नहीं की है ।

40. आक्षेपित अधिनिर्णय के अधीन रकम जमा करने के पश्चात् अपीलार्थी-बीमा कंपनी के लिए यह विकल्प खुला है कि वह उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) से उसे वसूल करने के लिए समुचित कार्यवाहियां आरंभ करें और ऐसी कार्यवाहियों में समुचित निदेश प्राप्त करे ।

41. यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि दावेदार-प्रत्यर्थी सं. 1, 2 और 3 या उपरोक्त प्रश्नगत यान के स्वामी (प्रत्यर्थी सं. 5) द्वारा कोई अपील फाइल की जाती है तो बीमा कंपनी-अपीलार्थी के लिए यह विकल्प खुला रहेगा कि वह विधिक आधारों पर उसका विरोध करे ।

42. अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा वर्तमान अपील फाइल करते समय जमा की गई 25,000/- रुपए की रकम आक्षेपित निर्णय में दिए गए निदेशों के अनुसार अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा जमा की जाने वाली रकम में समायोजित करने के लिए अधिकरण को लौटाई जाएगी ।

43. उपर्युक्त मताभिव्यक्तियों के आधार पर अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा फाइल की गई अपील खारिज की जाती है ।

44. तथापि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में खर्चे के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

मही./क.

राजेन्द्र प्रसाद सिंह

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 5 फरवरी, 2014

न्यायमूर्ति मनोज कुमार गुप्ता

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226, 311(1)(2)(3) [सपठित उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 का नियम 8 और 16] – रिट – पुलिस अधिकारी की पदच्युति – समुचित जांच नहीं किया जाना – नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन नहीं किया जाना – यदि किसी सरकारी कर्मचारी को समुचित जांच किए बिना और उसे सुनवाई का अवसर दिए बिना उसके पद से पदच्युत किया जाता है तो ऐसा पदच्युति आदेश न केवल नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों की अवहेलना करता है अपितु संविधान, 1950 का भी अतिक्रमण करता है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 का नियम 16] – पदच्युति आदेश रद्द होना – पद बहाली होना – पिछली मजदूरियों की मांग करना – यदि कोई सरकारी कर्मचारी पदच्युति आदेश रद्द होने के कारण पुनः पद पर बहाल हो जाता, तो वह अधिकारस्वरूप पिछली मजदूरियों को पाने का हकदार नहीं हो जाता – यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है क्योंकि ऐसे मामले में "काम नहीं वेतन नहीं" का मौलिक सिद्धान्त लागू होता है ।

वर्तमान मामले में, वर्तमान रिट याचिका में, विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या अनुशासनिक जांच की अभिमुक्ति देने के पश्चात् याची को सेवा से पदच्युत करने की प्रत्यर्थियों की कार्रवाई न्यायोचित है या नहीं । याची सिविल पुलिस में उप-निरीक्षक के रूप में कार्य कर रहा था और उसकी सेवाएं, उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 द्वारा विनियमित थीं । नियम 8, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(1)(2) के सदृश्य है । यह अभिकथित है कि तारीख 22 जून, 2006 को जब याची उप-निरीक्षक के रूप में पुलिस थाना चिल्ह, जिला

मिर्जापुर में तैनात था तब वह बिना किसी पूर्व सूचना या अनुज्ञा के ड्यूटी से अनुपस्थित रहा था और वह इलाहाबाद आया और शराब के नशे में था तभी उसने जोहन्सटोनगंज क्रासिंग, इलाहाबाद में उपद्रव मचाया था । यह अभिकथित है कि उसने पुलिस वर्दी में अपनी पैंट और बेल्ट खोल दिया तथा शर्ट और अन्डरवियर पहनकर अनुचित व्यवहार किया । पूर्वोक्त घटना की रिपोर्ट समाचारपत्र अमर उजाला, इलाहाबाद, दैनिक जागरण और टाइम्स आफ इंडिया में प्रकाशित हुआ और विभिन्न टेलीविजन चैनलों पर भी प्रसारित हुआ । इस घटना से पुलिस विभाग की साख को क्षति पहुंची । यह प्रतीत होता है कि उक्त घटना के बारे में एक रिपोर्ट पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर द्वारा उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज, मिर्जापुर को अग्रेषित की गई थी । उस पर कार्रवाई करते हुए, उन्होंने तारीख 23 जून, 2006 के आदेश द्वारा याची को सेवा से पदच्युत कर दिया था । उक्त आदेश, नियम 1991 के नियम 8(2)(ख) के अधीन तात्पर्यित शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किया गया था । आदेश में जांच की अभिमुक्ति के लिए कारण यह दिया गया था कि याची अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहा है और जांच कार्यवाहियों में उससे सहयोग की संभावना नहीं थी । यह भी कथित है कि घटना की व्यापक रिपोर्ट विभिन्न समाचारपत्रों और इलैक्ट्रोनिक मीडिया में हुई थी और इसलिए जांच कराना समीचीन या व्यवहार्य नहीं होता । उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, याची ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की है । न्यायालय द्वारा रिट याचिका भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह सुस्थिर मत है कि जांच कराना एक नियम है और इसकी अभिमुक्ति एक अपवाद है । परीक्षण यह है कि अविभावी परिस्थिति में एक युक्तियुक्त व्यक्ति क्या युक्तियुक्त मत लेता है, इस पर निर्भर करता है । आगे, विभागीय जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय संबंधित प्राधिकारी के स्वतः कथन पर आधारित नहीं होता है अपितु इसे सुसंगत तथ्यों के उद्देश्यपरक निर्धारण पर आधारित होना चाहिए । यदि वस्तुनिष्ठ समाधान को न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जाती है तो इसे उपर्युक्त अधिकथित परीक्षण से गुजरना होता है और जिसके लिए अनुशासनिक प्राधिकारी पर यह भार होता है कि वह अनुशासनिक जांच की अभिमुक्ति की कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने के लिए न्यायालय के समक्ष सुसंगत तथ्यों और सामग्रियों को प्रस्तुत करे । वर्तमान मामले के तथ्यों में, इन सिद्धांतों को लागू करते हुए इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय सुसंगत विचारों पर आधारित नहीं है और विधि में

कायम नहीं रखे जा सकते हैं । आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय प्राथमिक तौर पर दो आधारों पर आधारित है – (1) यह कि अपचारी निरन्तर अनुपस्थित रहा है और जांच में उसका सहयोग करना संभाव्य नहीं था और (2) अपचारी के कृत्यों का विभिन्न समाचारपत्रों और मीडिया में व्यापक तौर पर रिपोर्ट हुआ था और इसलिए, जांच कराना असमीचीन और असाध्य होता । प्रथम आधार, जैसा कि उपर्युक्त कथित है, यह है कि याची निरन्तर अनुपस्थित रहा है और अनुशासनिक कार्यवाहियों में उससे सहयोग करने की संभाव्यता नहीं थी । स्वीकृततः, घटना तारीख 22 जून, 2006 की है और यह प्रतीत होता है कि उसके अगले ही दिन अर्थात् तारीख 6 जून, 2006 को पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर ने उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज, मिर्जापुर को रिपोर्ट अग्रेषित कर दी थी, जिसमें उन्होंने यह सुझाव दिया था कि याची के विरुद्ध नियम 8(2)(ख) का अवलंब लेते हुए, कार्रवाई की जानी चाहिए । उस पर कार्रवाई करते हुए, उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज ने उसी दिन अर्थात् तारीख 23 जून, 2006 को याची को सेवा से पदच्युत करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया, यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि जांच करना साध्य नहीं होगा । यह विवादित नहीं है कि याची, तारीख 21 जून, 2006 तक अपनी ड्यूटी में उपस्थित रहा और अप्राधिकृत अनुपस्थिति मात्र 22 जून, 2006 के लिए थी, जिस दिन के लिए यह कथन किया गया है कि वह उच्चतर प्राधिकारियों की पूर्व सूचना या अनुज्ञा के बिना इलाहाबाद आया था । पदच्युति आदेश अगले ही दिन पारित किया गया था । इस प्रकार, वह एक या कम-से-कम दो दिन अनुपस्थित रहा था जब पदच्युति आदेश पारित किया गया था, यद्यपि, याची का पक्षकथन यह है कि तारीख 23 जून, 2006 को उसने ड्यूटी के लिए रिपोर्ट की थी किन्तु, उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं । पूर्वोक्त तथ्यों से कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति यह युक्तियुक्त मत अपनाते हुए यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता है कि अपचारी निरन्तर अपनी ड्यूटी से अनुपस्थित रहा जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि जांच में उसके सहयोग करने की संभावना नहीं थी । वर्तमान मामले में, यद्यपि प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र में यह पक्षकथन नहीं किया गया है याची तारीख 22 जून, 2006 के पूर्व अनुपस्थित था । वे इस निष्कर्ष को न्यायोचित ठहराने के लिए इस न्यायालय के समक्ष कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सके कि याची द्वारा लम्बे समय से ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के कारण जांच में सहयोग करने की

सम्भाव्यता नहीं थी । प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए मत की सत्यता की जांच दूसरे तरीके से की जा सकती है । नियम 16 के अधीन, प्राधिकारी, अपचारी द्वारा अपने तैनाती के स्थान से स्वयं को अनुपस्थित रखने या कार्यवाहियों से जो जारी हैं, से बचने के लिए अनुपस्थित रखने पर अपचारी के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए सशक्त है । नियम 16 यह उपबंध करता है कि यदि अपचारी, तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से स्वयं को अनुपस्थित रखता है तो प्राधिकारी, उसकी अनुपस्थिति में कार्यवाहियां करने के लिए सशक्त है । नियम 16 से संलग्न स्पष्टीकरण उन अत्यावश्यकताओं को अनुध्यात करता है जिनमें यह उपधारणा की जा सकती है कि अपचारी अपनी तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से जानबूझकर स्वयं को अनुपस्थित रखता है । यह उपबंधित है कि जहां पुलिस अधिकारी से वैयक्तिक तौर पर सम्पर्क किया जाता है या उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है, उसे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा आरोप या नोटिस भेजा जाता है और जिस स्थान पर वह वर्तमान में ठहरा हुआ है या उसके वर्तमान में ठहरे हुए स्थान पर विशेष संदेश वाहक द्वारा उसे भेजा जाता है और उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है तो यह उपधारणा की जाएगी कि संबंधित पुलिस अधिकारी से सम्पर्क करने के लिए युक्तियुक्त कदम उठाए गए हैं । इस प्रकार, यह नियम प्राधिकारियों को अपचारी की अनुपस्थिति में अनुशासनिक कार्यवाहियां करने के लिए सशक्त करता है और उन मार्गदर्शकों और परिस्थितियों को भी अधिकथित करता है जिनमें, उसकी तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से उसकी जानबूझकर अनुपस्थित रहने के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके । यह भी उपदर्शित है कि जब कभी अपचारी अनुशासनिक कार्यवाहियों से जानबूझकर अनुपस्थित रहता है तो प्राधिकारी, अनुशासनिक कार्यवाहियों से अभिमुक्ति देने का अधिकार नहीं हो जाता है अपितु, उसे उसकी अनुपस्थिति में कार्यवाही करने और निष्कर्ष निकालने होते हैं । अब, यदि यह भी उपधारणा की जाती है कि अपचारी लम्बी अवधि से अनुपस्थित रहा है और जांच में उसके सहयोग करने की संभावना नहीं है तो ही प्राधिकारी, अनुशासनिक कार्यवाहियों में अपचारी के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही करने के लिए सशक्त है किन्तु, यह अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति के लिए आधार नहीं हो सकता है । अन्य आधार यह है कि अपचारी के अभिकथित पथभ्रष्ट आचरण की रिपोर्ट प्रेस और मीडिया में की गई हैं और इसलिए, इस मामले में अनुशासनिक कार्यवाही करना असमीचीन और असाध्य

होता । यह इस कारण के लिए आधार नहीं हो सकता है कि किस प्रकार प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा घटना की रिपोर्ट की गई हैं, यह अनुशासनिक कार्यवाही नहीं करने का आधार नहीं हो सकता है । प्रेस और इलैक्ट्रानिक्स मीडिया की रिपोर्ट को साक्ष्य के नियम के अध्यधीन अपचारी के विरुद्ध साक्ष्य के भाग के रूप में प्रयोग किया जा सकता है किन्तु इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है कि यह अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति देने का आधार हो सकता है । प्रति-शपथपत्र के साथ प्रत्यर्थियों ने पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर की तारीख 23 जून, 2006 की रिपोर्ट को अभिलेख पर रखा है । इसमें मात्र अपचारी का पूर्ववृत्त और घटना वर्णित है और यह सुझाव दिया गया है कि उसका पुलिस बल में बना रहना अपेक्षित नहीं है । इसमें नियम 8(2)(ख) के अधीन कार्यवाही के लिए भी सिफारिश की गई है । यह पूर्णतया ऐसा कोई कारण नहीं देता है कि क्यों नियम 8(2)(ख) के अधीन शक्ति का अवलंब लिया जाना चाहिए और क्यों अनुशासनिक जांच करना असाध्य है । ऐसी रिपोर्ट के आधार पर यह राय निकालना असंभाव्य है कि जांच कार्यवाहियों की अभिमुक्ति दी जानी चाहिए । वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी, मामले के तथ्यों का वर्णन किए बिना प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा घटना की रिपोर्ट पर कार्यवाही करते प्रतीत होते हैं और इस बात पर नहीं कि क्या जांच करना साध्य होता या नहीं । आदेश के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि अत्यधिक जोर याची के वर्ष 1998, 1999 और 2000 में दिए गए प्रतिकूल प्रविष्टियों पर दिया गया है और कतिपय पिछली घटनाओं पर जिनमें वह अभिकथित तौर पर शराब के नशे के अधीन पाया गया था । याची के अनुसार, इन प्रविष्टियों को उसे कभी भी संसूचित नहीं किया गया था और इनकी जानकारी प्रथम बार याची को आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने के पश्चात् हुई । ऐसा होते हुए भी, न्यायालय पूर्वोक्त प्रश्न पर विचार करने के लिए आवश्यक नहीं समझता है क्योंकि अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय अपचारी के विरुद्ध अधिरोपित अवचार के आरोप को साबित करने के लिए कुछ नहीं कर सकता है जो साक्ष्य नियोजक के कब्जे में है जिन्हें वह स्वयं की प्रतिरक्षा करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होने के पश्चात् अनुशासनिक कार्यवाहियों के दौरान सिद्ध कर सकता था । उपर्युक्त चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, यह अप्रतिरोध्य निष्कर्ष निकलता है कि नियम 8(2)(ख) के अधीन शक्ति का अवलंब लेते हुए अनुशासनिक जांच किए बिना याची की सेवा से पदच्युति का विनिश्चय प्रकटतः अवैध है और विधि में कायम नहीं रखा जा सकता है । आवश्यक परिणाम यह है कि पदच्युति का आक्षेपित

आदेश कायम नहीं रखा जा सकता था और तद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है । (पैरा 9, 10, 12, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20 और 21)

वर्तमान मामले में, वर्ष 2010 में अपचारी अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका था । इस प्रकार, प्रत्यर्थियों को जांच करने की अनुमति देने का प्रयोजन लाभप्रद नहीं होगा । उसी समय पर, उपर्युक्त उल्लिखित निर्णयों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयसार को ध्यान में रखते हुए, याची को अधिकारस्वरूप पिछली मजदूरियों का हकदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है । उक्त प्रश्न को विनिश्चित करते हुए, यह न्यायालय अभिकथित अवचार से उद्भूत तथ्यात्मक पहलुओं और न्याय, साम्या और शुद्ध अंतःकरण के सिद्धांतों की अनदेखी नहीं कर सकता है जिन्हें विचार में लेना आवश्यक है । यहां यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि अपचारी ने पदच्युति आदेश को इस आधार पर चुनौती दी थी कि जांच से अभिमुक्ति अवैध थी किन्तु उसने घटना में अपनी अन्तर्ग्रस्ता से इनकार नहीं किया है । इस बारे में, मामूली कानाफूसी भी नहीं थी कि प्रश्नगत घटना घटित नहीं हुई थी । इसके अलावा, रिट याचिका के पैराग्राफ 10 में यह स्वीकार किया गया है कि वह तारीख 22 जून, 2006 को इलाहाबाद आया था । परिदृश्य जिसे उसने मीडिया व्यक्तियों की उपस्थिति में पूर्ण लोक उत्पात सृजित किया था, से भी उसने इनकार नहीं किया है । इसकी इस कारण से भी उपधारणा की गई है कि सम्पूर्ण परिदृश्य का न केवल बड़े पैमाने पर जनता साक्षी थी अपितु इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा भी अभिलिखित किया गया था और इसकी रिपोर्ट समाचारपत्रों में भी की गई थी । प्रति-शपथपत्र के साथ प्रत्यर्थियों ने याची के हाथ में पैंट लिए और मात्र शर्ट और अन्डरवियर पहने हुए फोटोग्राफ वाले विभिन्न समाचारपत्रों में प्रकाशित समाचारों को भी अभिलेख पर लाया है । प्रति-शपथपत्र में यह भी कथन किया गया है कि याची का, पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 34 के अधीन स्थानीय पुलिस द्वारा घटनास्थल पर चालान किया गया था और बाद में उसके द्वारा वैयक्तिक बंधपत्र 1,000/- रुपए देने पर उसे मुक्त कर दिया गया था । चालान पर याची के हस्ताक्षर (प्रति-शपथपत्र 3) दिए गए थे । प्रकटतः उपर्युक्त के लिए कारण यह था कि याची घटना से इनकार करने का साहस नहीं कर सका था । प्रत्युत्तर शपथपत्र में, याची ने बुद्धिमत्ता दिखाते हुए, अपने आचरण का स्पष्टीकरण करने की कोशिश की है यह कथन करते हुए कि इलाहाबाद से लौटते समय उसके मित्रों में से एक ने उसे कोल्ड ड्रिंक दी थी और इसके पश्चात् वह यह नहीं जानता है कि

क्या घटित हुआ । यद्यपि, उक्त कथन स्पष्टतः पश्चात्वर्ती सोच होने के नाते घटना से इनकार करने की कोटि में नहीं आएगा । इसके प्रतिकूल, याची के विरुद्ध अधिरोपित आरोप अत्यधिक मजबूत हैं । वर्ष 1998, 1999 और 2000 में भी उसे इस प्रभाव की प्रविष्टि दी गई थी कि वह एक शराबी उप-निरीक्षक है । याची ने इन प्रतिकूल प्रविष्टियों से इनकार करने की कोशिश की है यह कथन करते हुए कि इन्हें उसे कभी संसूचित नहीं किया गया था । यदि इन प्रतिकूल प्रविष्टियों की अवहेलना भी कर दी जाए तो भी मेरा यह निष्कर्ष है कि कम-से-कम अजिम्मेदार व्यवहार के बारे में और अप्राधिकृत अनुपस्थिति के बारे में आरोप साबित होते हैं, जो निश्चय ही स्वीकृत हैं । इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि पुलिस बल का सदस्य होने के नाते, जो स्वयमेव ही विधि का संरक्षक है, और जिससे उच्च मानकों को बनाए रखने की अपेक्षा होती है, का ऐसा आचरण निन्दनीय है । यहां यह उल्लेख करना समुचित है कि पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 23 के अधीन एक पुलिस अधिकारी लोक न्यूसेंस कारित होने से रोकने के लिए ड्यूटी ग्रहण करता है किन्तु यह मामला ऐसा है जहां याची स्वयमेव ही लोक न्यूसेंस का एक स्रोत बन गया था । इस प्रकार, याची को पिछली मजदूरियों को अधिनिर्णीत करना वस्तुतः उसे पुरस्कृत करने की कोटि में आएगा । अन्य आधारभूत सिद्धांत "काम नहीं वेतन नहीं" है जो पिछली मजदूरियों से संबंधित प्रश्न को अवधारित करने में भी लागू होता है, यद्यपि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यही पिछली मजदूरियों का संदाय करने से इनकार करने का एक मात्र कारण नहीं हो सकता है क्योंकि इससे इनकार करने के लिए सम्पूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों को विचार में लिया जाना चाहिए । इसलिए, सम्पूर्ण परिदृश्य तथा न्याय, साम्या और शुद्ध अन्तःकरण के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, मेरी यह राय है कि याची पिछली मजदूरियों का हकदार नहीं है । यह उसकी पुनः बहाली, उसकी सेवा की निरन्तरता और पारिणामिक सेवानिवृत्त फायदों को मंजूर करने के लिए सांकेतिक होगी । (पैरा 24, 25, 26 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 10 एस. सी. सी. 215 : **रीना रानी** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	19

[2011]	(2011) 5 एस. सी. सी. 142 : **अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक कोल इंडिया लिमिटेड** बनाम **अनन्ता शाह ;**	23
[2011]	(2011) 14 एस. सी. सी. 280 : **सूर्य मणि शर्मा** बनाम **भारत संघ ;**	27
[2005]	(2005) 11 एस. सी. सी. 525 : **सुदेश कुमार** बनाम **हरियाणा राज्य ;**	8
[2000]	(2000) 10 एस. सी. सी. 196 : **एक्स-कांस्टेबल छोटे लाल** बनाम **भारत संघ ;**	27
[1993]	(1993) 4 एस. सी. सी. 727 : **प्रबन्ध निदेशक, ई. सी. आई. एल.** बनाम **बी. करुणाकरन ;**	22
[1991]	ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 385 : **जसवंत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य ;**	13
[1991]	ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 1043 : **मुख्य सुरक्षा अधिकारी** बनाम **सिंगासन रबिदास ;**	7
[1985]	(1985) 3 एस. सी. सी. 398 : **भारत संघ** बनाम **तुलसी राम पटेल** ।	6

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2006 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 43404.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री संजीव सिंह और विनय सिंह, काउंसेल

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री पीयूष शुक्ला, मुख्य स्थायी काउंसेल

न्यायमूर्ति मनोज कुमार गुप्ता – वर्तमान रिट याचिका में, विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या अनुशासनिक जांच की अभिमुक्ति देने के पश्चात् याची को सेवा से पदच्युत करने की प्रत्यर्थियों की कार्रवाई न्यायोचित है या नहीं ।

2. याची सिविल पुलिस में उप-निरीक्षक के रूप में कार्य कर रहा था और उसकी सेवाएं, उत्तर प्रदेश पुलिस अधिकारी, अधीनस्थ श्रेणी (दंड और अपील) नियम, 1991 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "नियम" कहा गया है) द्वारा विनियमित थीं । नियम 8, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(1)(2) के सदृश्य है । इसका सुसंगत भाग निम्नलिखित है :–

> "8. **पदच्युति और हटाया जाना** – (1) कोई पुलिस अधिकारी, नियुक्ति प्राधिकारी से अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा सेवा से न तो पदच्युत किया जाएगा न ही हटाया जाएगा ।
>
> (2) कोई पुलिस अधिकारी, इन नियमों में यथाअनुध्यात समुचित जांच और अनुशासनिक कार्यवाहियों के पश्चात् ही पदच्युत या हटाया या पंक्ति में अवनत किया जाएगा :
>
> परन्तु, यह नियम लागू नहीं होगा –
>
> (क) जहां किसी व्यक्ति को ऐसे आचरण के आधार पर पदच्युत किया जाता है या पद से हटाया जाता है या पंक्ति में अवनत किया जाता है जिसके लिए आपराधिक आरोप पर उसे सिद्धदोष ठहराया गया है, या
>
> (ख) जहां किसी व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का यह समाधान हो जाता है कि किसी कारण से, जो उस प्राधिकारी द्वारा लेखबद्ध किया जाएगा, यह युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है कि ऐसी जांच की जाए, या....."

3. यह अभिकथित है कि तारीख 22 जून, 2006 को जब याची उप-निरीक्षक के रूप में पुलिस थाना चिल्ह, जिला मिर्जापुर में तैनात था तब वह बिना किसी पूर्व सूचना या अनुज्ञा के ड्यूटी से अनुपस्थित रहा था और वह इलाहाबाद आया और शराब के नशे में था तभी उसने जोहन्सटोनगंज क्रासिंग, इलाहाबाद में उपद्रव मचाया था । यह अभिकथित है कि उसने पुलिस वर्दी में अपनी पैंट और बेल्ट खोल दिया तथा शर्ट और अन्डरवियर पहनकर अनुचित व्यवहार किया । पूर्वोक्त घटना की रिपोर्ट समाचारपत्र अमर उजाला, इलाहाबाद, दैनिक जागरण और टाइम्स आफ इंडिया में प्रकाशित हुआ और विभिन्न टेलीविजन चैनलों पर भी प्रसारित हुआ । इस घटना से पुलिस विभाग की साख को क्षति पहुंची । यह प्रतीत होता है कि

उक्त घटना के बारे में एक रिपोर्ट पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर द्वारा उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज, मिर्जापुर को अग्रेषित की गई थी । उस पर कार्रवाई करते हुए, उन्होंने तारीख 23 जून, 2006 के आदेश द्वारा याची को सेवा से पदच्युत कर दिया था । उक्त आदेश, नियम, 1991 के नियम 8(2)(ख) के अधीन तात्पर्यित शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किया गया था । आदेश में जांच की अभिमुक्ति के लिए कारण यह दिया गया था कि याची अपनी ड्यूटी से निरन्तर अनुपस्थित रहा है और जांच कार्यवाहियों में उससे सहयोग की संभावना नहीं थी । यह भी कथित है कि घटना की व्यापक रिपोर्ट विभिन्न समाचारपत्रों और इलैक्ट्रोनिक मीडिया में हुई थी और इसलिए जांच कराना समीचीन या व्यवहार्य नहीं होता । उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, याची ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की है ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल की एकमात्र दलील यह है कि अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति देने की प्रत्यर्थियों का विनिश्चय न्यायोचित नहीं है । यह निवेदन किया है कि कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति इन परिस्थितियों में युक्तियुक्त मत अपनाते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि जांच कराना युक्तियुक्त रूप से व्यवहार्य नहीं था । यह भी तर्क दिया गया है कि प्राधिकारियों का वस्तुनिष्ट समाधान अभिलेख पर के सुसंगत तथ्यों और सामग्रियों पर आधारित थे, न कि अनुमानों या कल्पनाओं पर । यह निवेदन किया गया कि वर्तमान मामले में, अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति करने का विनिश्चय पूर्णतया मनमाना है और शक्ति का छद्म प्रयोग का परिणाम है । इससे याची को गंभीर और अपूर्णीय क्षति हुई है क्योंकि उसे अनुशासनिक कार्यवाहियों में स्वयं की प्रतिरक्षा करने की उसके मूल्यवान अधिकार से वंचित किया गया है ।

5. यह भी निवेदन किया गया है कि याची पुलिस उप-निरीक्षक के रूप में सीधी भर्ती द्वारा तारीख 28 दिसम्बर, 1974 को नियुक्त हुआ था और वर्ष 1998 तक उसके विरुद्ध कोई प्रतिकूल प्रविष्टि नहीं थी । यह निवेदन किया है कि याची वर्ष 1982 में कुम्भ मेला, इलाहाबाद में प्रतिनियुक्त हुआ था और इस अवधि के दौरान उसने कम-से-कम 18 पुरस्कार जीते थे । वर्ष 1990 में उसे बेहतरीन अन्वेषक का पुरस्कार प्रदान किया गया था । उसने कम-से-कम 53 पुरस्कार जीते हैं । इसी बीच में, याची वर्ष 2010 में सेवानिवृत्त हो गया था । तारीख 22 जून, 2006 को वह अपने जी. पी. एफ. लेखा से ऋण की मंजूरी कराने के लिए दिए गए अपने आवेदन के संबंध में इलाहाबाद आया क्योंकि याची को अपने तीसरे

पुत्र की शिक्षा के लिए धन की आवश्यकता थी जिसने एम. आई. टी., मद्रास में इंजीनियरिंग की प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण की थी । यह दावा किया गया है कि याची ने तारीख 22 जून, 2006 को इलाहाबाद आने के लिए अपने ज्येष्ठ प्राधिकारियों से मौखिक अनुज्ञा ली थी । इसके पूर्व, वह नियमित तौर पर कार्यालय आता था । आक्षेपित आदेश में व्यक्त किया गया यह मत कि याची निरन्तर अनुपस्थित रहता था, इसलिए, अनुशासनिक जांच कराना संभाव्य नहीं था, यह अभिलेख पर की किसी सामग्री पर आधारित नहीं है । यह दलील दी गई है कि सम्पूर्ण कार्रवाई अपने आप में ही अवैध और मनमाना है ।

6. **भारत संघ** बनाम **तुलसी राम पटेल**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय की सांविधानिक न्यायपीठ ने संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2) के खंड (ख) का निर्वचन करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "130. खंड (ख) को लागू करने की पुरोभाव्य शर्त यह है कि अनुशासनिक प्राधिकारी का यह समाधान हो कि अनुच्छेद 311 के खंड (2) द्वारा अनुध्यात जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है । ..... इस प्रकार, जांच करना साध्य है या नहीं यह इस संदर्भ में देखा जाना चाहिए कि क्या ऐसा करना युक्तियुक्त रूप से साध्य है या नहीं । खंड (ख) के अनुसार पूर्ण या संपूर्ण असाध्यता अपेक्षित नहीं है । अपेक्षित यह है कि जांच करना वर्तमान स्थिति को युक्तियुक्त रूप से दृष्टि में रखते हुए एक युक्तिवान व्यक्ति की राय में साध्य नहीं है । ऐसे मामलों को गिनाना संभव नहीं है, जिनमें जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं होगा । फिर भी उदाहरण के रूप में कुछ दृष्टांत दिए जा सकते हैं । यदि सरकारी सेवक विशेष रूप से अपने सहयोगियों की मार्फत या के साथ साक्षियों को, जो उसके विरुद्ध साक्ष्य देने जा रहे हैं, प्रतिशोध के भय से आतंकित करता है, धमकी देता है या तंग करता है, ताकि उन्हें ऐसा करने से रोका जा सके अथवा यदि सरकारी सेवक स्वयं या अन्य लोगों के साथ या की मार्फत अधिकारी को, जो अनुशासनिक प्राधिकारी या उसके परिवार के सदस्य को धमकी देता है, तंग करता है या आतंकित करता है जिससे कि वह जांच करने का निदेश देने

---

[1] (1985) 3 एस. सी. सी. 398.

से भयभीत हो जाए, तो जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं होगा । इसी प्रकार, तब जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं होगा जब हिंसा और व्यापक अनुशासनहीनता और अवज्ञाकारिता का वातावरण विद्यमान हो और इस बात का कोई महत्व नहीं है कि संबंधित सरकारी सेवक ऐसे वातावरण को पैदा करने में भागीदार है या नहीं । इस संबंध में, हमें यह ध्यान रखना होगा कि अनेक लोग प्रपीड़ित और आतंकित करते हों जबकि कोई व्यक्ति भले ही ऐसा न करता हो । जांच करने की युक्तियुक्त साध्यता अनुशासनिक प्राधिकारी के अनुमान का विषय है । सामान्यतया ऐसा अधिकारी उस स्थान पर होता है और यह जानता है कि क्या हो रहा है । चूंकि अनुशासनिक प्राधिकारी इस बात का सर्वश्रेष्ठ निर्णायक होता है इसलिए अनुच्छेद 311 का खंड (3) इस प्रश्न पर अनुशासनिक प्राधिकारी के विनिश्चय को अंतिम मानता है । अनुशासनिक प्राधिकारी से यह प्रत्याशा नहीं की जाती है कि वह मामूली सी बात पर या मनमाने तौर पर या परोक्ष हेतुओं से या जांच करने से बचने मात्र के लिए या इसलिए कि सरकारी सेवक के खिलाफ विभाग का मामला कमजोर और असफल हो जाएगा, अनुशासनिक जांच करने से अभिमुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता । अनुच्छेद 311(3) द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी के विनिश्चय को प्रदत्त अंतिमता न्यायालय पर आबद्धकर नहीं है, जहां तक उसकी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का संबंध है और ऐसी स्थिति में न्यायालय जांच से अभिमुक्ति देने वाले आदेश को एवं शास्ति अधिरोपित करने वाले आदेश को भी अवैध घोषित कर देगा ।"

7. **तुलसी राम पटेल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि का **मुख्य सुरक्षा अधिकारी** बनाम **सिंगासन रविदास**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि जांच से अभिमुक्ति देने के लिए, उस मामले में दिए गए कारण विधि में पूर्णतया असंगत और पूर्णतया अपर्याप्त हैं । माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"5. वर्तमान मामले में, जांच से अभिमुक्ति देने के लिए एकमात्र कारण यह दिया गया है कि यह सुरक्षा/अन्य रेलवे

[1] ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 1043.

कर्मचारियों के साक्षियों के लिए साध्य या वांछनीय नहीं था क्योंकि यह इन साक्षियों को उजागर कर देता और उन्हें भविष्य में निष्प्रभावी कर देता । यह भी कथन किया गया है कि यदि इन साक्षियों से आमने-सामने जांच के लिए उपस्थित होने के लिए कहा जाता तो उन्हें व्यक्तिगत तौर पर अपमानित और बेइज्जती महसूस होती और उनके कुटुम्ब सदस्यों को भी हिंसा का सामना करना पड़ सकता था । हमारे मत में, ये कारण विधि में पूर्णतया अपर्याप्त हैं । हम यह समझने में असमर्थ हैं कि यदि ये साक्षी आमने-सामने जांच में उपस्थित हुए होते तो किस प्रकार, ये साक्षी व्यक्तिगत तौर पर अपमानित और बेइज्जती महसूस करते । ये औपचारिक साक्षी हैं और इन्हें ऐसी किसी संवेदनशील या विशेष प्रास्थिति में रखा जाना नहीं कहा जा सकता है जिसमें उन्हें आमने-सामने जांच में उपस्थित होने के लिए कहने में उन्हें किसी खतरे के अध्यधीन रखना होता जिसमें साक्षी साधारण तौर पर अध्यधीन नहीं होते हैं और अतएव, ये आधार जांच से अभिमुक्ति देने के लिए कोई न्यायोचितता गठित नहीं करते हैं ।"

8. चूंकि, इसके पश्चात्, पूर्वोक्त विधि की प्रतिपादना पर कई प्रामाणिकताओं और **तुलसी राम पटेल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के सांविधानिक न्यायपीठ के निर्णय का निरन्तर अनुसरण किया गया है । **सुदेश कुमार** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के नवीनतम विनिश्चय में, अपीलार्थी, हरियाणा पुलिस सेवा में एक कांस्टेबल था और हेड कांस्टेबल के रूप में प्रोन्नत हुआ था । एक जापानी राष्ट्रीयता के श्री केनीची टनक द्वारा एक शिकायत दर्ज कराने पर उप-पुलिस अधीक्षक द्वारा अन्वेषण किया गया था और उस आधार पर संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2)(ख) के उपबंधों का अवलंब लेते हुए जांच से अभिमुक्ति देते हुए अपीलार्थी की सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं । सेवा समाप्ति के आदेश में जांच नहीं कराने के लिए कारण यह दिया गया था कि शिकायतकर्ता ने विदेशी नागरिक होने के नाते तंग करने के डर से अभियुक्त का नाम बताने से इनकार कर दिया था और देश छोड़ देना चाहता था और यदि एक बार वह देश छोड़ देता तो जांच के लिए उसे वापस बुलाने में युक्तियुक्त रूप में साध्य नहीं हो पाता ।

---

[1] (2005) 11 एस. सी. सी. 525.

माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त कारणों से असहमति व्यक्त की और निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

> "5. अब यह सुस्थिर विधि का सिद्धांत है कि संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2) के अधीन जांच एक नियम है और जांच से अभिमुक्ति देना एक अपवाद है । संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2)(ख) के अधीन जांच से अभिमुक्ति देने वाले प्राधिकारी को अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से यह समाधान होना चाहिए कि जांच कराना युक्तियुक्त तौर पर साध्य नहीं है । संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2)(ख) का अवलंब लेते हुए पारित पदच्युति आदेश, जैसा कि उपर्युक्त उद्धृत है, के परिशीलन से यह सुस्पष्टतः दर्शित होता है कि इस बारे में कोई भी कारण समनुदेशित नहीं किया गया है कि क्यों जांच कराना युक्तियुक्त तौर पर साध्य नहीं है । पदच्युति आदेश में प्रकट किए गए कारण यह हैं कि शिकायतकर्ता विदेशी नागरिक होने के नाते तंग करने के डर से अभियुक्त का नाम बताने से इनकार कर दिया था और देश छोड़ देना चाहता था और यदि एक बार वह देश छोड़ देता तो जांच के लिए उसे वापस बुलाने में युक्तियुक्त रूप में साध्य नहीं हो पाता । यह जांच से अभिमुक्ति के लिए कोई आधार नहीं है । दूसरी ओर, यह विवादित नहीं है कि तारीख 23 दिसम्बर, 1999 के आदेश द्वारा शिकायतकर्ता का वीजा तारीख 22 दिसम्बर, 2001 तक बढ़ा दिया गया था । इसलिए, जांच में श्री केनीची टनक की उपस्थिति सुनिश्चित करने में कोई कठिनाई नहीं थी ।
>
> 6. संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2) में अन्तर्निहित सुनवाई के युक्तियुक्त अवसर में, स्वयं की प्रतिरक्षा करने और उसके विरुद्ध प्रस्तुत अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा द्वारा अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने और अपने पक्ष में प्रतिरक्षा साक्षियों, यदि कोई हों, की परीक्षा करने का अवसर सम्मिलित है । ऐसा वह तभी कर सकता है, यदि जांच की जाती है जहां उसे, उसके विरुद्ध अधिरोपित आरोपों की सूचना दी जाती है । संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311(2) के समादेश का, अपीलार्थी को सुनवाई के युक्तियुक्त अवसर से वंचित करते हुए, अतिक्रमण किया गया है ।"

9. इस प्रकार, सुस्थिर मत यह है कि जांच कराना एक नियम है और इसकी अभिमुक्ति एक अपवाद है । परीक्षण यह है कि अविभावी परिस्थिति

में एक युक्तियुक्त व्यक्ति क्या युक्तियुक्त मत लेता है, इस पर निर्भर करता है । आगे, विभागीय जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय संबंधित प्राधिकारी के स्वतः कथन पर आधारित नहीं होता है अपितु इसे सुसंगत तथ्यों के उद्देश्यपरक निर्धारण पर आधारित होना चाहिए । यदि वस्तुनिष्ठ समाधान को न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जाती है तो इसे उपर्युक्त अधिकथित परीक्षण से गुजरना होता है और जिसके लिए अनुशासनिक प्राधिकारी पर यह भार होता है कि वह अनुशासनिक जांच की अभिमुक्ति की कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने के लिए न्यायालय के समक्ष सुसंगत तथ्यों और सामग्रियों को प्रस्तुत करे ।

10. वर्तमान मामले के तथ्यों में, इन सिद्धांतों को लागू करते हुए इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय सुसंगत विचारों पर आधारित नहीं है और विधि में कायम नहीं रखे जा सकते हैं । आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय प्राथमिक तौर पर दो आधारों पर आधारित है – (1) यह कि अपचारी निरन्तर अनुपस्थित रहा है और जांच में उसका सहयोग करना संभाव्य नहीं था और (2) अपचारी के कृत्यों का विभिन्न समाचारपत्रों और मीडिया में व्यापक तौर पर रिपोर्ट हुआ था और इसलिए, जांच कराना असमीचीन और असाध्य होता ।

11. मैं, एक-एक करके इन आधारों पर विचार करता हूं ।

12. प्रथम आधार, जैसा कि उपर्युक्त कथित है, यह है कि याची निरन्तर अनुपस्थित रहा है और अनुशासनिक कार्यवाहियों में उससे सहयोग करने की संभाव्यता नहीं थी । स्वीकृततः, घटना तारीख 22 जून, 2006 की है और यह प्रतीत होता है कि उसके अगले ही दिन अर्थात् तारीख 6 जून, 2006 को पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर ने उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज, मिर्जापुर को रिपोर्ट अग्रेषित कर दी थी, जिसमें उन्होंने यह सुझाव दिया था कि याची के विरुद्ध नियम 8(2)(ख) का अवलंब लेते हुए, कार्रवाई की जानी चाहिए । उस पर कार्रवाई करते हुए, उप-पुलिस महानिरीक्षक, विध्यांचल रेंज ने उसी दिन अर्थात् तारीख 23 जून, 2006 को याची को सेवा से पदच्युत करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया, यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि जांच करना साध्य नहीं होगा । यह विवादित नहीं है कि याची ने तारीख 21 जून, 2006 तक अपनी ड्यूटी में उपस्थित रहा और अप्राधिकृत अनुपस्थिति मात्र 22 जून, 2006 के लिए थी, जिस दिन के लिए यह कथन किया गया है कि वह उच्चतर

प्राधिकारियों की पूर्व सूचना या अनुज्ञा के बिना इलाहाबाद आया था । पदच्युति आदेश अगले ही दिन पारित किया गया था । इस प्रकार, वह एक या कम-से-कम दो दिन अनुपस्थित रहा था जब पदच्युति आदेश पारित किया गया था, यद्यपि, याची का पक्षकथन यह है कि तारीख 23 जून, 2006 को उसने ड्यूटी के लिए रिपोर्ट की थी किन्तु, उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं । पूर्वोक्त तथ्यों से कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति यह युक्तियुक्त मत अपनाते हुए यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता है कि अपचारी निरन्तर अपनी ड्यूटी से अनुपस्थित रहा जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि जांच में उसके सहयोग करने की संभावना नहीं थी ।

13. **जसवंत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि संबंधित प्राधिकारी द्वारा अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति देने के समाधान को न्यायालय में प्रश्नगत किया जाता है तो प्राधिकारी, सुसंगत तथ्यों और सामग्रियों को अभिलेख पर लाते हुए अपनी कार्रवाई को न्यायोचित साबित करने के लिए आबद्ध है । न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "अनुशासनिक प्राधिकारी से हल्के या मनमाने रूप में या अन्तरस्थ हेतु या मात्र जांच कराने से बचने के लिए या सरकारी सेवक के विरुद्ध विभाग के मामले, जो कमजोर और अवश्य ही असफल होता, के कारण अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति देने की प्रत्याशा नहीं की जाती है ।
>
> इसलिए, विभागीय जांच से अभिमुक्ति देने का विनिश्चय, संबंधित प्राधिकारी के एकमात्र कथन पर आधारित नहीं किया जा सकता है । जब संबंधित प्राधिकारी के समाधान को न्यायालय में प्रश्नगत किया जाता है तो उस प्राधिकारी को जो आदेश का समर्थन करता है, यह दर्शित करना होता है कि समाधान कतिपय वस्तुनिष्ठ तथ्यों पर आधारित है और यह संबंधित अधिकारी के अनुमानों और कल्पनाओं पर आधारित नहीं है ।"

14. वर्तमान मामले में, यद्यपि प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र में यह पक्षकथन नहीं किया गया है कि याची तारीख 22 जून, 2006 के पूर्व अनुपस्थित था । वे इस निष्कर्ष को न्यायोचित ठहराने के लिए इस

---

[1] ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 385.

न्यायालय के समक्ष कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सके कि याची द्वारा लम्बे समय से ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के कारण जांच में सहयोग करने की सम्भाव्यता नहीं थी ।

15. प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए मत की सत्यता की जांच दूसरे तरीके से की जा सकती है । नियम 16 के अधीन, प्राधिकारी, अपचारी द्वारा अपने तैनाती के स्थान से स्वयं को अनुपस्थित रखने या कार्यवाहियों से जो जारी हैं, से बचने के लिए अनुपस्थित रखने पर अपचारी के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए सशक्त है । नियम 16 निम्नलिखित है :–

> "16. **अनुपस्थिति में कार्यवाहियां** – (1) अपचारी पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध सक्षम प्राधिकारी द्वारा विभागीय कार्यवाहियां की जा सकती हैं, यदि पुलिस अधिकारी जिनके विरुद्ध विभागीय कार्यवाहियां लम्बित हैं या जिनके विरुद्ध ऐसी कार्यवाहियां आरम्भ की जानी प्रस्थापित हैं या जिनसे सम्पर्क करना जांच अधिकारी के लिए असंभाव्य है, जो जान-बूझकर अपनी तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से, जो प्रगति में हैं, स्वयं को अनुपस्थित रखते हैं ।
>
> (2) अनुपस्थिति में, विभागीय कार्यवाहियां करने के पूर्व, संबंधित प्राधिकारी लेखबद्ध में यह अभिलिखित करेगा कि पुलिस अधिकारी से सम्पर्क करने के लिए सभी युक्तियुक्त कदम उठाने के बावजूद उस पर आरोप तामील करना और उसका स्पष्टीकरण लेना या उसकी वैयक्तिक उपस्थिति सुनिश्चित करना संभाव्य नहीं रह गया है ।
>
> **स्पष्टीकरण** – जहां पुलिस अधिकारी से वैयक्तिक तौर पर सम्पर्क किया जाता है या उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है, उसे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा आरोप या नोटिस भेजा जाता है और जिस स्थान पर वह वर्तमान में ठहरा हुआ है या उसके वर्तमान में ठहरे हुए स्थान पर विशेष संदेश वाहक द्वारा उसे भेजा जाता है और उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है तो यह उपधारणा की जाएगी कि संबंधित पुलिस अधिकारी से सम्पर्क करने के लिए युक्तियुक्त कदम उठाए गए हैं ।"

16. इस प्रकार, नियम 16 यह उपबंध करता है कि यदि अपचारी, तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से स्वयं को अनुपस्थित रखता है तो प्राधिकारी, उसकी अनुपस्थिति में कार्यवाहियां करने के लिए सशक्त है ।

नियम 16 से संलग्न स्पष्टीकरण उन अत्यावश्यकताओं को अनुध्यात करता है जिनमें यह उपधारणा की जा सकती है कि अपचारी अपनी तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से जानबूझकर स्वयं को अनुपस्थित रखता है । यह उपबंधित है कि जहां पुलिस अधिकारी से वैयक्तिक तौर पर सम्पर्क किया जाता है या उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है, उसे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा आरोप या नोटिस भेजा जाता है और जिस स्थान पर वह वर्तमान में ठहरा हुआ है या उसके वर्तमान में ठहरे हुए स्थान पर विशेष संदेश वाहक द्वारा उसे भेजा जाता है और उसके द्वारा दिए गए पते पर, जैसा कि उसकी चरित्र पंजिका में अभिलिखित है तो यह उपधारणा की जाएगी कि संबंधित पुलिस अधिकारी से सम्पर्क करने के लिए युक्तियुक्त कदम उठाए गए हैं ।

17. इस प्रकार, यह नियम प्राधिकारियों को अपचारी की अनुपस्थिति में अनुशासनिक कार्यवाहियां करने के लिए सशक्त करता है और उन मार्गदर्शकों और परिस्थितियों को भी अधिकथित करता है जिनमें, उसकी तैनाती के स्थान से या कार्यवाहियों से उसकी जानबूझकर अनुपस्थित रहने के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके । यह भी उपदर्शित है कि जब कभी अपचारी अनुशासनिक कार्यवाहियों से जानबूझकर अनुपस्थित रहता है तो प्राधिकारी, अनुशासनिक कार्यवाहियों से अभिमुक्ति देने का अधिकारी नहीं हो जाता है अपितु, उसे उसकी अनुपस्थिति में कार्यवाही करने और निष्कर्ष निकालने होते हैं । अब, यदि यह भी उपधारणा की जाती है कि अपचारी लम्बी अवधि से अनुपस्थित रहा है और जांच में उसके सहयोग करने की संभावना नहीं है तो ही प्राधिकारी, अनुशासनिक कार्यवाहियों में अपचारी के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही करने के लिए सशक्त है किन्तु, यह अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति के लिए आधार नहीं हो सकता है ।

18. अन्य आधार यह है कि अपचारी के अभिकथित पथभ्रष्ट आचरण की रिपोर्ट प्रेस और मीडिया में की गई हैं और इसलिए, इस मामले में अनुशासनिक कार्यवाही करना असमीचीन और असाध्य होता । यह इस कारण के लिए आधार नहीं हो सकता है कि किस प्रकार प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा घटना की रिपोर्ट की गई हैं, यह अनुशासनिक कार्यवाही नहीं करने का आधार नहीं हो सकता है । प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया की रिपोर्ट को साक्ष्य के नियम के अध्यधीन अपचारी के विरुद्ध साक्ष्य के भाग के रूप में प्रयोग किया जा सकता है कि किन्तु इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है कि यह अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति

देने का आधार हो सकता है ।

19. प्रति-शपथपत्र के साथ प्रत्यर्थियों ने पुलिस अधीक्षक, मिर्जापुर की तारीख 23 जून, 2006 की रिपोर्ट को अभिलेख पर रखा है । इसमें मात्र अपचारी का पूर्ववृत्त और घटना वर्णित है और यह सुझाव दिया गया है कि उसका पुलिस बल में बना रहना अपेक्षित नहीं है । इसमें नियम 8(2)(ख) के अधीन कार्यवाही के लिए भी सिफारिश की गई है । यह पूर्णतया ऐसा कोई कारण नहीं देता है कि क्यों नियम 8(2)(ख) के अधीन शक्ति का अवलंब लिया जाना चाहिए और क्यों अनुशासनिक जांच करना असाध्य है । ऐसी रिपोर्ट के आधार पर यह राय निकालना असंभाव्य है कि जांच कार्यवाहियों की अभिमुक्ति दी जानी चाहिए । माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष **रीना रानी** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाला नवीनतम मामला आया जिसमें हरियाणा सरकार के पुलिस विभाग में एक कांस्टेबल का मामला अन्तर्वलित था । इस मामले में, अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति देने के पश्चात् पदच्युति आदेश पारित किया गया था, इस आधार पर कि जब वह प्रीजनर स्कार्ट गार्ड के रूप में तैनात थी तो उसने मुस्ताक **उर्फ** मुस्तकीम **उर्फ** रसीम के साथ नजदीकी संबंध बना लिए थे जो सात आपराधिक मामलों में सम्मिलित था । जांच से अभिमुक्ति देने का कारण यह था कि अपीलार्थी का मुस्ताक के साथ संबंध साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य थे और इस प्रकार, वह सेवा में बनाए रखने योग्य नहीं रह गई थी और यह कि नियमित विभागीय जांच करना साध्य नहीं रह गया था क्योंकि कोई भी स्वतंत्र साक्षी उपलब्ध नहीं हो सकता था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला था :–

> "11. इस मामले के तथ्यों में उपर्युक्त उद्धृत मताभिव्यक्तियों के निर्णयासार को लागू करते हुए, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अपीलार्थी की सेवा से पदच्युति, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 311 के उपबंधों के अधिकारातीत में हैं, और विद्वान् एकल न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने पुलिस अधीक्षक द्वारा पारित तारीख 23 अप्रैल, 2010 के आदेश को कायम रखने में गंभीर त्रुटि कारित की है ।"

20. वर्तमान मामले में भी प्रत्यर्थी, मामले के तथ्यों का वर्णन किए बिना प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा घटना की रिपोर्ट पर कार्यवाही

---

[1] (2012) 10 एस. सी. सी. 215.

करते प्रतीत होते हैं और इस बात पर नहीं कि क्या जांच करना साध्य होता या नहीं । आदेश के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि अत्यधिक जोर याची के वर्ष 1998, 1999 और 2000 में दिए गए प्रतिकूल प्रविष्टियों पर दिया गया है और कतिपय पिछली घटनाओं पर जिनमें वह अभिकथित तौर पर शराब के नशे के अधीन पाया गया था । याची के अनुसार, इन प्रविष्टियों को उसे कभी भी संसूचित नहीं किया गया था और इनकी जानकारी प्रथम बार याची को आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने के पश्चात् हुई । ऐसा होते हुए भी, मैं पूर्वोक्त प्रश्न पर विचार करने के लिए आवश्यक नहीं समझता हूं क्योंकि अनुशासनिक जांच से अभिमुक्ति का विनिश्चय अपचारी के विरुद्ध अधिरोपित अवचार के आरोप को साबित करने के लिए कुछ नहीं कर सकता है जो साक्ष्य नियोजक के कब्जे में है जिन्हें वह स्वयं की प्रतिरक्षा करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होने के पश्चात् अनुशासनिक कार्यवाहियों के दौरान सिद्ध कर सकता था ।

21. उपर्युक्त चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, यह अप्रतिरोध्य निष्कर्ष निकलता है कि नियम 8(2)(ख) के अधीन शक्ति का अवलंब लेते हुए अनुशासनिक जांच किए बिना याची की सेवा से पदच्युति का विनिश्चय प्रकटतः अवैध है और विधि में कायम नहीं रखा जा सकता है । आवश्यक परिणाम यह है कि पदच्युति का आक्षेपित आदेश कायम नहीं रखा जा सकता था और तद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है ।

22. अब, प्रश्न यह उद्भूत होता है कि याची किस अनुतोष को पाने का हकदार है । माननीय उच्चतम न्यायालय के सांविधानिक न्यायपीठ ने **प्रबन्ध निदेशक, ई. सी. आई. एल.** बनाम **बी. करुणाकरन**[1] वाले मामले में इसका हल अधिकथित किया है, जहां सेवा समाप्ति के आदेश को कुछ तकनीकी कमी के कारण दूषित पाया गया था । माननीय न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "जहां उपर्युक्त प्रक्रिया का अनुसरण करने के पश्चात्, न्यायालय/अधिकरण, दंडादेश को अपास्त कर देता है तो वहां समुचित अनुतोष यह होना चाहिए कि प्राधिकारी/प्रबंधतंत्र को जांच करने की स्वतंत्रता के साथ ही कर्मचारी को निलम्बनाधीन रखते हुए प्रत्यक्ष तौर पर पुनः बहाल करना चाहिए और उसे रिपोर्ट देने के प्रक्रम से जांच करना चाहिए । यह प्रश्न कि क्या कर्मचारी अपनी पदच्युति की

---

[1] (1993) 4 एस. सी. सी. 727.

तारीख से अपनी पुनः बहाल किए जाने की तारीख तक की पिछली मजदूरियों और अन्य फायदों को पाने का हकदार होता है, अन्ततोगत्वा इसे कार्यवाहियों को पूरी करने के पश्चात् और अंतिम निष्कर्ष पर निर्भर करते हुए, विधि के अनुसरण में संबंधित प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित करने के लिए छोड़ा जाना चाहिए । यदि कर्मचारी नए जांच में सफल होता है और उसे पुनः बहाल करने का निर्देश दिया जाता है तो प्राधिकारी को विधि के अनुसरण में यह विनिश्चय करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए कि उसे पदच्युत करने की तारीख से पुनः बहाल किए जाने की तारीख तक किस प्रकार का व्यवहार किया जाना चाहिए और क्या फायदे, यदि कोई हों, दिया जाना चाहिए और किस सीमा तक के फायदों का वह हकदार होगा । रिपोर्ट देने में असफल रहने पर जांच अपास्त करने के परिणामस्वरूप पुनः बहाल किए जाने को, रिपोर्ट देने के प्रक्रम से नए जांच कराने के प्रयोजन के लिए पुनः बहाली के रूप में माना जाना चाहिए और कुछ नहीं, जहां ऐसी नई जांच कराई जाती है । यही विधि की सही प्रतिपादना भी होगी ।"

23. माननीय उच्चतम न्यायालय ने अत्यधिक नवीनतम, **अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक कोल इंडिया लिमिटेड** बनाम **अनन्ता शाह**[1] वाले मामले में, पदच्युति आदेश के अपास्त होने के परिणाम और पिछली मजदूरियों के हक से संबंधित प्रश्न पर विचार करते हुए निम्नलिखित मत व्यक्त किए हैं :–

"49. इस न्यायालय द्वारा पिछली मजदूरियों के हक के विवाद्यक पर समय-समय पर विचार किया गया है और संगत तौर पर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय या अधिकरण द्वारा कर्मचारी पर अधिरोपित दंड अपास्त करने के पश्चात् भी, पिछली मजदूरियों के संदाय करने का विवेकाधिकार बना रहता है । न्यायालय/अधिकरण द्वारा पिछली मजदूरियों को मंजूर करने की शक्ति का प्रयोग सम्पूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है क्योंकि इसके बारे में कोई भी सटीक फार्मूला विकसित हुआ है न ही ऐसे मामलों के लिए कोई सारभौमिक नियम अधिकथित किया जा सकता है । **यदि अपचारी पुनः बहाल किया जाता है तो वह स्वभाविक तौर पर पिछली मजदूरियों का हकदार नहीं हो जाता है**

---

[1] (2011) 5 एस. सी. सी. 142.

क्योंकि पिछली मजदूरियां प्राप्त करने का हक पुनः बहाली के हक से स्वतंत्र होता है । समुचित प्राधिकारी/न्यायालय या अधिकरण द्वारा तथ्यात्मक पहलुओं और न्याय, साम्या तथा शुद्ध अंतःकरण को ध्यान में रखा जाता है । ऐसे मामलों में, न्यायालय या अधिकरण का दृष्टिकोण कठोर या तकनीकी नहीं होना चाहिए अपितु लचीला और यथार्थवादी होना चाहिए {देखें – यू. पी. एस. आर. टी. सी. बनाम **मिठ्ठू सिंह (ए. आई. आर. 2006 एस. सी. सी. 3018), सचिव, अकोला तालुका एजुकेशन सोसाइटी और एक अन्य** बनाम **शिवाजी और अन्य [(2007) 9 एस. सी. सी. 564] तथा प्रबन्ध निदेशक, बालासाहेब देसाई सहकारी एस. के. लिमिटेड** बनाम **काशीनाथ गणपति कम्बाले [(2009) 2 एस. सी. सी. 288]} ।"**

24. वर्तमान मामले में, वर्ष 2010 में अपचारी अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका था । इस प्रकार, प्रत्यर्थियों को जांच करने की अनुमति देने का प्रयोजन लाभप्रद नहीं होगा । उसी समय पर, उपर्युक्त उल्लिखित निर्णयों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयासार को ध्यान में रखते हुए, याची को अधिकारस्वरूप पिछली मजदूरियों का हकदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है । उक्त प्रश्न को विनिश्चित करते हुए, यह न्यायालय अभिकथित अवचार से उद्भूत तथ्यात्मक पहलुओं और न्याय, साम्या और शुद्ध अंतःकरण के सिद्धांतों की अनदेखी नहीं कर सकता है जिन्हें विचार में लेना आवश्यक है ।

25. यहां यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि अपचारी ने पदच्युति आदेश को इस आधार पर चुनौती दी थी कि जांच से अभिमुक्ति अवैध थी किन्तु उसने घटना में अपनी अन्तर्ग्रस्तता से इनकार नहीं किया है । इस बारे में, मामूली कानाफूसी भी नहीं थी कि प्रश्नगत घटना घटित नहीं हुई थी । इसके अलावा, रिट याचिका के पैराग्राफ 10 में यह स्वीकार किया गया है कि वह तारीख 22 जून, 2006 को इलाहाबाद आया था । परिदृश्य जिसे उसने मीडिया व्यक्तियों की उपस्थिति में पूर्ण लोक उत्पात सृजित किया था, से भी उसने इनकार नहीं किया है । इसकी इस कारण से भी उपधारणा की गई है कि सम्पूर्ण परिदृश्य का न केवल बड़े पैमाने पर जनता साक्षी थी अपितु इलैक्ट्रोनिक मीडिया द्वारा भी अभिलिखित किया गया था और इसकी रिपोर्ट समाचारपत्रों में भी की गई थी । प्रति-शपथपत्र के साथ प्रत्यर्थियों ने याची की हाथ में पैंट लिए और मात्र शर्ट और अन्डरवियर पहने हुए फोटोग्राफ वाले विभिन्न समाचारपत्रों में प्रकाशित

समाचारों को भी अभिलेख पर लाया है । प्रति-शपथपत्र में यह भी कथन किया गया है कि याची का, पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 34 के अधीन स्थानीय पुलिस द्वारा घटनास्थल पर चालान किया गया था और बाद में उसके द्वारा वैयक्तिक बंधपत्र 1,000/- रुपए देने पर उसे मुक्त कर दिया गया था । चालान पर याची के हस्ताक्षर (प्रति-शपथपत्र 3) दिए गए थे । प्रकटतः उपर्युक्त के लिए कारण यह था कि याची घटना से इनकार करने का साहस नहीं कर सका था । प्रत्युत्तर शपथपत्र में, याची ने बुद्धिमता दिखाते हुए, अपने आचरण की स्पष्टीकरण करने की कोशिश की है यह कथन करते हुए कि इलाहाबाद से लौटते समय उसके मित्रों में से एक ने उसे कोल्ड ड्रिंक दी थी और इसके पश्चात् वह यह नहीं जानता है कि क्या घटित हुआ । यद्यपि, उक्त कथन स्पष्टतः पश्चात्वर्ती सोच होने के नाते घटना से इनकार करने की कोटि में नहीं आएगा । इसके प्रतिकूल, याची के विरुद्ध अधिरोपित आरोप अत्यधिक मजबूत हैं ।

26. वर्ष 1998, 1999 और 2000 में भी उसे इस प्रभाव की प्रविष्टि दी गई थी कि वह एक शराबी उप-निरीक्षक है । याची ने इन प्रतिकूल प्रविष्टियों से इनकार करने की कोशिश है यह कथन करते हुए कि इन्हें उसे कभी संसूचित नहीं किया गया था । यदि इन प्रतिकूल प्रविष्टियों की अवहेलना भी कर दी जाए तो भी मेरा यह निष्कर्ष है कि कम-से-कम अजिम्मेदार व्यवहार के बारे में और अप्राधिकृत अनुपस्थिति के बारे में आरोप साबित होते हैं, जो निश्चय ही स्वीकृत हैं । इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि पुलिस बल का सदस्य होने के नाते, जो स्वयमेव ही विधि का संरक्षक है, और जिससे उच्च मानकों को बनाए रखने की अपेक्षा होती है, का ऐसा आचरण निन्दनीय है । यहां यह उल्लेख करना समुचित है कि पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 23 के अधीन एक पुलिस अधिकारी लोक न्यूसेंस कारित होने से रोकने के लिए ड्यूटी ग्रहण करता है किन्तु यह मामला ऐसा है जहां याची स्वयमेव ही लोक न्यूसेंस का एक स्रोत बन गया था । इस प्रकार, याची को पिछली मजदूरियों को अधिनिर्णीत करना वस्तुतः उसे पुरस्कृत करने की कोटि में आएगा ।

27. अन्य आधारभूत सिद्धांत "काम नहीं वेतन नहीं" है जो पिछली मजदूरियों से संबंधित प्रश्न को अवधारित करने में भी लागू होता है, यद्यपि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यही पिछली मजदूरियों का संदाय करने से इनकार करने का एकमात्र कारण नहीं हो सकता है क्योंकि इससे इनकार करने के लिए सम्पूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों को विचार में लिया

जाना चाहिए । इसलिए, सम्पूर्ण परिदृश्य तथा न्याय, साम्या और शुद्ध अन्तःकरण के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, मेरी यह राय है कि याची पिछली मजदूरियों का हकदार नहीं है । यह उसकी पुनः बहाली, उसकी सेवा की निरन्तरता और पारिणामिक सेवानिवृत्त फायदों को मंजूर करने के लिए सांकेतिक होगी । यही मत माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **सूर्य मणि शर्मा** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में अपनाया था जिसमें यह निष्कर्ष निकाला गया था कि जांच से अभिमुक्ति अवैध थी किन्तु इसी बीच में अपचारी अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका था । पुनः **एक्स-कांस्टेबल छोटे लाल** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् की जांच से अभिमुक्ति गलत थी, आरोपों की प्रकृति को देखते हुए पिछली मजदूरियों को देने से इनकार कर दिया था ।

28. उपर्युक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, रिट याचिका सफल होती है और भागतः मंजूर की जाती है । प्रत्यर्थी को यह निर्देश दिया जाता है कि वे याची की सेवा की निरन्तरता मंजूर करते हुए उसकी अधिवर्षिता की आयु प्राप्त होने तक देय सेवानिवृत्त फायदों की गणना करें और ऐसी गणना करने के पश्चात् देय सम्पूर्ण रकम का इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने की तारीख से तीन माह की अवधि के भीतर संदाय करें ।

रिट याचिका भागतः मंजूर की गई ।

क.

---

[1] (2011) 14 एस. सी. सी. 280.

[2] (2000) 10 एस. सी. सी. 196.

बिन्द्रा प्रसाद गौड़

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

तारीख 6 फरवरी, 2014

न्यायमूर्ति तरुन अग्रवाल और न्यायमूर्ति राजन राय

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 और 342 [सपठित संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967] – रिट – किसी भारतीय व्यक्ति की जाति का अवधारण करना – विधि और विहित प्रक्रिया का पालन नहीं करना – पारित आदेश मनमाना, शून्य और अविधिमान्य होने के नाते कायम रखे जाने योग्य नहीं होना – यदि किसी भारतीय व्यक्ति की जाति अवधारित करने में विधि और विहित प्रक्रिया का अनुपालन नहीं किया जाता है और मनमाने तरीके से उसकी जाति अवधारित की जाती है तो यह न केवल मनमाना, शून्य और अविधिमान्य होगा अपितु विधि में भी कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

वर्तमान मामले में, याची का पक्षकथन यह है कि वह ग्राम रायपुर, तहसील जखनिया, जिला गाजीपुर का मूल निवासी है । आरम्भतः उसे अनुसूचित जाति का मानते हुए तारीख 8 दिसम्बर, 1993 को जाति प्रमाणपत्र जारी किया गया था क्योंकि उस समय गौड़ जाति, अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित थी । वर्ष 2002 में राष्ट्रपति अनुसूचित जनजाति आदेश में एक संशोधन किया गया और गौड़ जाति को उत्तर प्रदेश राज्य में जिला गाजीपुर के लिए अन्य बातों के साथ अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर लिया गया । पूर्वोक्त संशोधन के पश्चात्, तारीख 17 जनवरी, 2004 को जिला गाजीपुर, उत्तर प्रदेश राज्य के सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को अनुसूचित जनजाति से संबंधित होने को सत्यापित करते हुए, जाति प्रमाणपत्र जारी किया गया । इसके पश्चात्, कृषि विभाग में चालक के पद पर नियुक्ति के लिए चयन प्रक्रिया आरम्भ हुई थी और याची स्वयं को अर्ह मानते हुए अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित संवर्ग के अधीन उस पद के लिए आवेदन किया । उसके तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र को सत्यापन के लिए तहसीलदार, जखनिया, जिला गाजीपुर के लिए भेजा गया, जिसने तारीख 19 नवम्बर,

2007 की रिपोर्ट द्वारा यह सूचित किया कि उक्त प्रमाणपत्र याची को जारी किया गया और यह कार्यालय के रजिस्टर में क्रम सं. 132 पर उल्लिखित है । तथापि, तत्पश्चात् यह प्रतीत होता है कि तहसीलदार जखनिया द्वारा एक प्रतिकूल रिपोर्ट यह भेजी गई थी कि गौड़ जाति पिछड़ी जाति संवर्ग में आती है । ऐसा होते हुए भी, याची अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित संवर्ग के अधीन तारीख 22 नवम्बर, 2007 को चालक के पद पर नियुक्त हुआ और उसके परिणामस्वरूप उसने तारीख 4 दिसम्बर, 2007 को ड्यूटी ग्रहण की । यह प्रतीत होता है कि उपर्युक्त निर्दिष्ट विरोधाभासी रिपोर्टों के कारण, याची के जाति प्रमाणपत्र की सत्यता के बारे में कतिपय प्रश्न उद्भूत हुए और अन्ततोगत्वा, तहसीलदार जखनिया ने तारीख 10 जनवरी, 2008 के अपने आदेश द्वारा उसे रद्द कर दिया, जिसे याची द्वारा 2008 की रिट याचिका सं. 14773, बिन्द्रा प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और उक्त रिट याचिका मंजूर कर ली गई थी और तारीख 10 जनवरी, 2008 के आदेश को अपास्त कर दिया गया था, इस आधार पर कि उसे याची को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना पारित किया गया था और प्राधिकारियों को विधि के अनुसरण में नए आदेश पारित करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई । इसके पश्चात्, याची ने अनुसूचित जाति का होने के अपने दावे के समर्थन में प्राधिकारियों के समक्ष सुसंगत दस्तावेज प्रस्तुत किए और सम्यक् अवसर प्रदान करने के पश्चात्, तहसीलदार ने अन्य बातों के साथ याची को जारी तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र को रद्द करते हुए पुनः तारीख 15 जनवरी, 2009 को एक आदेश पारित किया, इस आधार पर कि याची ने दस्तावेजों की मात्र फोटोस्टेट प्रतियां ही प्रस्तुत की हैं, उसने अपनी स्कूल शिक्षा के दौरान अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को उपलब्ध वजीफों का फायदा नहीं लिया था जिससे यह उपधारणा उद्भूत होती है कि वह उक्त संवर्ग में नहीं आता है, गौड़ जाति मिर्जापुर जिले के मात्र रैमूरगंज में ही निवास करती है और वास्तव में याची भड़भूजा जाति से संबंधित प्रतीत होता है जो एक पिछड़ी जाति है न कि अनुसूचित जनजाति है । याची ने तारीख 15 जनवरी, 2009 के पूर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए पुनः इस न्यायालय के समक्ष 2009 की रिट याचिका सं. 14108 फाइल की । यह रिट याचिका भी मंजूर कर ली गई इस मताभिव्यक्ति के साथ कि तहसीलदार जखनिया, संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 में किए गए वर्ष 2002 के संशोधन पर विचार करने में असफल रहा, जिसके अनुसार उत्तर प्रदेश राज्य में

जिला गाजीपुर के गौड़ जाति को अनुसूचित जनजाति की सूची में सम्मिलित कर लिया गया था, इसलिए, राज्य प्राधिकारी का आधार भ्रांतिपूर्ण है । इस न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया कि यद्यपि याची ने सुसंगत दस्तावेजों की मात्र फोटोस्टेट प्रतियां ही फाइल की थीं, फिर भी, राजस्व प्राधिकारी स्वयं अपने अभिलेखों से उन्हें सत्यापित कर सकते थे जो कि उसके पास अच्छी तरह उपलब्ध थे । तारीख 15 जनवरी, 2009 के आदेश को अभिखंडित करने के पश्चात् इस न्यायालय ने तहसीलदार को कठोरतः विधि के अनुसरण में समुचित आदेश पारित करने और समुचित विनिश्चय लेने की स्वतंत्रता प्रदान कर दी थी । इसके पश्चात्, याची ने प्राधिकारियों के समक्ष सुसंगत दस्तावेजें पुनः प्रस्तुत कीं । उसे सुनवाई का एक अवसर दिया गया था किन्तु तहसीलदार जखनिया द्वारा याची के जाति प्रमाणपत्र को रद्द करते हुए, तारीख 15 जुलाई, 2009 को एक आदेश पारित किया गया, इस नए आधार पर कि तारीख 8 दिसम्बर, 1993 का जाति प्रमाणपत्र, जाति प्रमाणपत्र के रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं था, तद्द्वारा यह उपधारणा की जा सकती है कि ऐसा जाति प्रमाणपत्र कूटरचित और बनावटी है । कोई अन्य विकल्प नहीं होने पर, याची ने पुनः इस न्यायालय के समक्ष तारीख 15 जुलाई, 2009 के पूर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए, 2009 की रिट याचिका सं. 42436 फाइल की और इस न्यायालय ने तारीख 9 अप्रैल, 2010 के अपने आदेश द्वारा याची को यह निर्देश दिया कि वह मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक आवेदन फाइल करे, इस निर्देश के साथ कि मुख्य सचिव याची के समुदाय की प्रकृति और प्रास्थिति को अवधारित करने के लिए गठित उच्च शक्ति समिति के पास मामले को निर्दिष्ट करे कि क्या वे अनुसूचित जनजाति के अधीन आते हैं या नहीं और याची तथा अन्य संबंधित पक्षकारों की सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् छह माह के भीतर विधि के अनुसरण में समुचित विनिश्चय लें । याची ने उपर्युक्त उल्लिखित निर्णय के अनुसरण में, तारीख 30 मई, 2010 को मुख्य सचिव के समक्ष एक आवेदन दिया किन्तु जाति संवीक्षा समिति द्वारा उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई, इस प्रकार, वह अवमानना कार्यवाहियां करने के लिए बाध्य हुआ । इससे व्यथित होकर याची ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की । न्यायालय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – संविधान, 1950 के अनुच्छेद 342(1) के अनुसार, राष्ट्रपति, किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में और जहां वह राज्य है

वहां उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् लोक अधिसूचना द्वारा, उन जनजातियों या जनजाति समुदायों अथवा जनजातियों या जनजाति समुदायों के भागों या उसमें के यूथों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, यथास्थिति, उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जनजातियां समझा जाएगा । उक्त अनुच्छेद के उपखंड (2) में यह उपबंधित है कि संसद्, विधि द्वारा, किसी जनजाति या जनजाति समुदाय को अथवा किसी जनजाति या जनजाति समुदाय के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन निकाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा । इस संबंध में, विधिक प्रास्थिति अत्यधिक सुस्थिर है कि न तो न्यायालयों द्वारा अथवा न ही कार्यपालिका द्वारा अनुच्छेद 342 में निर्दिष्ट सूची में अधिसूचित अनुसूचित जनजातियां अपवर्जित की जा सकती हैं न ही उसमें कोई जनजाति सम्मिलित की जा सकती है । निस्संदेह, संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 को वर्ष 2002 में संशोधित किया गया ताकि उत्तर प्रदेश राज्य में जिला गाजीपुर के लिए अन्य बातों के साथ गौड़ जनजाति को अनुसूचित जनजाति के रूप में सम्मिलित किया जा सके । इस प्रकार, इस तथ्य के बारे में, कोई विवाद नहीं है कि जिला गाजीपुर में गौड़ जनजाति, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 342 के अधीन एक अधिसूचित अनुसूचित जनजाति है । उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, विचार करने के लिए मात्र यह प्रश्न शेष रह जाता है कि क्या याची गौड़ जनजाति से संबंधित है या नहीं । कुमारी माधुरी पाटिल वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के जाति प्रास्थिति/जाति प्रमाणपत्र के सत्यापन के लिए प्रक्रिया अधिकथित की है । उक्त निर्णय के पैराग्राफ 13(5) में यह उपबंधित है कि प्रत्येक निदेशालय को दावों की सामाजिक प्रास्थिति का अन्वेषण करने के लिए एक सतर्कता प्रकोष्ठ गठित करना चाहिए जिसमें सभी प्रभारों सहित ज्येष्ठ पुलिस उपाधीक्षक और कुछ पुलिस निरीक्षक सम्मिलित हों । निरीक्षक को उस स्थानीय निवास स्थान और मूल स्थान पर जाना चाहिए जहां का अभ्यर्थी रहने वाला है और प्रायिक तौर पर निवास करता है अथवा यदि वह टाउन या शहर में प्रव्रजन कर गया है तो उस स्थान पर जाना चाहिए जहां से वह

मूल रूप से प्रव्रजन किया है । सतर्कता अधिकारी को अभ्यर्थी या माता-पिता या संरक्षक, जैसी भी दशा हो, द्वारा दावाकृत सामाजिक प्रास्थिति के सभी तथ्यों को एकत्रित करना चाहिए और उन्हें व्यक्तिगत तौर पर सत्यापित करना चाहिए । उसे उनकी जाति आदि से संबंधित माता-पिता, संरक्षक या अभ्यर्थी की भी परीक्षा करनी चाहिए अथवा ऐसे अन्य व्यक्तियों की भी परीक्षा करनी चाहिए जिन्हें अभ्यर्थी की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में जानकारी हो और उसके बाद, प्रोफार्मा में यथापरिकल्पित सभी विशिष्टियों, विशिष्टतया संबंधित जातियों या जनजातियों या जनजाति समुदायों द्वारा उनकी विशिष्ट मानवशास्त्रिय और जातिय विशेषताओं, देवताओं, धार्मिक अनुष्ठानों, प्रथाओं, विवाह की विधियों, मृत्यु अनुष्ठानों, शवों को दफनाने की विधियों आदि से संबंधित जानकारियों के साथ निदेशालय को रिपोर्ट करना चाहिए । उक्त निर्णय के पैराग्राफ 13(6) और 13(7) में यह भी उपबंधित है कि यदि संबंधित निदेशक सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट प्राप्त करने के पश्चात् अभ्यर्थी के सामाजिक प्रास्थिति के दावों को सही नहीं पाता है या संदेहपूर्ण या मिथ्या या गलत तौर पर दावाकृत पाता है तो वह अभ्यर्थी को उक्त रिपोर्ट के साथ कारण बताओ नोटिस जारी कर सकता है और उक्त निर्णय में यथाअनुध्यात कार्रवाई भी कर सकता है । तथापि, यदि रिपोर्ट अभ्यर्थी के पक्ष में पाता है और उसे असली और सत्य पाता है तो आगे किसी भी कार्रवाई की आवश्यकता नहीं रह जाती है । पूर्वोक्त उद्घोषणाओं के अनुपालन में, उत्तर प्रदेश सरकार ने तारीख 5 जनवरी, 1996 का एक शासकीय आदेश जारी किया जिसकी प्रतिलिपि रिट याचिका के उपाबंध 15 के रूप में संलग्न की गई है । उक्त शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(4) के अनुसार, उत्तर प्रदेश राज्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति कल्याण निदेशालय और पिछड़ी जाति कल्याण निदेशालय के अधीन एक सतर्कता प्रकोष्ठ गठित किया जाएगा जिसकी अध्यक्षता पुलिस अधीक्षक की श्रेणी का अधिकारी करेगा जिसमें अपेक्षित संख्या में पुलिस निरीक्षक सम्मिलित होंगे जो राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जाएंगे । शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(5) के अनुसार, सतर्कता प्रकोष्ठ के निरीक्षक अभ्यर्थी के मूल निवास स्थान या प्रायिक तौर पर निवास स्थान पर जाएंगे और उसे जारी जाति प्रमाणपत्र के बारे में जांच करेंगे और सत्यापित करेंगे और सुसंगत तथ्यों को एकत्रित करेंगे । शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(6) के अनुसार, यदि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट के अनुसार, जाति प्रमाणपत्र की सत्यवादिता सम्यक् रूप से

सत्यापित होती है और इसे सत्य पाया जाता है तो संबंधित निदेशक ऐसे जाति प्रमाणपत्र को अनुमोदित करेगा । तथापि, यदि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट में जाति प्रमाणपत्र सत्यापित नहीं होता है अर्थात् यह अभ्यर्थी के विरुद्ध पाया जाता है तो उक्त शासकीय आदेश में यथाविहित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा जोकि प्रायिक तौर पर कुमारी माधुरी पाटिल वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई उद्घोषणाओं में उल्लिखित है । (पैरा 20, 21 और 22)

वर्तमान मामले में, याची की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में सभी पूर्ववर्ती रिपोर्टें और विनिश्चय तहसीलदार की रिपोर्ट पर आधारित थे और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसरण में सतर्कता प्रकोष्ठ को निर्दिष्ट नहीं किया गया । इसे याची द्वारा फाइल 2009 की रिट याचिका सं. 42436 में पारित तारीख 9 अप्रैल, 2010 के निर्णय के पश्चात् ही मामले को सतर्कता प्रकोष्ठ को निर्दिष्ट किया गया था वह भी याची द्वारा अवमानना कार्यवाहियां आरम्भ करने के पश्चात् । तारीख 28 जुलाई, 2011 की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को याची द्वारा प्रत्युत्तर शपथपत्र में उपाबंध आर. ए. 1 के रूप में संलग्न किया गया है । उक्त रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि सतर्कता प्रकोष्ठ के अधिकारियों ने याची के मूल निवास स्थान का दौरा किया था और उन अन्य निवासियों के कथनों को भी अभिलिखित किया था जो याची की सामाजिक स्थिति के बारे में जानकारी रखते थे । इसके अलावा, एक गोपनीय जांच भी की गई थी जिसमें भी उस क्षेत्र के विभिन्न निवासियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । यह सभी कथन याची के इस पक्षकथन का समर्थन करते हैं कि गौड़ जनजाति से संबंधित है । आगे सतर्कता प्रकोष्ठ ने भी दोनों मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों का भी विश्लेषण किया । आगे, याची से संबंधित विद्यालय स्थानांतरण प्रमाणपत्र, जब वह कक्षा 5 में था, कुटुम्ब रजिस्टर, 1356एफ से संबंधित राजस्व अभिलेख पर भी विचार किया गया, इन सभी में भी यह उल्लिखित है कि याची, गौड़ जनजाति से संबंधित है । तारीख 28 जुलाई, 2011 की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को पिछड़े वर्ग कल्याण निदेशक द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और उसे मुख्य सचिव, समाज कल्याण और निदेशक, समाज कल्याण, लखनऊ को अग्रेषित कर दिया था, इस पृष्ठांकन के साथ ही यह स्वयं ही स्पष्टीकारक है । तारीख 28 जुलाई, 2011 का पत्र भी प्रत्युत्तर शपथपत्र में उपाबंध आर. ए. 1 के भाग के रूप में संलग्न है । इस प्रकार, सुस्पष्टतः,

निदेशक, सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट से असहमत नहीं था न ही वह इसे 'असली नहीं' या 'संदेहपूर्ण' या 'मिथ्या' या 'कपटपूर्वक' प्राप्त करने के रूप में पाया । इस प्रकार, कुमारी माधुरी पाटिल वाले मामले में की गई उद्घोषणा के पैराग्राफ 13(7) को ध्यान में रखते हुए, संभाव्यतः, आगे कोई कार्रवाई की जानी अपेक्षित नहीं थी अर्थात् अभ्यर्थी को अनुसूचित जनजाति से संबंधित माना गया था । तथापि, वर्तमान मामले में, यह प्रतीत होता है कि जब सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को जाति संवीक्षा समिति के समक्ष रखा गया तो उसने इससे असहमति जताई थी और मामले को सत्यापन के लिए जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता वाली जिला स्तर समिति को निर्दिष्ट कर दिया था । यद्यपि, कठोर शब्दों में कहा जाए तो इसे कुमारी माधुरी पाटिल वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा के अनुसार निर्दिष्ट किया गया नहीं कहा जा सकता है । किन्तु, यदि यह उपधारणा की जा सकती थी कि ऐसा करना अनुज्ञेय था, तो भी जाति संवीक्षा समिति द्वारा जाति प्रमाणपत्र रद्द करते हुए लिया गया पश्चात्वर्ती विनिश्चय कायम रखे जाने योग्य नहीं है । जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में जिला स्तर समिति को मामला निर्दिष्ट करने के पश्चात्, जाति संवीक्षा समिति ने ऐसी किसी रिपोर्ट का इंतजार किए बिना और ऐसी किसी रिपोर्ट को प्राप्त किए बिना हड़बड़ी में, संभाव्यतः इस न्यायालय में लम्बित अवमानना कार्यवाहियों के कारण विनिश्चय ले लिया । न्यायालय ने जाति संवीक्षा समिति के तारीख 28 दिसम्बर, 2012 के विनिश्चय का परिशीलन किया । यह प्रकट होता है कि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को इस एकमात्र कारण से नामंजूर कर दिया गया था कि यह मात्र मौखिक साक्ष्य पर आधारित था जो वस्तुतः गलत है । जैसा कि, न्यायालय ने पहले ही उल्लेख किया है सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट ने न केवल मौखिक साक्ष्यों पर चर्चा और विचार किया अपितु दस्तावेजी साक्ष्यों पर भी विचार किया था । इसके अतिरिक्त, कुमारी माधुरी पाटिल वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसार भी मौखिक साक्ष्य, आवश्यक रूप से उस क्षेत्र के व्यक्तियों से एकत्रित किया जाना चाहिए जो अभ्यर्थी के क्षेत्र में निवास करते हैं जिन्हें अभ्यर्थी की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में जानकारी हो । न्यायालय का यह भी निष्कर्ष है कि जाति संवीक्षा समिति अपनी ओर से यद्यपि उसके समक्ष याची द्वारा फाइल विभिन्न दस्तावेजी साक्ष्यों को भी निर्दिष्ट किया था फिर भी, उन पर विचार नहीं किया गया अपितु, मात्र दस्तावेजी साक्ष्य अर्थात् तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र पर ही विचार किया गया ।

अन्य दस्तावेजी साक्ष्यों अर्थात् कुटुम्ब रजिस्टर, प्राइमरी पाठशाला, क्याव, गाजीपुर द्वारा जारी विद्यालय स्थानांतरण प्रमाणपत्र और खतौनी 1356एफ, इन सभी में याची की जाति गौड़ उल्लिखित है जो एक अनुसूचित जनजाति है, की भी अवहेलना की है । इसके अतिरिक्त, जाति संवीक्षा समिति ने सतर्कता प्रकोष्ठ द्वारा अपनी रिपोर्ट में अभिलिखित विभिन्न मौखिक कथनों पर भी विचार नहीं किया । इस प्रकार, यह स्पष्टतः सिद्ध होता है कि जाति संवीक्षा समिति ने आक्षेपित विनिश्चय लेते समय सुसंगत सामग्रियों पर विचार नहीं किया । जहां तक तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र का संबंध है, यह उल्लेख करना सुसंगत है कि जाति संवीक्षा समिति के समक्ष विवादित विषयवस्तु तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र की सत्यवादिता थी, जिसके द्वारा याची को अनुसूचित जनजाति का घोषित किया गया था जबकि तारीख 8 दिसम्बर, 1993 की जाति प्रमाणपत्र पूर्व में जारी की गई थी जब गौड़ अनुसूचित जाति के रूप में थे । इसके अतिरिक्त, मात्र इस कारण से कि उक्त जाति प्रमाणपत्र का उल्लेख जाति प्रमाणपत्रों के रजिस्टर में नहीं पाया गया, यह स्वयमेव में ही यह निष्कर्ष निकालने के लिए आधार नहीं हो सकता है कि उक्त जाति प्रमाणपत्र कूटरचित या बनावटी है जब तक कि इसके बारे में सम्यक् और समुचित जांच करने के पश्चात् सुस्पष्टतः निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया जाता, किन्तु, ऐसी कोई जांच नहीं की गई थी न ही ऐसे किन्हीं रिपोर्टों में ऐसे निष्कर्ष अभिलिखित किए गए हैं । इसलिए, जाति संवीक्षा समिति द्वारा निकाले गए निष्कर्ष सुआधारित नहीं हैं और प्रतिकूल हैं । रजिस्टर में जाति प्रमाणपत्र की प्रविष्टि करने में लोप, सद्भाविक भूल हो सकती है या यह उपेक्षा के कारण हो सकता है या किसी अन्य कारणों से हो सकता है । इस प्रकार, पूर्ववर्ती तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र के अभिकथित बनावटी के मात्र आधार पर याची की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में, जाति संवीक्षा समिति द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कायम रखे जाने योग्य नहीं है । जाति संवीक्षा समिति मामले के सुसंगत पहलुओं पर विचार करने में असफल रही जिन पर वस्तुतः विचार किया जाना चाहिए था और सतर्कता प्रकोष्ठ द्वारा अपनी रिपोर्ट में किए गए विश्लेषणों पर विचार किया जाना चाहिए था, जिनके परिशीलन से इस बारे में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि याची वस्तुतः गौड़ जनजाति से संबंधित है जो जिला गाजीपुर, उत्तर प्रदेश राज्य में एक अनुसूचित जनजाति है । संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 को वर्ष 2002 में संशोधित किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है कि जाति संवीक्षा समिति द्वारा उसे भी नोट में नहीं

लिया गया और इस प्रकार, समिति का विनिश्चय विवेक नहीं लागू करने से भी ग्रसित है और इसलिए, इसे कायम नहीं रखा जाता है । (पैरा 23, 24, 25, 26 और 27)

इस प्रकार, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि जाति संवीक्षा समिति का विनिश्चय में अधिकथित उद्घोषणा और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसरण में नहीं है जबकि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट इसके अनुसरण में है और जाति संवीक्षा समिति द्वारा उक्त रिपोर्ट को नामंजूर करना अन्यायोचित था । जहां तक तारीख 10 जनवरी, 2008 के आदेश और तारीख 15 जुलाई, 2009 के विनिश्चय में उल्लिखित रिपोर्टों पर आधारित विद्वान् स्थायी काउंसेल की दलील का संबंध है, वे भी भ्रांतिपूर्ण हैं । जब एक बार तारीख 10 जनवरी, 2008 और तारीख 15 जनवरी, 2009 के पूर्ववर्ती विनिश्चयों को इस न्यायालय द्वारा तारीख 23 मई, 2008 और तारीख 15 जनवरी, 2009 के अपने निर्णय द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था तो इसमें उल्लिखित उक्त विनिश्चयों और रिपोर्टों की कोई सुसंगतता नहीं रह जाती है । आगे, जहां तक तारीख 15 जुलाई, 2009 के आदेश का संबंध है, उसे ही 2009 की रिट याचिका सं. 42436 में चुनौती दी गई है जिसमें मामले को, अधिकथित उद्घोषणाओं के प्रकाश में विचार करने के लिए उच्च शक्ति समिति को निर्दिष्ट कर दिया गया था । जैसा कि, न्यायालय पहले ही उल्लिखित कर चुका है, पूर्ववर्ती विनिश्चयों में अधिकथित उद्घोषणाओं और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश में विहित प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया था क्योंकि इसमें इस बारे में कुछ भी इंगित नहीं किया गया है कि मामले को, 2009 की रिट याचिका सं. 42436 फाइल करने के पूर्व जांच के लिए सतर्कता प्रकोष्ठ को कभी निर्दिष्ट किया गया था, न ही सतर्कता प्रकोष्ठ की ऐसी किसी रिपोर्ट पर पूर्ववर्ती विनिश्चयों में विचार किया गया था । इसलिए, इस कारण से भी सभी पूर्ववर्ती विनिश्चय और रिपोर्टें, याची की सामाजिक प्रास्थिति का अवधारण करने के लिए अर्थहीन हैं । न्यायालय इस तथ्य पर भी ध्यान दे सकता है कि याची, जो चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी है, ने अनुसूचित जनजाति के रूप में अपनी प्रास्थिति की घोषणा कराने के लिए बार-बार न्यायालय में याचिका फाइल की है । अधिकथित उद्घोषणा के पश्चात् भी जो तारीख 2 सितम्बर, 1994 को विनिश्चित हुआ था, में विरोधी पक्षकारों ने याची की सामाजिक प्रास्थिति का सत्यापन कराने के लिए इसमें उल्लिखित प्रक्रिया का पालन नहीं किया, बावजूद

इसके तहसीलदार ने एक या अन्य बहानों से याची का जाति प्रमाणपत्र रद्द कर दिया, जिसके परिमाणस्वरूप याची को कम-से-कम 5 बार इस न्यायालय में याचिका फाइल करनी पड़ी । इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2010 का निर्णय पारित करने के पश्चात् भी प्राधिकारियों ने तब तक कोई कार्रवाई नहीं की जब तक कि याची ने उनके विरुद्ध अवमानना कार्यवाहियां आरम्भ नहीं कर दीं । याची को इन मुकदमों के कारण मानसिक कष्ट और धन की हानि हुई । इसलिए, यह उचित मामला बनता है जहां प्रत्यर्थी सं. 1 पर समुचित खर्च का भार डाला जा सकता है । लम्बे मुकदमेबाजी पर विचार करते समय, विनिर्दिष्टतया इस तथ्य पर की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट कपटपूर्वक तरीके से अभिकथित तौर पर प्राप्त नहीं की गई थी, न्यायालय यह उचित नहीं समझता है कि मामले को वापस पुनः उन्हीं अधिकारियों को सौंप दें । चूंकि, न्यायालय ने जाति संवीक्षा समिति के आक्षेपित विनिश्चय को अभिखंडित कर दिया है, इसलिए, तारीख 17 जनवरी, 2004 को जारी याची का जाति प्रमाणपत्र बना रहेगा और याची गौड़ जाति से संबंधित होने के नाते अनुसूचित जनजाति के रूप में माना जाएगा । (पैरा 28, 29, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1995]	ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 94 : **कुमारी माधुरी पाटिल और एक अन्य** बनाम **अपर आयुक्त, जनजाति विकास और अन्य** ।	10,17,18,21 22,23,24,25 28,29,30

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2013 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 2252.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री निखिल कुमार

प्रत्यर्थियों की ओर से मुख्य स्थायी काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति राजन राय ने दिया ।

न्या. राय – यह याची की मुकदमेबाजी का पांचवां चक्र है जो उत्तर प्रदेश सरकार के कृषि विभाग में एक चालक है, जिसने अनुसूचित जनजाति व्यक्ति के रूप में अपनी प्रास्थिति को प्रतिस्थापित करने की ईप्सा की है ।

2. इस रिट याचिका के माध्यम से याची ने उच्च शक्ति जाति संवीक्षा समिति के विनिश्चय को चुनौती दी है, जिसने याची को जारी तारीख 17 जनवरी, 2004 की जाति प्रमाणपत्र को रद्द कर दिया है जिसके द्वारा उसे पूर्व में गौड़ जनजाति अर्थात् अनुसूचित जनजाति के रूप में माना गया था ।

3. याची का पक्षकथन यह है कि वह ग्राम रायपुर, तहसील जखनिया, जिला गाजीपुर का मूल निवासी है । आरम्भतः उसे अनुसूचित जाति का मानते हुए तारीख 8 दिसम्बर, 1993 को जाति प्रमाणपत्र जारी किया गया था क्योंकि उस समय गौड़ जाति, अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित थी । वर्ष 2002 में राष्ट्रपति अनुसूचित जनजाति आदेश में एक संशोधन किया गया और गौड़ जाति को उत्तर प्रदेश राज्य में जिला गाजीपुर के लिए अन्य बातों के साथ अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर लिया गया । पूर्वोक्त संशोधन के पश्चात्, तारीख 17 जनवरी, 2004 को जिला गाजीपुर, उत्तर प्रदेश राज्य के सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को अनुसूचित जनजाति से संबंधित होने को सत्यापित करते हुए, जाति प्रमाणपत्र जारी किया गया ।

4. इसके पश्चात्, कृषि विभाग में चालक के पद पर नियुक्ति के लिए चयन प्रक्रिया आरम्भ हुई थी और याची स्वयं को अर्ह मानते हुए अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित संवर्ग के अधीन उस पद के लिए आवेदन किया । उसके तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र को सत्यापन के लिए तहसीलदार, जखनिया, जिला गाजीपुर के लिए भेजा गया, जिसने तारीख 19 नवम्बर, 2007 की रिपोर्ट द्वारा यह सूचित किया कि उक्त प्रमाणपत्र याची को जारी किया गया और यह कार्यालय के रजिस्टर में क्रम सं. 132 पर उल्लिखित है ।

5. तथापि, तत्पश्चात् यह प्रतीत होता है कि तहसीलदार जखनिया द्वारा एक प्रतिकूल रिपोर्ट यह भेजी गई थी कि गौड़ जाति पिछड़ी जाति संवर्ग में आती है । ऐसा होते हुए भी, याची अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित संवर्ग के अधीन तारीख 22 नवम्बर, 2007 को चालक के पद पर नियुक्त हुआ और उसके परिणामस्वरूप उसने तारीख 4 दिसम्बर, 2007 को ड्यूटी ग्रहण की ।

6. यह प्रतीत होता है कि उपर्युक्त निर्दिष्ट विरोधाभासी रिपोर्टों के कारण, याची के जाति प्रमाणपत्र की सत्यता के बारे में कतिपय प्रश्न

उद्भूत हुए और अन्ततोगत्वा, तहसीलदार जखनिया ने तारीख 10 जनवरी, 2008 के अपने आदेश द्वारा उसे रद्द कर दिया, जिसे याची द्वारा 2008 की रिट याचिका सं. 14773, बिन्द्रा प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और उक्त रिट याचिका मंजूर कर ली गई थी और तारीख 10 जनवरी, 2008 के आदेश को अपास्त कर दिया गया था, इस आधार पर कि उसे याची को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना पारित किया गया था और प्राधिकारियों को विधि के अनुसरण में नए आदेश पारित करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई ।

7. इसके पश्चात्, याची ने अनुसूचित जाति का होने के अपने दावे के समर्थन में प्राधिकारियों के समक्ष सुसंगत दस्तावेज प्रस्तुत किए और सम्यक् अवसर प्रदान करने के पश्चात्, तहसीलदार ने अन्य बातों के साथ याची को जारी तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र को रद्द करते हुए पुनः तारीख 15 जनवरी, 2009 को एक आदेश पारित किया, इस आधार पर कि याची ने दस्तावेजों की मात्र फोटोस्टेट प्रतियां ही प्रस्तुत की हैं, उसने अपनी स्कूल शिक्षा के दौरान अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को उपलब्ध वजीफों का फायदा नहीं लिया था जिससे यह उपधारणा उद्भूत होती है कि वह उक्त संवर्ग में नहीं आता है, गौड़ जाति मिर्जापुर जिले के मात्र रैमूरगंज में ही निवास करती है और वास्तव में याची भड़भूजा जाति से संबंधित प्रतीत होता है जो एक पिछड़ी जाति है न कि अनुसूचित जनजाति है ।

8. याची ने तारीख 15 जनवरी, 2009 के पूर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए पुनः इस न्यायालय के समक्ष 2009 की रिट याचिका सं. 14108 फाइल की । यह रिट याचिका भी मंजूर कर ली गई इस मताभिव्यक्ति के साथ कि तहसीलदार जखनिया, संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 में किए गए वर्ष 2002 के संशोधन पर विचार करने में असफल रहा, जिसके अनुसार उत्तर प्रदेश राज्य में जिला गाजीपुर के गौड़ जाति को अनुसूचित जनजाति की सूची में सम्मिलित कर लिया गया था, इसलिए, राज्य प्राधिकारी का आधार भ्रांतिपूर्ण है । इस न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया कि यद्यपि याची ने सुसंगत दस्तावेजों की मात्र फोटोस्टेट प्रतियां ही फाइल की थीं, फिर भी, राजस्व प्राधिकारी स्वयं अपने अभिलेखों से उन्हें सत्यापित कर सकते थे जो कि उसके पास अच्छी तरह उपलब्ध थे । तारीख 15 जनवरी, 2009 के आदेश को अभिखंडित करने के पश्चात् इस न्यायालय ने तहसीलदार को कठोरतः विधि के अनुसरण में समुचित

आदेश पारित करने और समुचित विनिश्चय लेने की स्वतंत्रता प्रदान कर दी थी ।

9. इसके पश्चात्, याची ने प्राधिकारियों के समक्ष सुसंगत दस्तावेजें पुनः प्रस्तुत कीं । उसे सुनवाई का एक अवसर दिया गया था किन्तु तहसीलदार जखनिया द्वारा याची के जाति प्रमाणपत्र को रद्द करते हुए, तारीख 15 जुलाई, 2009 को एक आदेश पारित किया गया, इस नए आधार पर कि तारीख 8 दिसम्बर, 1993 का जाति प्रमाणपत्र, जाति प्रमाणपत्र के रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं था, तद्द्वारा यह उपधारणा की जा सकती है कि ऐसा जाति प्रमाणपत्र कूटरचित और बनावटी है ।

10. कोई अन्य विकल्प नहीं होने पर, याची ने पुनः इस न्यायालय के समक्ष तारीख 15 जुलाई, 2009 के पूर्वोक्त आदेश को चुनौती देते हुए, 2009 की रिट याचिका सं. 42436 फाइल की और इस न्यायालय ने तारीख 9 अप्रैल, 2010 के अपने आदेश द्वारा याची को यह निर्देश दिया कि वह मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक आवेदन फाइल करे, इस निर्देश के साथ कि मुख्य सचिव याची के समुदाय की प्रकृति और प्रास्थिति को अवधारित करने के लिए गठित उच्च शक्ति समिति के पास मामले को निर्दिष्ट करे कि क्या वे अनुसूचित जनजाति के अधीन आते हैं या नहीं और याची तथा अन्य संबंधित पक्षकारों की सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् छह माह के भीतर विधि के अनुसरण में समुचित विनिश्चय लें । इस न्यायालय ने **कुमारी माधुरी पाटिल और एक अन्य** बनाम **अपर आयुक्त, जनजाति विकास और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का भी उल्लेख किया । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उपर्युक्त निर्देश इसके प्रकाश में ही निर्दिष्ट किया गया था ।

11. याची ने उपर्युक्त उल्लिखित निर्णय के अनुसरण में, तारीख 30 मई, 2010 को मुख्य सचिव के समक्ष एक आवेदन दिया किन्तु जाति संवीक्षा समिति द्वारा उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई, इस प्रकार, वह अवमानना कार्यवाहियां करने के लिए बाध्य हुआ । इसके पश्चात् ही प्राधिकारी अपनी निद्रा से जागे और याची को तारीख 19 जनवरी, 2011 को जाति संवीक्षा समिति के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा । जाति संवीक्षा समिति ने इस बात की जांच करने के लिए मामले को सतर्कता

---

[1] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 94.

प्रकोष्ठ को मामला निर्दिष्ट कर दिया, जैसी कि **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की उद्घोषणा के अधीन अपेक्षित था ।

12. जांच करने के पश्चात्, सतर्कता प्रकोष्ठ ने तारीख 27 जुलाई, 2011 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, इस प्रभाव का कि याची गौड़ जनजाति से संबंधित है जो जिला गाजीपुर में अनुसूचित जनजाति के रूप में अधिसूचित है, इसलिए, याची को अनुसूचित जनजाति का जाति प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ।

13. यह प्रतीत होता है कि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट से जाति संवीक्षा समिति संतुष्ट नहीं थी, इसलिए, तारीख 7 सितम्बर, 2011 को उसने याची के दावों के बारे में जांच करने के लिए जिला मजिस्ट्रेट गाजीपुर को निर्देश दिया ।

14. याची ने 2011 की रिट याचिका सं. 56945 के माध्यम से जाति संवीक्षा समिति के इस आदेश को चुनौती दी जिसमें प्रति-शपथपत्र फाइल करने के लिए कहा गया और यह रिट याचिका अभी तक लम्बित है ।

15. यह प्रतीत होता है कि तारीख 7 नवम्बर, 2012 को सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट से जाति संवीक्षा समिति असहमत हुई थी और मामले को जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता के अधीन जिला स्तर समिति को निर्दिष्ट कर दिया किन्तु जिला स्तर समिति/जिला मजिस्ट्रेट से कोई रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई । इसके पश्चात्, तारीख 28 दिसम्बर, 2012 को जाति संवीक्षा समिति द्वारा एक विनिश्चय लिया गया, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि याची अनुसूचित जनजाति से संबंधित नहीं है और तद्नुसार, उसे जारी तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र को रद्द कर दिया । जाति संवीक्षा समिति के इस विनिश्चय को ही वर्तमान रिट याचिका में चुनौती दी गई है ।

16. हमने, याची के विद्वान् काउंसेल के साथ ही विरोधी पक्षकारों के विद्वान् स्थायी काउंसेल को भी सुना और मामले के अभिलेखों का भी परिशीलन किया ।

17. वर्तमान मामले में, हमारे विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या याची के जाति प्रमाणपत्र को रद्द करते हुए और यह अभिनिर्धारित करते हुए कि याची अनुसूचित जनजाति से संबंधित नहीं है, उच्च शक्ति जाति संवीक्षा समिति का आक्षेपित विनिश्चय, **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त)

वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की उद्घोषणा के प्रकाश में और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसरण में है या नहीं ।

18. याची ने यह निवेदन किया है कि आक्षेपित विनिश्चय द्वारा सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को गलत तौर पर नामंजूर किया गया है और यह **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की उद्घोषणाओं और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश की पुष्टि में नहीं है । जाति संवीक्षा समिति ने काल्पनिक तरीके से और बिना किसी आधार पर सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को नामंजूर किया है । इसने मामले के सुसंगत पहलुओं पर विचार नहीं किया । यह भी निवेदन किया गया कि आक्षेपित विनिश्चय में विवेक का प्रयोग नहीं किया गया है ।

19. दूसरी ओर, विरोधी पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि तारीख 10 जनवरी, 2008 के आदेश में निर्दिष्ट रिपोर्टों को इस न्यायालय द्वारा मात्र नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के आधार पर ही अपास्त किया जा सकता था, अपास्त नहीं किया गया है और तारीख 15 जुलाई, 2009 के विनिश्चय को भी अपास्त नहीं किया गया है जो याची के विरुद्ध है, इसलिए, वह अनुसूचित जनजाति से संबंधित माने जाने का हकदार नहीं है । उन्होंने यह भी दलील दी कि जाति संवीक्षा समिति ने मामले के सभी सुसंगत पहलुओं पर विचार किया है और विनिश्चय में कोई त्रुटि नहीं है जिसमें कि इस न्यायालय का हस्तक्षेप अपेक्षित है ।

20. संविधान, 1950 के अनुच्छेद 342(1) के अनुसार, राष्ट्रपति, किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में और जहां वह राज्य है वहां उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् लोक अधिसूचना द्वारा, उन जनजातियों या जनजाति समुदायों अथवा जनजातियों या जनजाति समुदायों के भागों या उसमें के यूथों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, यथास्थिति, उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जनजातियां समझा जाएगा । उक्त अनुच्छेद के उप खंड (2) में यह उपबंधित है कि संसद्, विधि द्वारा, किसी जनजाति या जनजाति समुदाय को अथवा किसी जनजाति या जनजाति समुदाय के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है उसके

सिवाय उक्त खंड के अधीन निकाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा । इस संबंध में, विधिक प्रास्थिति अत्यधिक सुस्थिर है कि न तो न्यायालयों द्वारा अथवा न ही कार्यपालिका द्वारा अनुच्छेद 342 में निर्दिष्ट सूची में अधिसूचित अनुसूचित जनजातियां अपवर्जित की जा सकती हैं न ही उसमें कोई जनजाति सम्मिलित की जा सकती है । निस्संदेह, संविधान (उत्तर प्रदेश), अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 को वर्ष 2002 में संशोधित किया गया ताकि उत्तर प्रदेश राज्य में जिला गाजीपुर के लिए अन्य बातों के साथ गौड़ जनजाति को अनुसूचित जनजाति के रूप में सम्मिलित किया जा सके । इस प्रकार, इस तथ्य के बारे में, कोई विवाद नहीं है कि जिला गाजीपुर में गौड़ जनजाति, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 342 के अधीन एक अधिसूचित अनुसूचित जनजाति है ।

21. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, विचार करने के लिए मात्र यह प्रश्न शेष रह जाता है कि क्या याची गौड़ जनजाति से संबंधित है या नहीं । **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के जाति प्रास्थिति/जाति प्रमाणपत्र के सत्यापन के लिए प्रक्रिया अधिकथित की है । उक्त निर्णय के पैराग्राफ 13(5) में यह उपबंधित है कि प्रत्येक निदेशालय को दावों की सामाजिक प्रास्थिति का अन्वेषण करने के लिए एक सतर्कता प्रकोष्ठ गठित करना चाहिए जिसमें सभी प्रभारों सहित ज्येष्ठ पुलिस उपाधीक्षक और कुछ पुलिस निरीक्षक सम्मिलित हों । निरीक्षक को उस स्थानीय निवास स्थान और मूल स्थान पर जाना चाहिए जहां का अभ्यर्थी रहने वाला है और प्रायिक तौर पर निवास करता है अथवा यदि वह टाउन या शहर में प्रव्रजन कर गया है तो उस स्थान पर जाना चाहिए जहां से वह मूल रूप से प्रव्रजन किया है । सतर्कता अधिकारी को अभ्यर्थी या माता-पिता या संरक्षक, जैसी भी दशा हो, द्वारा दावाकृत सामाजिक प्रास्थिति के सभी तथ्यों को एकत्रित करना चाहिए और उन्हें व्यक्तिगत तौर पर सत्यापित करना चाहिए । उसे उनकी जाति आदि से संबंधित माता-पिता, संरक्षक या अभ्यर्थी की भी परीक्षा करनी चाहिए अथवा ऐसे अन्य व्यक्तियों की भी परीक्षा करनी चाहिए जिन्हें अभ्यर्थी की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में जानकारी हो और उसके बाद, प्रोफार्मा में यथापरिकल्पित सभी विशिष्टियों, विशिष्टतया संबंधित जातियों या जनजातियों या जनजाति समुदायों द्वारा उनकी विशिष्ट मानवशास्त्रिय और जातिय विशेषताओं,

देवताओं, धार्मिक अनुष्ठानों, प्रथाओं, विवाह की विधियों, मृत्यु अनुष्ठानों, शवों को दफनाने की विधियों आदि से संबंधित जानकारियों के साथ निदेशालय को रिपोर्ट करना चाहिए । उक्त निर्णय के पैराग्राफ 13(6) और 13(7) में यह भी उपबंधित है कि यदि संबंधित निदेशक सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट प्राप्त करने के पश्चात् अभ्यर्थी के सामाजिक प्रास्थिति के दावों को सही नहीं पाता है या संदेहपूर्ण या मिथ्या या गलत तौर पर दावाकृत पाता है तो वह अभ्यर्थी को उक्त रिपोर्ट के साथ कारण बताओ नोटिस जारी कर सकता है और उक्त निर्णय में यथाअनुध्यात कार्रवाई भी कर सकता है । तथापि, यदि रिपोर्ट अभ्यर्थी के पक्ष में पाता है और उसे असली और सत्य पाता है तो आगे किसी भी कार्रवाई की आवश्यकता नहीं रह जाती है ।

22. पूर्वोक्त उद्घोषणाओं के अनुपालन में, उत्तर प्रदेश सरकार ने तारीख 5 जनवरी, 1996 का एक शासकीय आदेश जारी किया जिसकी प्रतिलिपि रिट याचिका के उपाबंध 15 के रूप में संलग्न की गई है । उक्त शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(4) के अनुसार, उत्तर प्रदेश अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति कल्याण निदेशालय और पिछड़ी जाति कल्याण निदेशालय के अधीन एक सतर्कता प्रकोष्ठ गठित किया जाएगा जिसकी अध्यक्षता पुलिस अधीक्षक की श्रेणी का अधिकारी करेगा जिसमें अपेक्षित संख्या में पुलिस निरीक्षक सम्मिलित होंगे जो राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जाएंगे । शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(5) के अनुसार, सतर्कता प्रकोष्ठ के निरीक्षक अभ्यर्थी के मूल निवास स्थान या प्रायिक तौर पर निवास स्थान पर जाएंगे और उसे जारी जाति प्रमाणपत्र के बारे में जांच करेंगे और सत्यापित करेंगे और सुसंगत तथ्यों को एकत्रित करेंगे । शासकीय आदेश के पैराग्राफ 2(6) के अनुसार, यदि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट के अनुसार, जाति प्रमाणपत्र की सत्यवादिता सम्यक् रूप से सत्यापित होती है और इसे सत्य पाया जाता है तो संबंधित निदेशक ऐसे जाति प्रमाणपत्र को अनुमोदित करेगा । तथापि, यदि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट में जाति प्रमाणपत्र सत्यापित नहीं होता है अर्थात् यह अभ्यर्थी के विरुद्ध पाया जाता है तो उक्त शासकीय आदेश में यथाविहित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा जो कि प्रायिक तौर पर **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई उद्घोषणाओं में उल्लिखित है ।

23. वर्तमान मामले में, याची की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में सभी

पूर्ववर्ती रिपोर्टें और विनिश्चय तहसीलदार की रिपोर्ट पर आधारित थे और मामले को कभी भी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में की गई उद्घोषणाओं और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसरण में सतर्कता प्रकोष्ठ को निर्दिष्ट नहीं किया गया । इसे याची द्वारा फाइल 2009 की रिट याचिका सं. 42436 में पारित तारीख 9 अप्रैल, 2010 के निर्णय के पश्चात् ही मामले को सतर्कता प्रकोष्ठ को निर्दिष्ट किया गया था वह भी याची द्वारा अवमानना कार्यवाहियां आरम्भ करने के पश्चात् । तारीख 28 जुलाई, 2011 की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को याची द्वारा प्रत्युत्तर शपथपत्र में उपाबंध आर. ए. 1 के रूप में संलग्न किया गया है । उक्त रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि सतर्कता प्रकोष्ठ के अधिकारियों ने याची के मूल निवास स्थान का दौरा किया था और उन अन्य निवासियों के कथनों को भी अभिलिखित किया था जो याची की सामाजिक स्थिति के बारे में जानकारी रखते थे । इसके अलावा, एक गोपनीय जांच भी की गई थी जिसमें भी उस क्षेत्र के विभिन्न निवासियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । यह सभी कथन याची के इस पक्षकथन का समर्थन करते हैं कि गौड़ जनजाति से संबंधित है । आगे सतर्कता प्रकोष्ठ ने भी दोनों मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों का भी विश्लेषण किया । आगे, याची से संबंधित विद्यालय स्थानांतरण प्रमाणपत्र, जब वह कक्षा 5 में था, कुटुम्ब रजिस्टर, 1356एफ से संबंधित राजस्व अभिलेख पर भी विचार किया गया, इन सभी में भी यह उल्लिखित है कि याची, गौड़ जनजाति से संबंधित है । तारीख 28 जुलाई, 2011 की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को पिछड़े वर्ग कल्याण निदेशक द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और उसे मुख्य सचिव, समाज कल्याण और निदेशक, समाज कल्याण, लखनऊ को अग्रेषित कर दिया था, इस पृष्ठांकन के साथ ही यह स्वयं ही स्पष्टीकारक है । तारीख 28 जुलाई, 2011 का पत्र भी प्रत्युत्तर शपथपत्र में उपाबंध आर. ए. 1 के भाग के रूप में संलग्न है । इस प्रकार, सुस्पष्टतः, निदेशक, सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट से असहमत नहीं था न ही वह इसे 'असली नहीं' या 'संदेहपूर्ण' या 'मिथ्या' या 'कपटपूर्वक' प्राप्त करने के रूप में पाया । इस प्रकार, **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में की गई उद्घोषणा के पैराग्राफ 13(7) को ध्यान में रखते हुए, संभाव्यतः, आगे कोई कार्रवाई की जानी अपेक्षित नहीं थी अर्थात् अभ्यर्थी को अनुसूचित जनजाति से संबंधित माना गया था ।

24. तथापि, वर्तमान मामले में, यह प्रतीत होता है कि जब सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को जाति संवीक्षा समिति के समक्ष रखा गया तो उसने इससे असहमति जताई थी और मामले को सत्यापन के लिए जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता वाली जिला स्तर समिति को निर्दिष्ट कर दिया था । यद्यपि, कठोर शब्दों में कहा जाए तो इसे **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा के अनुसार निर्दिष्ट किया गया नहीं कहा जा सकता है । किन्तु, यदि यह उपधारणा की जा सकती थी कि ऐसा करना अनुज्ञेय था, तो भी जाति संवीक्षा समिति द्वारा जाति प्रमाणपत्र रद्द करते हुए लिया गया पश्चात्वर्ती विनिश्चय कायम रखे जाने योग्य नहीं है । जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में जिला स्तर समिति को मामला निर्दिष्ट करने के पश्चात्, जाति संवीक्षा समिति ने ऐसी किसी रिपोर्ट का इंतजार किए बिना और ऐसी किसी रिपोर्ट को प्राप्त किए बिना हड़बड़ी में, संभाव्यतः इस न्यायालय में लम्बित अवमानना कार्यवाहियों के कारण विनिश्चय ले लिया ।

25. हमने, जाति संवीक्षा समिति के तारीख 28 दिसम्बर, 2012 के विनिश्चय का परिशीलन किया । यह प्रकट होता है कि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट को इस एकमात्र कारण से नामंजूर कर दिया गया था कि यह मात्र मौखिक साक्ष्य पर आधारित था जो वस्तुतः गलत है । जैसा कि, हमने पहले ही उल्लेख किया है सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट ने न केवल मौखिक साक्ष्यों पर चर्चा और विचार किया अपितु दस्तावेजी साक्ष्यों पर भी विचार किया था । इसके अतिरिक्त, **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसार भी मौखिक साक्ष्य, आवश्यक रूप से उस क्षेत्र के व्यक्तियों से एकत्रित किया जाना चाहिए जो अभ्यर्थी के क्षेत्र में निवास करते हैं जिन्हें अभ्यर्थी की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में जानकारी हो । हमारा यह भी निष्कर्ष है कि जाति संवीक्षा समिति अपनी ओर से यद्यपि उसके समक्ष याची द्वारा फाइल विभिन्न दस्तावेजी साक्ष्यों को भी निर्दिष्ट किया था फिर भी, उन पर विचार नहीं किया गया अपितु, मात्र दस्तावेजी साक्ष्य अर्थात् तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र पर ही विचार किया गया । अन्य दस्तावेजी साक्ष्यों अर्थात् कुटुम्ब रजिस्टर, प्राइमरी पाठशाला, क्याव, गाजीपुर द्वारा जारी विद्यालय स्थानांतरण प्रमाणपत्र और खतौनी 1356एफ, इन सभी में याची की जाति गौड़ उल्लिखित है जो एक अनुसूचित जनजाति है, की भी अवहेलना की है । इसके अतिरिक्त, जाति

संवीक्षा समिति ने सतर्कता प्रकोष्ठ द्वारा अपनी रिपोर्ट में अभिलिखित विभिन्न मौखिक कथनों पर भी विचार नहीं किया । इस प्रकार, यह स्पष्टतः सिद्ध होता है कि जाति संवीक्षा समिति ने आक्षेपित विनिश्चय लेते समय सुसंगत सामग्रियों पर विचार नहीं किया ।

26. जहां तक तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र का संबंध है, यह उल्लेख करना सुसंगत है कि जाति संवीक्षा समिति के समक्ष विवादित विषयवस्तु तारीख 17 जनवरी, 2004 के जाति प्रमाणपत्र की सत्यवादिता थी, जिसके द्वारा याची को अनुसूचित जनजाति का घोषित किया गया था जबकि तारीख 8 दिसम्बर, 1993 की जाति प्रमाणपत्र पूर्व में जारी की गई थी जब गौड़ अनुसूचित जाति के रूप में थे । इसके अतिरिक्त, मात्र इस कारण से कि उक्त जाति प्रमाणपत्र का उल्लेख जाति प्रमाणपत्रों के रजिस्टर में नहीं पाया गया, यह स्वयमेव में ही यह निष्कर्ष निकालने के लिए आधार नहीं हो सकता है कि उक्त जाति प्रमाणपत्र कूटरचित या बनावटी है जब तक कि इसके बारे में सम्यक् और समुचित जांच करने के पश्चात् सुस्पष्टतः निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया जाता, किन्तु, ऐसी कोई जांच नहीं की गई थी न ही ऐसे किन्हीं रिपोर्टों में ऐसे निष्कर्ष अभिलिखित किए गए हैं । इसलिए, जाति संवीक्षा समिति द्वारा निकाले गए निष्कर्ष सुआधारित नहीं हैं और प्रतिकूल हैं । रजिस्टर में जाति प्रमाणपत्र की प्रविष्टि करने में लोप, सद्भाविक भूल हो सकती है या यह उपेक्षा के कारण हो सकता है या किसी अन्य कारणों से हो सकता है । इस प्रकार, पूर्ववर्ती तारीख 8 दिसम्बर, 1993 के जाति प्रमाणपत्र के अभिकथित बनावटी के मात्र आधार पर याची की सामाजिक प्रास्थिति के बारे में, जाति संवीक्षा समिति द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कायम रखे जाने योग्य नहीं है । जाति संवीक्षा समिति मामले के सुसंगत पहलुओं पर विचार करने में असफल रही जिन पर वस्तुतः विचार किया जाना चाहिए था और सतर्कता प्रकोष्ठ द्वारा अपनी रिपोर्ट में किए गए विश्लेषणों पर विचार किया जाना चाहिए था, जिनके परिशीलन से इस बारे में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि याची वस्तुतः गौड़ जनजाति से संबंधित है जो जिला गाजीपुर, उत्तर प्रदेश राज्य में एक अनुसूचित जनजाति है ।

27. संविधान (उत्तर प्रदेश) अनुसूचित जनजाति आदेश, 1967 को वर्ष 2002 में संशोधित किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है कि जाति संवीक्षा समिति द्वारा उसे भी नोट में नहीं लिया गया और इस प्रकार, समिति का विनिश्चय विवेक नहीं लागू करने से भी ग्रसित है और इसलिए,

इसे कायम नहीं रखा जाता है ।

28. इस प्रकार, हमारा यह निष्कर्ष है कि जाति संवीक्षा समिति का विनिश्चय, **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश के अनुसरण में नहीं है जबकि सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट इसके अनुसरण में है और जाति संवीक्षा समिति द्वारा उक्त रिपोर्ट को नामंजूर करना अन्यायोचित था ।

29. जहां तक तारीख 10 जनवरी, 2008 के आदेश और तारीख 15 जुलाई, 2009 के विनिश्चय में उल्लिखित रिपोर्टों पर आधारित विद्वान् स्थायी काउंसेल की दलील का संबंध है, वे भी भ्रांतिपूर्ण हैं । जब एक बार तारीख 10 जनवरी, 2008 और तारीख 15 जनवरी, 2009 के पूर्ववर्ती विनिश्चयों को इस न्यायालय द्वारा तारीख 23 मई, 2008 और तारीख 15 जनवरी, 2009 के अपने निर्णय द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था तो इसमें उल्लिखित उक्त विनिश्चयों और रिपोर्टों की कोई सुसंगतता नहीं रह जाती है । आगे, जहां तक तारीख 15 जुलाई, 2009 के आदेश का संबंध है, उसे ही 2009 की रिट याचिका सं. 42436 में चुनौती दी गई है जिसमें मामले को, **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणाओं के प्रकाश में विचार करने के लिए उच्च शक्ति समिति को निर्दिष्ट कर दिया गया था । जैसा कि, हम पहले ही उल्लिखित कर चुके हैं, पूर्ववर्ती विनिश्चयों में **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणाओं और तारीख 5 जनवरी, 1996 के शासकीय आदेश में विहित प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया था क्योंकि इसमें इस बारे में कुछ भी इंगित नहीं किया गया है कि मामले को, 2009 की रिट याचिका सं. 42436 फाइल करने के पूर्व जांच के लिए सतर्कता प्रकोष्ठ को कभी निर्दिष्ट किया गया था, न ही सतर्कता प्रकोष्ठ की ऐसी किसी रिपोर्ट पर पूर्ववर्ती विनिश्चयों में विचार किया गया था । इसलिए, इस कारण से भी सभी पूर्ववर्ती विनिश्चय और रिपोर्टें, याची की सामाजिक प्रास्थिति का अवधारण करने के लिए अर्थहीन हैं ।

30. हम, इस तथ्य पर भी ध्यान दे सकते हैं कि याची, जो चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी है, ने अनुसूचित जनजाति के रूप में अपनी प्रास्थिति की घोषणा कराने के लिए बार-बार न्यायालय में याचिका फाइल की है । **कुमारी माधुरी पाटिल** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित उद्घोषणा के पश्चात् भी जो तारीख 2 सितम्बर, 1994 को विनिश्चित हुआ था, में

विरोधी पक्षकारों ने याची की सामाजिक प्रास्थिति का सत्यापन कराने के लिए इसमें उल्लिखित प्रक्रिया का पालन नहीं किया, बावजूद इसके तहसीलदार ने एक या अन्य बहानों से याची का जाति प्रमाणपत्र रद्द कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप याची को कम-से-कम 5 बार इस न्यायालय में याचिका फाइल करनी पड़ी । इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2010 का निर्णय पारित करने के पश्चात् भी प्राधिकारियों ने तब तक कोई कार्रवाई नहीं की जब तक कि याची ने उनके विरुद्ध अवमानना कार्यवाहियां आरम्भ नहीं कर दीं । याची को इन मुकदमों के कारण मानसिक कष्ट और धन की हानि हुई । इसलिए, यह उचित मामला बनता है जहां प्रत्यर्थी सं. 1 पर समुचित खर्च का भार डाला जा सकता है ।

31. लम्बे मुकदमेबाजी पर विचार करते समय, विनिर्दिष्टतया इस तथ्य पर की सतर्कता प्रकोष्ठ की रिपोर्ट कपटपूर्वक तरीके से अभिकथित तौर पर प्राप्त नहीं की गई थी, हम, यह उचित नहीं समझते हैं कि मामले को वापस पुनः उन्हीं अधिकारियों को सौंप दें । चूंकि, हमने जाति संवीक्षा समिति के आक्षेपित विनिश्चय को अभिखंडित कर दिया है, इसलिए, तारीख 17 जनवरी, 2004 को जारी याची का जाति प्रमाणपत्र बना रहेगा और याची गौड़ जाति से संबंधित होने के नाते अनुसूचित जनजाति के रूप में माना जाएगा ।

32. पूर्वोक्त कथित कारणों से, जाति संवीक्षा समिति की तारीख 28 दिसम्बर, 2012 का आक्षेपित आदेश कायम नहीं रखा जा सकता है और इसे अभिखंडित किया जाता है ।

33. रिट याचिका खर्चों सहित मंजूर की जाती है ।

34. प्रत्यर्थी सं. 1, इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने की तारीख से चार सप्ताह के भीतर इस कष्टप्रद मुकदमेबाजी के लिए याची को कुल 25,000/- रुपए का संदाय करेगा ।

रिट याचिका मंजूर की जाती है ।

क.

कनक बाला मंडल (श्रीमती) और अन्य

बनाम

श्रीमती अंजलि करमाकर

तारीख 4 सितंबर, 2014

न्यायमूर्ति आर. के. बाग

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 227 [सपठित उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68) – धारा 21(ख)] – उच्च न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता – प्रयोग – गलती से उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल करने के कारण जिला उपभोक्ता अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील फाइल करने में असाधारण विलंब – विलंब की माफी के लिए आवेदन – राज्य उपभोक्ता आयोग द्वारा आवेदन खारिज किया जाना – अनुच्छेद 227 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन – उच्च न्यायालय ऐसे किसी मामले में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 21(ख) के अधीन उपचार उपलब्ध होते हुए भी अपनी अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग करके हस्तक्षेप कर सकता है ।

भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन यह पुनरीक्षण आवेदन याची/अपीलार्थियों द्वारा राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल द्वारा 2013 के एफ. ए. सं. 353 में तारीख 2 अगस्त, 2013 को पारित उस आदेश के विरुद्ध फाइल किया गया है, जिसके द्वारा राज्य आयोग ने उस अपील में, जो 2010 के सी. सी. मामला सं. 290 में जिला उपभोक्ता विवाद प्रतितोष फोरम, उत्तरी 24-परगना द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध फाइल की गई थी, विलंब माफी के लिए याचियों के पुनरीक्षण आवेदन को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग इस तथ्य पर विचार नहीं कर सकता कि याचियों ने जिला अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील फाइल किए बिना इस न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण पेश करने के लिए गलत मंच का चुनाव किया है और तद्द्वारा जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध राज्य आयोग के समक्ष अपील फाइल करने के लिए असाधारण विलंब हुआ है । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि राज्य आयोग विधि द्वारा प्रदत्त

अधिकारिता का प्रयोग करने में विफल रहा है और इसलिए यह न्यायालय उस दशा में भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है, जहां याचियों ने राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 21(ख) के अधीन राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनरीक्षण पेश न किया हो । तथापि, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा 2012 के सी. ओ. सं. 2758 में तारीख 21 मार्च, 2013 को पारित निर्णय पर विचार करने के पश्चात् न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग के उस आदेश को अपास्त करने के लिए भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग किया है, जिसके द्वारा अपील पेश करने में विलंब की माफी के लिए आवेदन को खारिज किया गया था । चूंकि जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध अपील पेश करने में विलंब हुआ क्योंकि याचियों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण के लिए गलत मंच का उपयोग किया गया और चूंकि राज्य आयोग ने याचियों की विलंब की माफी के लिए आवेदन को खारिज करने के समय इस तथ्य को विचार में नहीं लिया, इसलिए न्यायालय भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग कर रहा है, बावजूद इसके कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 21(ख) के अधीन उक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन फाइल करने का वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है । न्यायालय द्वारा निकाले गए उपर्युक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल द्वारा 2013 की प्रथम अपील सं. 353 में तारीख 2 अगस्त, 2013 को पारित आदेश अपास्त किया जाता है । पुनरीक्षण आवेदन का निपटान किया जाता है । अन्तरिम आदेश यदि कोई हो, रद्द किया जाता है । (पैरा 3, 5 और 6)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	2009 (2) सी. एल. जे. (कलकत्ता) 685 : **प्रबंधक, बर्दवान सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक लिमिटेड** बनाम **अनाथ बंधु धारा** ।	4, 5

प्रारंभिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2013 की सी. ओ. सं. 2968.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन सिविल पुनरीक्षण आवेदन ।

याची की ओर से	सर्वश्री सृजन नायक, बिदयुत बारन बिस्वास, अरिन्दम मित्रा और बिस्वाजीत बिस्वास
विरोधी पक्षकारों की ओर से	सर्वश्री दिलीप कुमार मैती और उत्तम कुमार कमिला

न्यायमूर्ति आर. के. बाग – भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन यह पुनरीक्षण आवेदन याची/अपीलार्थियों द्वारा राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल द्वारा 2013 के एफ. ए. सं. 353 में तारीख 2 अगस्त, 2013 को पारित उस आदेश के विरुद्ध फाइल किया गया है जिसके द्वारा राज्य आयोग ने उस अपील में, जो 2010 के सी. सी. मामला सं. 290 में जिला उपभोक्ता विवाद प्रतितोष फोरम, उत्तरी 24-परगना द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध फाइल की गई थी, विलंब माफी के लिए याचियों के आवेदन को खारिज किया है ।

2. आज याचियों की ओर से अनुपूरक शपथपत्र फाइल किया गया जो अभिलेख पर रखा गया । अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह प्रतीत होता है कि याचियों ने इस न्यायालय के समक्ष 2014 का सी. ओ. सं. 3714 सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल करके जिला उपभोक्ता विवाद प्रतितोष फोरम, उत्तरी 24-परगना के आदेश को चुनौती दी थी । उक्त सिविल पुनरीक्षण का निपटारा तारीख 15 जनवरी, 2013 को याचियों को यह स्वतंत्रता देते हुए कर दिया गया था कि वे जिला अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील फाइल कर सकते हैं । तद्नुसार, याचियों ने राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल के समक्ष 2013 की एफ. ए. सं. 353 फाइल की थी जिसमें उन्होंने उक्त अपील पेश करने में हुए 75 दिन के विलंब की माफी के लिए आवेदन भी फाइल किया था । तथापि, राज्य आयोग ने दोनों पक्षकारों को सुनने के पश्चात् इस आधार पर विलंब माफी के लिए आवेदन खारिज कर दिया कि याचियों/अपीलार्थियों द्वारा फाइल किए गए आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और उक्त अपील को पेश करने में असाधारण विलंब के लिए कोई विनिर्दिष्ट कारण मौजूद नहीं है । राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग के उक्त आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई ।

3. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय के एक अप्रकाशित निर्णय का, जो 2012 के सी. ओ. सं. 2758 में तारीख 21 मार्च, 2013 को विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किया गया था, अवलंब लेते हुए

यह दलील दी है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग अधिकरण को विधि की सीमाओं के भीतर लाने के लिए किया जा सकता है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग ने इस तथ्य पर विचार नहीं किया कि याचियों ने जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध अपील फाइल किए बिना इस न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण पेश करके गलत फोरम का चुनाव किया है और तद्द्वारा जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध राज्य आयोग के समक्ष अपील फाइल करने के लिए असाधारण विलंब हुआ है । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि राज्य आयोग विधि द्वारा प्रदत्त अधिकारिता का प्रयोग करने में विफल रहा है और इसलिए यह न्यायालय उस दशा में भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है, जहां याचियों ने राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 21(ख) के अधीन राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनरीक्षण पेश न किया हो ।

4. इसके प्रतिकूल, विरोधी पक्षकार के विद्वान् काउंसेल ने "**प्रबंधक, बर्दवान सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक लिमिटेड** बनाम **अनाथ बंधु धारा**[1]" वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि यह न्यायालय ऐसे याची को अनुतोष मंजूर करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग नहीं करेगा जिसके पास उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 21(ख) के अधीन राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण फाइल करने का उपचार उपलब्ध हो ।

5. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् और अभिलेख पर की सामग्री पर विचार करने के पश्चात्, मेरा यह मत है कि इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा "**प्रबंधक, बर्दवान सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक लिमिटेड** बनाम **अनाथ बंधु धारा**[1]" वाले मामले में दिया गया निर्णय राज्य आयोग के ऐसे आदेश से संबंधित था जिसका विनिश्चय गुण-दोष के आधार पर किया गया था और इसलिए उक्त आदेश अपील का आदेश है । वर्तमान मामले में, राज्य आयोग ने विलंब की माफी के लिए आवेदन खारिज कर दिया है और तद्द्वारा याचियों को जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध अपील पेश करने से वंचित किया गया है । तद्नुसार विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा "**प्रबंधक, बर्दवान**

---

[1] 2009 (2) सी. एल. जे. (कलकत्ता) 685.

सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक लिमिटेड बनाम **अनाथ बंधु धारा**[1]" वाले मामले में अभिव्यक्त मत को वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं किया जा सकता । तथापि, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा 2012 के सी. ओ. सं. 2758 में तारीख 21 मार्च, 2013 को पारित निर्णय पर विचार करने के पश्चात् मुझे यह प्रतीत होता है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग के उस आदेश को अपास्त करने के लिए भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग किया है, जिसके द्वारा अपील पेश करने में विलंब की माफी के लिए आवेदन को खारिज किया गया था । चूंकि जिला फोरम के आदेश के विरुद्ध अपील पेश करने में विलंब हुआ क्योंकि याचियों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण के लिए गलत फोरम का उपयोग किया गया और चूंकि राज्य आयोग ने याचियों की विलंब की माफी के लिए आवेदन को खारिज करने के समय इस तथ्य को विचार में नहीं लिया, इसलिए मैं भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय की अधीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग कर रहा हूं, बावजूद इसके कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 21(ख) के अधीन उक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण फाइल करने का वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है ।

6. मेरे द्वारा निकाले गए उपर्युक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल द्वारा 2013 की प्रथम अपील सं. 353 में तारीख 2 अगस्त, 2013 को पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । पुनरीक्षण आवेदन का निपटान किया जाता है । अन्तरिम आदेश, यदि कोई हो, रद्द किया जाता है ।

7. विभाग को यह निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय की एक प्रति राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, पश्चिमी बंगाल को सूचना के लिए और आवश्यक कार्रवाई करने के लिए भेजी जाए ।

8. विभाग को यह भी निदेश दिया जाता है कि वह सभी आवश्यक औपचारिकताओं का अनुपालन करने के पश्चात् आवेदन करने पर पक्षकारों को इस आदेश की प्रमाणित फोटो प्रतिलिपि अतिशीघ्र उपलब्ध कराए ।

पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

पु./क.

---

[1] 2009 (2) सी. एल. जे. (कलकत्ता) 685.

सुप्यार कंवर (श्रीमती) और अन्य*

बनाम

प्यारे लाल और अन्य

तारीख 8 अक्तूबर, 2014

न्यायमूर्ति प्रशान्त कुमार अग्रवाल

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 166क तथा धारा 173 – यान दुर्घटना – क्षतिपूर्ति का दावा – क्षतिपूर्ति का अवधारण – अविवाहित मृतक की आयु – उसकी मासिक आय – आश्रितों की प्रास्थिति – यदि यान दुर्घटना में कारित क्षतियों के लिए क्षतिपूर्ति अवधारित करते समय अविवाहित मृतक की आयु, उसकी मासिक आय, आश्रितों की प्रास्थिति आदि तथा उस समय के अन्य सुसंगत तथ्यों को ध्यान में रखा जाता है तो इस प्रकार अवधारित क्षतिपूर्ति को अल्प या अयुक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता है तथा ऐसी क्षतिपूर्ति न्यायसंगत, क्षति के अनुरूप, युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी अन्यथा नहीं ।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थीगण-दावेदारों के 22 वर्षीय पुत्र की मृत्यु मोटर दुर्घटना के फलस्वरूप दिनांक 21 जून, 1999 को सायं लगभग पौने 6 बजे उस समय हुई जब वह किसी मोटरसाइकिल के पीछे बैठकर नवलगढ़ से सीकर की ओर जा रहा था तथा प्रत्यर्थी श्री प्यारे लाल ने अपने वाहन ट्रक पंजीकरण संख्या आर जे 18जी 1192 को तेज गति, गफलत व लापरवाही से चलाकर उक्त मोटरसाइकिल को टक्कर मारी । अपीलार्थी-दावेदार श्रीमती सुप्यार कंवर ने अपनी आयु 50 वर्ष तथा अपीलार्थी-दावेदार श्री डूंगर सिंह ने अपनी आयु 60 वर्ष होना प्रकट कर क्षतिपूर्ति राशि प्राप्त करने हेतु क्लेम याचिका मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन दिनांक 31 जुलाई, 1999 को विद्वान् न्यायाधिकरण के समक्ष इन कथनों के साथ प्रस्तुत की कि दुर्घटना एवं अपनी मृत्यु के समय उनका पुत्र मृतक श्री सम्पत सिंह पढ़ाई करता था तथा ट्यूशन पढ़ाने का कार्य कर प्रतिमाह 5 हजार रुपए की आय अर्जित कर रहा था । याचिका में यह भी कथन किया गया कि मृतक पढ़ाई के ट्यूशन के

---

* मूल निर्णय हिन्दी में है ।

अलावा कृषि कार्य में भी अपने माता-पिता का सहयोग करता था तथा कृषि कार्य से उसे लगभग 4 हजार रुपए प्रतिमाह आय अर्जित होती थी । अपीलार्थीगण-दावेदारों ने विभिन्न मदों में कुल 29 लाख 13 हजार रुपए क्षतिपूर्ति राशि के रूप में मांग की तथा इस पर 18 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज़ दिलाए जाने का भी निवेदन किया । प्रत्यार्थीगण ने विद्वान् न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित होकर प्रति उत्तर प्रस्तुत किए तथा क्षतिपूर्ति राशि के रूप में मांगी गई उक्त राशि के लिए कथन किया कि यह राशि काल्पनिक एवं मनगढ़न्त आधार पर मांगी गई है । पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत अभिकथनों के आधार पर विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा आवश्यक वाद बिन्दुओं की रचना की गई तथा वाद बिन्दु संख्या 2 क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा के संबंध में विरचित की गई । अपने पक्ष को प्रमाणित करने के लिए अपीलार्थीगण ने मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य प्रस्तुत की जबकि प्रत्यर्थीगण की ओर से किसी तरह की कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं की गई । विद्वान् न्यायाधिकरण ने वाद बिन्दु संख्या 2 के अधीन विस्तार से विचार कर निष्कर्ष दिया कि आय के संबंध में अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है तथा मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रमिक ही माना जा सकता है । उक्त आधार पर मृतक की मासिक आय 1,800/- रुपए निर्धारित कर विद्वान् न्यायाधिकरण ने यह भी निष्कर्ष दिया कि वह इस राशि का 1/3 भाग अपने व्यक्तिगत एवं स्वयं निर्वाह के लिए व्यय करता होगा तथा प्रतिमाह 1,200/- रुपए अपने माता-पिता यानि अपीलार्थीगण को प्रदान करता होगा । विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की तत्समय आयु को आधार बनाकर 8 के गुणांक का उपयोग करते हुए अपीलार्थीगण को आय में हुई क्षति के अधीन कुल 1,15,200/- रुपए तथा श्री सम्पत सिंह की मृत्यु के कारण अपीलार्थीगण को हुए मानसिक संताप हेतु 4,800/- रुपए यानि कुल 1,20,000/- रुपए क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान किए । याचिका व्यय के रूप में अतिरिक्त रूप से 1 हजार रुपए दिलाते हुए विद्वान् न्यायाधिकरण ने उक्त राशि पर 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज़ भी दिलाया । इससे व्यथित होकर यह अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा आंशिक रूप से अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने विद्वान् अधिवक्तागण पक्षकार की ओर से प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया तथा पत्रावली पर उपलब्ध अभिवचनों एवं साक्ष्य तथा सम्बन्धित विधिक प्रावधानों, पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत न्यायिक दृष्टांतों तथा अन्य सुसंगत न्यायिक दृष्टांतों का ध्यानपूर्वक

अवलोकन किया । न्यायालय का सविचार निर्णय व निष्कर्ष निम्न प्रकार है – पक्षकारों के मध्य विवादित नहीं है कि दुर्घटना एवं मृत्यु के समय मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु 22 वर्ष तथा अपीलार्थी-दावेदारों श्रीमती सुप्यार कंवर, जो कि मृतक के माता-पिता हैं की आयु लगभग 60 वर्ष थी, ऐसी सूरत में क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा का निर्धारण उक्त आयु को ध्यान में रखते हुए ही किया जाना है । यह सही है कि मृतक की आय को प्रमाणित करने के लिए अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य के खण्डन में प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी सहित किसी भी प्रत्यार्थी द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किए गए किंतु फिर भी प्रस्तुत अभिवचनों व साक्ष्य पर विस्तार से विचार कर कारण अभिलिखित करके विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रेणी का श्रमिक होना निर्धारित कर न्यूनतम मजदूरी के आधार पर उसकी मासिक आय 1,800/- रुपए निर्धारित की है उसे गलत माने जाने का कोई आधार व कारण नहीं है । दिनांक 31 जुलाई, 1999 को प्रस्तुत क्लेम याचिका के चरण संख्या 4 में अपीलार्थीगण द्वारा अभिलिखित किया गया कि मृतक पढ़ाई करता था व ट्यूशन पढ़ाने का धंधा करता था । याचिका के चरण संख्या 6 में मृतक 9 हजार रुपए मासिक कमाता था । यह भी अभिलिखित किया गया कि मृतक बी. ए. द्वितीय वर्ष का छात्र था । याचिका में किसी भी स्थान पर यह स्पष्ट नहीं किया गया कि मृतक ट्यूशन पढ़ाने का कार्य किस प्रकार से तथा किस स्थान पर करता था । याचिका में यह कथन नहीं किया गया कि मृतक किसी प्राइवेट विद्यालय में अथवा अन्य किसी विद्यालय में विद्यार्थियों को ट्यूशन पढ़ाने का कार्य करता था । यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि दिनांक 31 जुलाई, 1999 को प्रस्तुत क्लेम याचिका के साथ अपीलार्थीगण द्वारा अनेक प्रलेखों की प्रतिलिपि प्रस्तुत की गई किन्तु किसी प्राइवेट विद्यालय के विद्यार्थियों को ट्यूशन पढ़ाने के संबंध में वेतन प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया । विचारण के दौरान मृतक की माता अपीलार्थी-दावेदार श्रीमती सुप्यार कंवर साक्षी के रूप में न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित हुई उसने अपने मौखिक कथन में बताया कि उसका पुत्र प्राइवेट स्कूल में पढ़ाता था व ट्यूशन का काम भी करता था जिस हेतु विद्यालय वाले उसे 5 हजार रुपए देते थे । अपीलार्थियों द्वारा यह भी कथन किया गया कि इसके अलावा वह अनाज का व्यापार कर प्रतिमाह 4 हजार रुपए की आय अर्जित कर लेता था । उल्लेखनीय है कि विचारण के दौरान अपीलार्थियों द्वारा यह कथन नहीं किया गया कि मृत्यु पूर्व मृतक श्री सम्पत सिंह बी. ए. द्वितीय वर्ष अथवा अन्य किसी कक्षा का विद्यार्थी था । क्लेम याचिका में इस तथ्य

का उल्लेख नहीं किया गया कि मृतक अनाज के व्यापार से प्रतिमाह 4 हजार रुपए अथवा अन्य कोई आय अर्जित करता था । याचिका में मात्र यह कथन किया गया कि वह अपने माता-पिता का सहयोग कृषि कार्य में करता था । यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी श्रीमती सुप्यार कंवर का उक्त कथन दिनांक 17 जनवरी, 2003 को लेखबद्ध किया गया तथा उस दिन प्रथम बार वेतन प्रमाणपत्र के रूप में प्रदर्श-12 प्रस्तुत किया गया । अपने प्रतिपरीक्षण में अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि उसने अपने पुत्र के व्यवसाय संबंधी कोई हिसाब प्रस्तुत नहीं किया है । इस सुझाव को साक्षी ने गलत बताया है कि उसका पुत्र प्रतिमाह 2 हजार रुपए की आय अर्जित करता था तथा अधिक क्लेम राशि प्राप्त करने के लिए मिली भगत कर झूंठा वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 दिनांक 21 फरवरी, 2003 को लेखबद्ध करवाए गए । अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि उसके विद्यालय में मृतक ने 1 अगस्त, 1998 से 20 जून, 1999 तक कक्षा 5, 6, 7 व 8 के विद्यार्थियों की ओर से प्रतिमाह 5 हजार रुपए का वेतन दिया जाता था । साक्षी ने वेतन प्रमाणपत्र दिनांक 9 जनवरी, 2003 प्रदर्श-12 को अपने हस्ताक्षर से जारी होना बताया है । उल्लेखनीय है कि साक्षी ने यह कथन किया है कि उनके विद्यालय में मृतक श्री सम्पत सिंह प्राइवेट ट्यूशन पढ़ाने का कार्य करता था । यह तथ्य इस न्यायालय के समझ से परे है कि कोई व्यक्ति किसी विद्यालय में विद्यार्थियों को प्राइवेट ट्यूशन पढ़ाने का कार्य कैसे कर सकता है । अपने प्रतिपरीक्षण में साक्षी ने स्वीकार किया कि उसने अपनी संस्था स्वामी विवेकानन्द शिक्षण संस्थान का अनुज्ञा पत्र, उसकी संस्था द्वारा अन्य शिक्षकों को दिए जाने वाले वेतन आदि के संबंध में कोई प्रलेख न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया है । साक्षी ने यह भी स्वीकार किया कि वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 पर विद्यालय का डिस्पैच संख्या उल्लिखित नहीं है । जैसा पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है यद्यपि क्लेम याचिका के साथ अपीलार्थीगण द्वारा अन्य अनेक प्रलेख प्रस्तुत किए गए किंतु उक्त विद्यालय में तथाकथित रूप से किए गए प्राइवेट ट्यूशन का कार्य कर वेतन के रूप में 5 हजार रुपए प्राप्त किए जाने संबंधी वेतन प्रमाणपत्र अथवा अन्य कोई प्रलेख याचिका के साथ प्रस्तुत नहीं किया गया तथा प्रथम बार यह वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 दिनांक 9 जनवरी, 2003 को जारी किया गया है । यह न्यायालय, विद्वान् अधिकरण के इस मत से पूर्ण रूप से सहमत है कि प्राइवेट ट्यूशन कर मृतक श्री सम्पत सिंह द्वारा प्रतिमाह 5 हजार रुपए अथवा अन्य कोई राशि अर्जित करना पत्रावली पर विद्यमान उक्त साक्ष्य के आधार पर विश्वसनीय नहीं माना जा सकता है,

ऐसी सूरत में प्रत्यर्थीगण की ओर से खण्डन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने से भी उक्त तथ्य के संबंध में विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा दिया गया निष्कर्ष पुष्ट किए जाने योग्य है । अतः यह निष्कर्ष दिया जाता है कि विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रमिक निर्धारित कर प्रतिमाह आय 1,800/- रुपए निर्धारित करने में किसी तरह की कोई तथ्यात्मक एवं विधिक त्रुटि नहीं की है । वर्तमान मामले में यह पाया गया है कि मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु दुर्घटना व मृत्यु के समय 22 वर्ष थी । प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर उसे कुशल श्रेणी का श्रमिक माना गया है । अपीलार्थी माता की आयु 50 वर्ष तथा पिता की आयु 60 वर्ष होना भी अविवादित है । न्यायालय का विनिश्चित मत है कि मामले के समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की रोशनी में वर्तमान मामला अपवादित श्रेणी का है तथा अपीलार्थीगण मृतक की आय में भविष्य संभावना के आधार पर समुचित वृद्धि करवाए जाने के कानूनन अधिकारी हैं । मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए न्यायालय न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित की गई मासिक आय में 50 प्रतिशत की वृद्धि किया जाना न्यायोचित पाते हैं । जब दिनांक 18 अप्रैल, 1988 को घटित दुर्घटना से संबंधित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने भविष्य संभावना के प्रश्न पर विचार कर इस मामले से संबंधित अपीलार्थीगण को इस सिद्धांत का लाभ प्राप्त करने के अधिकार से केवल इस आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता कि न्यायाधिकरण का निर्णय व अवार्ड दिनांक 1 अप्रैल, 2003 को पारित किया गया है । अन्यथा भी माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने जिन-जिन मामलों में भविष्य संभावना के आधार पर प्रतिमाह आय में वृद्धि कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किए जाने का अभिमत प्रकट किया है उनमें से किसी भी मामले में यह मत व्यक्त नहीं किया गया है कि भविष्य संभावना के आधार पर उपयुक्त वृद्धि करते हुए क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने का सिद्धान्त प्रथम बार न्यायालय द्वारा प्रतिपादित किया गया है ऐसी सूरत में यह सिद्धान्त केवल भविष्य में प्रस्तुत होने वाली क्लेम याचिकाओं पर ही लागू होगा । (पैरा 6 का उप-पैरा 1 और 2)

न्यायालय सम्माननीय सहपीठ के इस मत से भी सहमत नहीं है कि अधिनियम के अधीन प्रस्तुत अपील में इस अपीलीय न्यायालय को केवल न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्णय की वैधानिकता अथवा अवैधानिकता को ही विचार कर अपना मत व्यक्त किया जाना होता है । विधि की सुस्थापित स्थिति है कि अपील मूल वाद की निरन्तरता के रूप में प्रस्तुत होती है तथा

अपीलीय न्यायालय को मामले के उन सभी पहलुओं पर विचार करने की अधिकारिता होती है जो न्यायाधिकरण को प्राप्त है । अधिनियम की धारा 166 के अधीन प्रस्तुत क्लेम याचिका में न्यायाधिकरण को यह देखा जाना होता है कि प्रकरण के समस्त तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्तागण को दुर्घटना फलस्वरूप पहुंची क्षति के अनुपात में अल्प मात्रा में ही क्षतिपूर्ति राशि प्रदान की जानी चाहिए । इस संबंध में सुस्थापित विधिक स्थिति यह भी है कि क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान की जाने वाली राशि प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पीड़ित व्यक्ति को पहुंची क्षति के अनुरूप व अनुपात में होनी चाहिए । यदि न्यायाधिकरण द्वारा प्रदान की गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा से असंतुष्ट होकर उसमें वृद्धि किए जाने की प्रार्थना के साथ अपील प्रस्तुत की जाती है अथवा न्यायाधिकरण द्वारा प्रदान की गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा को अत्यधिक एवं अनुचित प्रकट कर उसमें कमी किए जाने की प्रार्थना के साथ बीमा कम्पनी अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा अपील प्रस्तुत की जाती है तो अपीलीय न्यायालय का दायित्व है कि वह प्रकरण के समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की रोशनी में पत्रावली पर विद्यमान अभिवचनों व साक्ष्य तथा प्रचलित विधिक स्थिति की रोशनी में स्वतंत्र रूप से विचार कर उपयुक्त क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा की गणना करें । न्यायालय अधिवक्ता-अपीलार्थीगण के इस तर्क से सहमत नहीं है कि अपीलार्थीगण को आय में हुई क्षति की गणना मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु को आधार बनाकर की जानी चाहिए न कि अपीलार्थीगण की आय की । इस संबंध में प्रचलित विधिक स्थिति का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया जाए तो यह स्थिति सामने आती है कि यदि मृतक विवाहित व्यक्ति है तथा उसके आश्रितों में धर्म पत्नी के अलावा उसकी संतान एवं माता-पिता आदि शामिल हैं, तो मृतक की आयु को आधार बनाकर उपयुक्त गुणांक का उपयोग करते हुए आय में हुई क्षति का आंकलन किया जाना चाहिए किन्तु जहां मृतक अविवाहित है तथा आश्रितों के रूप में वृद्ध माता-पिता हैं तो माता-पिता की आयु को आधार बनाना उपयुक्त गुणांक का उपयोग किया जाना चाहिए । वर्तमान प्रकरण में जैसा पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि मृतक की माता अपीलार्थी-श्रीमती सुप्यार कवंर की आयु 50 वर्ष तथा उसके पिता श्री डूंगर सिंह की आयु 60 वर्ष होना बताया गया है । क्लेम याचिका में अन्य किसी व्यक्ति को मृतक का आश्रित नहीं बताया है ऐसी सूरत में यदि विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की आयु को आधार बनाकर 8 के गुणांक

का उपयोग क्षतिपूर्ति राशि के निर्धारण के लिए किया है तो इसे गलत व अनुचित नहीं माना जा सकता तथा इस संबंध में न्यायाधिकरण द्वारा प्रकट निष्कर्ष विधि अनुरूप होने से पुष्ट किए जाने योग्य है । जहां तक मृतक श्री सम्पत सिंह की व्यक्तिगत एवं निर्वाह व्यय के मद में कटौती किए जाने का प्रश्न है, न्यायालय ने अधिवक्ता, प्रत्यार्थीगण के इस तर्क से सहमति व्यक्त की है कि इस मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती करके क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना चाहिए था न कि 1/3 भाग की कटौती करके जैसा विद्वान् न्यायाधिकरण ने किया है । यह स्वीकृत तथ्य है कि मृतक अविवाहित था, स्वयं अपीलार्थीगण के अनुसार वह बी. ए. द्वितीय वर्ष का छात्र था । याचिका के अनुसार अपीलार्थीगण स्वयं कृषि कार्य कर स्वतंत्र रूप में आय अर्जित कर रहे थे । माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने एक से अधिक मामलों में अभिमत व्यक्त किया है कि जहां मृतक अविवाहित है तथा आश्रित उसके माता-पिता हैं तो उक्त मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती की जाकर ही क्षतिपूर्ति राशि की गणना की जानी चाहिए । यह सही है कि उक्त प्रश्न पर विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए निष्कर्ष को प्रत्यर्थी-बीमा कंपनी सहित किसी भी प्रत्यर्थी ने प्रति अपील अथवा प्रति आपत्तियां प्रस्तुत कर चुनौती नहीं दी हैं किन्तु न्यायालय का निश्चित मत है कि अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत इस अपील में इस अपीलीय न्यायालय को अधिकारिता है कि वह उक्त प्रश्न पर विचार कर अपना स्वतंत्र मत व्यक्त करें । जैसा पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि अधिनियम की धारा 173 के अधीन प्रस्तुत अपील अधिनियम की धारा 166क के अधीन प्रस्तुत क्लेम याचिका की निरन्तरता में ही प्रस्तुत की जाती है तथा अपीलीय न्यायालय को उन सभी प्रश्नों पर विचार कर अपना मत व्यक्त करने की अधिकारिता है, जो न्यायाधिकरण को प्राप्त है । अधिनियम की धारा 166 व 168 के अनुसार न्यायाधिकरण/न्यायालय का दायित्व है कि दुर्घटना फलस्वरूप पहुंची क्षति के अनुरूप व अनुपात में न्यायसंगत, युक्तियुक्त एवं समुचित राशि क्षतिपूर्ति राशि के रूप में प्रदान करें । उक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त राशि का आंकलन इस अपीलीय न्यायालय द्वारा किया जाना है तथा यदि किसी मामले में यह पाया जाता है कि किसी मद में आंकलन किया गया है तो अपीलीय न्यायालय इसमें आवश्यक परिवर्तन कर सकता है । ऐसा किए जाने में हम किसी तरह की कोई विधिक बाधा नहीं पाते । अतः मृतक श्री सम्पत सिंह की व्यक्तिगत एवं निर्वाह व्यय के मद के अधीन विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा की

गई कटौती 1/3 के स्थान पर 1/2 भाग की कटौती कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना न्यायोचित होगा । उक्त समस्त विवेचन के आधार पर न्यायालय का यह मत है कि अपीलार्थीगण निम्नलिखित राशि आय में हुई क्षति के मद के अधीन प्राप्त करने के अधिकारी हैं – **1,800 + 900 = 2,700 – 1,350 = 1,350 × 12 × 8 = 1,29,600/- रुपए** । न्यायालय अधिवक्ता अपीलार्थीगण के इस तर्क से सहमत है कि विद्वान् न्यायाधिकरण ने दाह संस्कार के मद में कोई भी राशि अदा न कर कानूनन त्रुटि की है किंतु हम अधिवक्ता के इस तर्क से सहमत नहीं हैं कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा राजेश बनाम राजबीर सिंह और अन्य के मामले में प्रकट किए गए मत के अनुसार अपीलार्थीगण इस मद के अधीन 25 हजार रुपए प्राप्त करने के अधिकारी हैं । इस प्रकरण से संबंधित दुर्घटना तिथि 21 जून, 1999 को ध्यान में रखते हुए न्यायालय अपीलार्थीगण को इस मद के अधीन 10,000/- रुपए की राशि दिलाया जाना न्यायोचित पाता है । अधिवक्ता अपीलार्थीगण का यह तर्क भी विधिसम्मत होने से स्वीकार किए जाने योग्य है कि अपीलार्थीगण को हुए मानसिक संताप एवं कष्ट के मद के अधीन दिलाई गई राशि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अत्यन्त कम व अनुचित है । अपीलार्थीगण की आयु को दृष्टिगत रखते हुए न्यायालय प्रत्येक अपीलार्थी को इस मद के अधीन 15,000-15,000/- रुपए यानि कुल 30,000/- रुपए दिलाया जाना उचित पाते हैं । यद्यपि सम्पदा को हुई क्षति के मद के संबंध में अपीलार्थीगण की ओर से इस अपील की सुनवाई के दौरान किसी राशि की मांग नहीं की गई है किन्तु प्रचलित विधिक स्थिति रोशनी में न्यायालय अपीलार्थीगण को इस मद के अधीन 10,000/- रुपए दिलाया जाना उचित पाता है । इस तरह से उक्त समस्त विवेचन के आधार पर अपीलार्थीगण-दावेदारों विभिन्न मदों में निम्नलिखित राशि प्राप्त करने के अधिकारी पाए जाते हैं – अपीलार्थीगण को हुई आय की क्षति के रूप में दिलाई गई राशि 1,15,200/- रुपए के स्थान पर 1,29,600/- रुपए की राशि दिलाई जाती है । अपीलार्थीगण को अपने पुत्र की मृत्यु के कारण उत्पन्न मानसिक संताप एवं कष्ट के मद के अधीन दिलाई गई 4,800/- रुपए की राशि के स्थान पर प्रत्येक को 15,000-15,000/- रुपए की राशि दिलाई जाती है, जो कुल सदस्य संख्या के अनुसार 15,000 × 2 = 30,000/- रुपए होंगे । दाह संस्कार के मद के अधीन 10,000/- रुपए की राशि पृथक् से दिलाई जाती है । सम्पदा में हुई क्षति के मद में 10,000/- रुपए की राशि पृथक् से दिलाई जाती है । इस

तरह से अपीलार्थीगण क्षतिपूर्ति के रूप में कुल 1,79,600/- रुपए प्राप्त करने के अधिकारी हैं । विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा पूर्व में 1,21,000/- रुपए की राशि प्रदान की जा चुकी है । इसलिए अपीलार्थीगण-दावेदारों क्षतिपूर्ति के रूप में 58,600/- रुपए और प्राप्त करने का अधिकारी है । अतः अपीलार्थीगण-दावेदारों, प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी से अतिरिक्त राशि के रूप में 58,600/- रुपए तथा इस राशि पर क्लेम याचिका प्रस्तुत तिथि से भुगतान तिथि तक 6 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज भी प्राप्त करने का अधिकारी है । (पैरा 6 का उप-पैरा 4, 5 और 6)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2003 की एकल पीठ सिविल विविध अपील सं. 1466.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

दावेदारों-अपीलार्थी की ओर से	श्री अमित सिंह शेखावत, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 3 बीमा कम्पनी की ओर से	सर्वश्री रिजवान अहमद, अधिवक्ता और अजीत भण्डारी, अधिवक्ता
अन्य प्रत्यर्थीगण की ओर से	कोई नहीं

न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार अग्रवाल – मोटर यान दुर्घटना वाद न्यायाधिकरण, सीकर द्वारा मोटर दुर्घटना वाद संख्या 216/1999 में दिनांक 1 अप्रैल, 2003 को पारित निर्णय व अवार्ड के माध्यम से अपीलार्थीगण-दावेदारों को क्षतिपूर्ति के रूप में दिलाई गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा से असंतुष्ट होकर तथा उसमें समुचित वृद्धि की प्रार्थना के साथ अपीलार्थीगण-दावेदारों, जो कि मृतक श्री सम्पत सिंह के माता-पिता हैं, ने यह दीवानी विविध अपील मोटर वाहन अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन प्रस्तुत की है ।

2. उक्त अपील के निस्तारण हेतु सुसंगत तथ्य संक्षेप में इस तरह से है कि अपीलार्थीगण-दावेदारों के 22 वर्षीय पुत्र की मृत्यु मोटर दुर्घटना के फलस्वरूप दिनांक 21 जून, 1999 को सायं लगभग पौने 6 बजे उस समय हुई जब वह किसी मोटरसाइकिल के पीछे बैठकर नवलगढ़ से सीकर की ओर जा रहा था तथा प्रत्यर्थी श्री प्यारे लाल ने अपने वाहन ट्रक पंजीकरण संख्या आर जे 18जी 1192 को तेज गति, गफलत व लापरवाही से चलाकर उक्त मोटरसाइकिल को टक्कर मारी । अपीलार्थी-दावेदार श्रीमती सुप्यार कंवर ने अपनी आयु 50 वर्ष तथा अपीलार्थी-दावेदार श्री

डूंगर सिंह ने अपनी आयु 60 वर्ष होना प्रकट कर क्षतिपूर्ति राशि प्राप्त करने हेतु क्लेम याचिका मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन दिनांक 31 जूलाई, 1999 को विद्वान् न्यायाधिकरण के समक्ष इन कथनों के साथ प्रस्तुत की कि दुर्घटना एवं अपनी मृत्यु के समय उनका पुत्र मृतक श्री सम्पत सिंह पढ़ाई करता था तथा ट्यूशन पढ़ाने का कार्य कर प्रतिमाह 5 हजार रुपए की आय अर्जित कर रहा था । याचिका में यह भी कथन किया गया कि मृतक पढ़ाई के ट्यूशन के अलावा कृषि कार्य में भी अपने माता-पिता का सहयोग करता था तथा कृषि कार्य से उसे लगभग 4 हजार रुपए प्रतिमाह आय अर्जित होती थी । अपीलार्थीगण-दावेदारों ने विभिन्न मदों में कुल 29 लाख 13 हजार रुपए क्षतिपूर्ति राशि के रूप में मांग की तथा इस पर 18 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज दिलाए जाने का भी निवेदन किया ।

3. प्रत्यार्थीगण ने विद्वान् न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित होकर प्रति उत्तर प्रस्तुत किए तथा क्षतिपूर्ति राशि के रूप में मांगी गई उक्त राशि के लिए कथन किया कि यह राशि काल्पनिक एवं मनगढ़ंत आधार पर मांगी गई है । पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत अभिकथनों के आधार पर विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा आवश्यक वाद बिन्दुओं की रचना की गई तथा वाद बिन्दु संख्या 2 क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा के संबंध में विरचित की गई । अपने पक्ष को प्रमाणित करने के लिए अपीलार्थीगण ने मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य प्रस्तुत की जबकि प्रत्यर्थीगण की ओर से किसी तरह की कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं की गई ।

4. विद्वान् न्यायाधिकरण ने वाद बिन्दु संख्या 2 के अधीन विस्तार से विचार कर निष्कर्ष दिया कि आय के संबंध में अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है तथा मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रमिक ही माना जा सकता है । उक्त आधार पर मृतक की मासिक आय 1,800/- रुपए निर्धारित कर विद्वान् न्यायाधिकरण ने यह भी निष्कर्ष दिया कि वह इस राशि का 1/3 भाग अपने व्यक्तिगत एवं स्वयं निर्वाह के लिए व्यय करता होगा तथा प्रतिमाह 1,200/- रुपए अपने माता-पिता यानि अपीलार्थीगण को प्रदान करता होगा । विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की तत्समय आयु को आधार बनाकर 8 के गुणांक का उपयोग करते हुए अपीलार्थीगण को आय में हुई क्षति के अधीन कुल 1,15,200/- रुपए तथा श्री सम्पत सिंह की मृत्यु के कारण अपीलार्थीगण को हुए मानसिक संताप हेतु 4,800/- रुपए यानि कुल 1,20,000/- रुपए क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान

किए । याचिका व्यय के रूप में अतिरिक्त रूप से 1 हजार रुपए दिलाते हुए विद्वान् न्यायाधिकरण ने उक्त राशि पर 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज भी दिलाया ।

5. उक्त प्रकार से प्रदान की गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा से असंतुष्ट होकर यह अपील हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई है ।

6. अपील के समर्थन में अधिवक्ता अपीलार्थीगण द्वारा निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए :–

1. पत्रावली पर विद्यमान मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य, जिसका खण्डन प्रत्यार्थीगण की ओर से नहीं किया गया है, से स्पष्ट है कि दुर्घटना से पूर्व मृतक श्री सम्पत सिंह एक प्राइवेट विद्यालय में विद्यार्थियों को ट्यूशन पढ़ाने का कार्य करता था तथा उसे वेतन के रूप में प्रतिमाह 5,000/- रुपए मिलते थे किन्तु विद्वान् न्यायाधिकरण ने समुचित कारण अभिलिखित किए बिना ही अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत इस साक्ष्य को नकराते हुए मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रमिक मानते हुए मासिक आय का निर्धारण किया है । विद्वान् न्यायाधिकरण ने पत्रावली पर विद्यमान इस साक्ष्य पर विचार तक नहीं किया कि मृतक अपने माता-पिता अपीलार्थीगण को कृषि कार्य में सहयोग कर तथा अनाज विक्रय का कार्य कर भी अतिरिक्त रूप से प्रतिमाह 4 हजार रुपए की आय अर्जित करता था । अतः क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन अपीलार्थीगण की ओर से अर्जित करता था । अतः क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत उक्त अभिखण्डित साक्ष्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए । मृतक को प्रदान किए जाने वाले मासिक वेतन को प्रमाणित करने के लिए वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 प्रस्तुत किया गया है, जिसे साक्षी ए. डब्ल्यू. 3 श्री नौरंग लाल शर्मा ने अपने शपथपूर्वक कथन के आधार पर प्रमाणित किया है । जिन आधारों पर विद्वान् न्यायाधिकरण ने वेतन प्रमाणपत्र एवं श्री नौरंग लाल शर्मा के कथन को अस्वीकार किया है वे विधिसम्मत नहीं है ।

2. मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु तथा मृत्यु पूर्व उसके द्वारा किए जा रहे कार्य की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा भविष्य संभावना के आधार पर मृतक की मासिक आय में कम से कम 50 प्रतिशत की वृद्धि करते हुए क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना चाहिए था किन्तु मामले के इस पहलू पर

विद्वान् न्यायाधिकरण ने विचार तक नहीं किया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने न्यायिक दृष्टांत राजेश **बनाम** राजबीर सिंह और अन्य, (2013) 9 एस. एस. सी. 54 तथा संतोष देवी **बनाम** नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. और अन्य, 2012 ए. सी. जे. 1428 में स्पष्ट शब्दों में मत व्यक्त किया है कि स्वरोजगार एवं निश्चित वेतन पर कार्य करने वाले व्यक्तियों के संबंध में भी क्षतिपूर्ति राशि की गणना करने के लिए भविष्य संभावना के मद के अधीन उपयुक्त राशि दिलाई जानी चाहिए तथा यदि मृतक की आय में 50 प्रतिशत की वृद्धि की जाकर आय में हुई क्षति की गणना की जानी चाहिए ।

3. माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने पूर्व अनेक न्यायिक दृष्टांतों को आधार बनाकर अपने नवीनतम न्यायिक दृष्टांत अमृत भानूशाली और अन्य **बनाम** नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. और अन्य, (2012) 11 एस. सी. सी. 738 में मत व्यक्त किया है कि आय में हुई क्षति का आंकलन करने के लिए उपयुक्त गुणांक का उपयोग मृतक की आयु के आधार पर किया जाना चाहिए न कि आश्रितों की आयु के आधार पर ।

वर्तमान प्रकरण में विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की आयु को आधार बनाकर गुणांक का उपयोग क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने के लिए किया है जबकि उक्त विधिक स्थिति की रोशनी में मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु को आधार बनाकर उपयुक्त गुणांक का उपयोग किया जाना चाहिए था । चूंकि मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु दुर्घटना एवं मृत्यु के समय अविवादित रूप से 22 वर्ष थी, ऐसी सूरत में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सरला वर्मा के प्रकरण में निर्धारित किए गए मापदण्ड के अनुसार 18 के गुणांक का उपयोग करते हुए क्षतिपूर्ति राशि की गणना किया जाना न्यायोचित है ।

4. जहां तक मृतक श्री सम्पत सिंह द्वारा अपने व्यक्तिगत तथा निर्वाह व्यय के मद के अधीन विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा 1/3 भाग की कटौती किए जाने का प्रश्न है, स्वयं मृतक की आयु तथा अपीलार्थीगण की तत्समय आयु को दृष्टिगत रखते हुए ऐसा किया जाना अनुचित एवं गलत नहीं माना जा सकता तथा प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी की ओर से किया गया यह निवेदन विधिसम्मत नहीं है कि मृतक की व्यक्तिगत एवं निर्वाह के मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती की जाकर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना चाहिए था ।

चूंकि प्रत्यार्थीगण एवं विशेष रूप से प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी द्वारा प्रति अपील अथवा प्रति आपत्तियां प्रस्तुत कर विद्वान् न्यायाधिकरण के उक्त निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी गई है, ऐसी सूरत में इस संबंध में न्यायाधिकरण द्वारा दिया गया निष्कर्ष पुष्ट किए जाने योग्य है तथा उसमें किसी तरह का कोई परिवर्तन कानूनन नहीं किया जा सकता ।

7. विद्वान् न्यायाधिकरण ने दाह-संस्कार के मद के अधीन कुछ भी राशि क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान नहीं की गई है । अतः माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपने नवीनतम न्यायिक दृष्टान्त राजेश बनाम राजबीर सिंह और अन्य में प्रकट किए गए मत के अनुसार अपीलार्थीगण कम से कम 25 हजार रुपए इस मद के अधीन प्राप्त करने के अधिकार हैं ।

8. विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण को अपने नवयुवक अविवाहित पुत्र की दुर्घटना स्वरूप असामयिक मृत्यु से हुए शोक एवं मानसिक संताप के लिए नाम मात्र की राशि 4,800/- रुपए प्रदान की है जबकि मृतक व अपीलार्थीगण की आयु को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त राशि इस मद के अधीन प्रदान की जानी चाहिए थी । इस अपीलीय न्यायालय को अधिकारिता प्राप्त है कि वह इस मद के अधीन उक्त सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त राशि प्रदान करें ।

9. इसके विपरीत विद्वान् अधिवक्ता प्रत्यर्थी-बीमा कंपनी ने अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत उक्त तर्कों का विरोध कर निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए :–

1. यद्यपि प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी सहित किसी भी प्रत्यर्थीगण द्वारा अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य के खण्डन में किसी तरह की कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं की गई किन्तु विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत अभिवचनों, मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य पर विस्तार से विचार कर सही रूप से निष्कर्ष दिया है कि विश्वसनीय साक्ष्य के अभाव में मृतक श्री सम्पत सिंह को अधिक से अधिक एक कुशल श्रमिक माना जा सकता है तथा तत्समय प्रचलित न्यूनतम मजदूर राशि को ध्यान में रखते हुए विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक की मासिक आय का आंकलन सही रूप से 1,800/- रुपए किया है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई कारण नहीं है ।

2. विद्वान् न्यायाधिकरण ने प्रकरण के समस्त तथ्यों व परिस्थितियों तथा विशेष रूप से अपीलार्थीगण जोकि मृतक के माता-पिता हैं, की तत्समय आयु को आधार बनाकर सही रूप से 8 के

गुणांक का उपयोग करते हुए क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया है, जिसमें भी हस्तक्षेप किए जाने का कोई कारण नहीं है ।

ऐसी कोई विधिक स्थिति नहीं कि प्रकरण के तथ्यों व परिस्थितियों को नजर अंदाज करते हुए प्रत्येक मामले में मृतक की आयु को आधार बनाकर ही उपयुक्त गुणांक का उपयोग कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना चाहिए । यदि मृतक अविवाहित है तथा वृद्ध माता-पिता के अलावा अन्य कोई व्यक्ति मृतक का आश्रित नहीं है तो माता-पिता की आयु ही उपयुक्त गुणांक का उपयोग करने का समुचित आधार होगी ।

3. विद्वान् न्यायाधिकरण ने गलत रूप से मृतक की व्यक्तिगत एवं स्वयं निर्वाह के मद के अधीन 1/3 भाग की कटौती कर क्षतिपूर्ति राशि की गणना की है जबकि मृतक के अविवाहित होने को ध्यान में रखते हुए इस मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती करते हुए अपीलार्थीगण को हुई आय की क्षति का आंकलन किया जाना चाहिए था तथा अपीलार्थीगण की ओर से गलत रूप से न्यायिक दृष्टान्त अमृत भानूशाली और अन्य बनाम नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. और अन्य को इस संबंध में प्रस्तुत किए गए तर्क का आधार बनाया गया है ।

यह सही है कि न्यायाधिकरण द्वारा उक्त बिन्दु पर दिए गए निष्कर्ष को चुनौती देते हुए प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी सहित किसी भी प्रत्यर्थी ने प्रति अपील अथवा प्रति आपत्तियां इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं की हैं किन्तु इस न्यायालय को स्वयं अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत इस अपील की सुनवाई के दौरान इस संबंध में प्रचलित सुस्थापित विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस बिन्दु के अधीन विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा दिए निष्कर्ष में उचित रूप से परिवर्तन करने की अधिकारिता है । अपीलार्थीगण द्वारा यह अपील समुचित मात्रा में क्षतिपूर्ति राशि दिलवाए जाने की प्रार्थना के साथ प्रस्तुत की गई है तो इस अपीलीय न्यायालय को अधिकार प्राप्त है कि वह मामले के सभी पहलुओं पर विचार कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करें ।

4. जहां तक भविष्य संभावना के आधार पर मृतक की मासिक आय में 50 प्रतिशत अथवा अन्य किसी सीमा तक वृद्धि करते हुए क्षतिपूर्ति राशि की गणना किए जाने का प्रश्न है, इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए कि विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक को एक कुशल

श्रमिक मानते हुए न्यूनतम मजदूरी के आधार पर उसकी मासिक आय का निर्धारण किया है, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सरला वर्मा के मामले में तथा फिर तीन माननीय न्यायाधिकरण की पीठ द्वारा अपने नवीनतम न्यायिक दृष्टान्त रेशमा कुमारी और अन्य **बनाम** मदन मोहन और अन्य, (2013) 9 एस. सी. सी. 65 में प्रतिपादित सिद्धान्त के अनुसार अपीलार्थीगण किसी तरह की वृद्धि करवाए जाने की अधिकारी नहीं हैं । यह सही है कि माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधिपतिगण की अन्य पीठ ने न्यायिक दृष्टान्त राजेश बनाम राजबीर सिंह और अन्य, (2013) 9 एस. सी. सी. 54 में यह मत व्यक्त किया है कि स्वरोजगार एवं निश्चित वेतन पर कार्य करने वाले व्यक्तियों के संबंध में भी क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने के लिए भविष्य संभावना के अधीन मासिक आय में वृद्धि कर क्षतिपूर्ति राशि की गणना की जानी चाहिए किंतु रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और अन्य की निर्णय तिथि राजेश बनाम राजबीर सिंह और अन्य के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रकट अभिमत इस न्यायालय पर बाध्यकारी हैं । अन्यथा भी एक ही बिन्दु पर दो समान संख्या की पीठों द्वारा विरोधाभासी मत व्यक्त किए जाने से माननीय उच्चतम न्यायालय के दो माननीय न्यायाधिपतिगण की पीठ ने नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. बनाम पुष्पा और अन्य में पारित अपने आदेश दिनांक 2 जुलाई, 2014 के माध्यम से उक्त बिन्दु को निर्णय करने के लिए वृहद पीठ को प्रेषित किया है तथा ऐसी सूरत में जब तक वृहद पीठ का कोई स्पष्ट मत इस बिन्दु पर नहीं आ जाता, रेशमा कुमारी और अन्य के मामले में प्रकट किया गया मत ही लागू माना जाएगा तथा यदि इस दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो अपीलार्थीगण भविष्य संभावना के मद के अधीन किसी तरह की वृद्धि कराए जाने के पात्र नहीं हैं ।

5. माननीय उच्चमत न्यायालय द्वारा रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और अन्य प्रकरण में प्रतिपादित सिद्धान्त की अनुपालना कर माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपने अनेक निर्णयों में मत व्यक्त किया है कि ऐसे मामलों में भविष्य संभावना के मद के अधीन मृतक की मासिक आय में किसी तरह की वृद्धि नहीं की जा सकती । इस न्यायालय की माननीय एकलपीठ ने एकलपीठ सिविल विधिक अपील संख्या 1000/2014 नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. बनाम श्रीमती सीता देवी और अन्य में रेशमा कुमारी के मामले में

प्रकट किए गए अभिमत की अनुपालना में मत व्यक्त किया है कि न्यायाधिकरण ने ऐसे मामले में आय में 30 प्रतिशत की वृद्धि गलत रूप से की है ।

समानता के अधिकार एवं व्यवहार को दृष्टिगत रखते हुए इस न्यायालय का दायित्व है कि वह सहपीठ द्वारा प्रकट मत को ध्यान में रखते हुए भविष्य संभावना के आधार पर अपीलार्थीगण की ओर से किए गए निवेदन को विधि अनुरूप न होना करार कर अस्वीकार करें ।

6. अन्यथा भी अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत इस अपील में इस अपीलीय न्यायालय को विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्णय व अवार्ड की वैधानिकता अथवा अवैधानिकता पर ही विचार कर अपना मत व्यक्त करना है । जिस तिथि को विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा अपना निर्णय व अवार्ड पारित किया है उस समय भविष्य संभावना के आधार पर आय में वृद्धि कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने का सिद्धांत लागू ही नहीं था तथा यह सिद्धांत माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने अनेक न्यायिक दृष्टांतों में तत्पश्चात् प्रतिपादित किया है ऐसी सूरत में अपीलार्थीगण तत्पश्चात् प्रतिपादित सिद्धांत का लाभ प्राप्त करने के अधिकारी नहीं हैं ।

10. इस न्यायालय की सहपीठ ने एकलपीठ सिविल विधिक अपील संख्या 2391/2007 श्रीमती दयावन्ती देवी और अन्य बनाम रायमल गुर्जर और अन्य में दिनांक 22 अगस्त, 2013 को पारित अपने आदेश में भविष्य संभावना के आधार पर मासिक आय में किसी तरह की वृद्धि किए जाने की प्रार्थना को इस आधार पर मासिक आय पर अस्वीकार किया है कि जिस तिथि को न्यायाधिकरण द्वारा अपना निर्णय व अवार्ड पारित किया गया है उस समय भविष्य संभावना आधार पर मासिक वेतन में वृद्धि किए जाने का सिद्धांत अस्तित्व में ही नहीं था क्योंकि इससे सम्बन्धित अभिमत माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा तत्पश्चात् ही प्रकट किए गए हैं । विद्वान् एकलपीठ ने अपने इस मामले में यह मत व्यक्त किया है कि अपीलीय न्यायालय के रूप में उन्हें विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्णय व अवार्ड की वैधानिकता एवं अवैधानिकता पर ही विचार करना है । समान व्यवहार व समानता के अधिकार को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय पर दायित्व है कि वह एकलपीठ द्वारा अपने उक्त मामले में प्रकट मत के अनुसार ही इस मामले में भी अपना निष्कर्ष दें ।

11. हमने विद्वान् अधिवक्तागण पक्षकारान की ओर से प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया तथा पत्रावली पर उपलब्ध अभिवचनों एवं साक्ष्य तथा सम्बन्धित विधिक प्रावधानों, पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत न्यायिक दृष्टान्तों तथा अन्य सुसंगत न्यायिक दृष्टांतों का ध्यानपर्वक अवलोकन किया ।

12. हमारा सविचार निर्णय व निष्कर्ष निम्न प्रकार है :–

1. पक्षकारों के मध्य विवादित नहीं है कि दुर्घटना एवं मृत्यु के समय मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु 22 वर्ष तथा अपीलार्थी दावेदारों श्रीमती सुप्यार कंवर, जोकि मृतक की माता है की आयु लगभग 60 वर्ष थी, ऐसी सूरत में क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा का निर्धारण उक्त आयु को ध्यान में रखते हुए ही किया जाना है ।

2. यह सही है कि मृतक की आय को प्रमाणित करने के लिए अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत मौखिक एवं प्रलेखीय साक्ष्य के खण्डन में प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी सहित किसी भी प्रत्यार्थीगण द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं की गई किंतु फिर भी प्रस्तुत अभिवचनों व साक्ष्य पर विस्तार से विचार कर कारण अभिलिखित कर विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रेणी का श्रमिक होना निर्धारित कर न्यूनतम मजदूरी के आधार पर उसकी मासिक आय 1,800/- रुपए निर्धारित की है उसे गलत माने जाने का कोई आधार व कारण नहीं है । दिनांक 31 जुलाई, 1999 को प्रस्तुत क्लेम याचिका के चरण संख्या 4 में अपीलार्थीगण द्वारा अभिलिखित किया गया कि मृतक पढ़ाई करता था व ट्यूशन पढ़ाने का धंधा करता था । याचिका के चरण संख्या 6 में मृतक की मासिक आय 9 हजार रुपए निर्धारित करके चरण संख्या 25 में अभिलिखित किया गया कि मृतक बी. ए. द्वितीय वर्ष का छात्र था । याचिका में किसी भी स्थान पर यह स्पष्ट नहीं किया गया कि मृतक ट्यूशन पढ़ाने का कार्य किस प्रकार से तथा किस स्थान पर करता था । याचिका में यह कथन नहीं किया गया कि मृतक किसी प्राइवेट विद्यालय में अथवा अन्य किसी विद्यालय में विद्यार्थियों को ट्यूशन पढ़ाने का कार्य करता था । यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि दिनांक 31 जुलाई, 1999 को प्रस्तुत क्लेम याचिका के साथ अपीलार्थीगण द्वारा अनेक प्रलेखों की प्रतिलिपि प्रस्तुत की गई किन्तु किसी प्राइवेट विद्यालय के विद्यार्थियों को ट्यूशन पढ़ाने के संबंध में वेतन प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया । विचारण के दौरान मृतक की माता

अपीलार्थी-दावेदार श्रीमती सुप्यार कंवर साक्षी के रूप में न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित हुई उसने अपने मौखिक कथन में बताया कि उसका पुत्र प्राइवेट स्कूल में पढ़ाता था व ट्यूशन का काम भी करता था जिस हेतु विद्यालय वाले उसे 5 हजार रुपए देते थे । अपीलार्थियों द्वारा यह भी कथन किया गया कि इसके अलावा वह अनाज का व्यापार कर प्रतिमाह 4 हजार रुपए की आय अर्जित कर लेता था ।

उल्लेखनीय है कि विचारण के दौरान अपीलार्थियों द्वारा यह कथन नहीं किया गया कि मृत्यु पूर्व मृतक श्री सम्पत सिंह बी. ए. द्वितीय वर्ष अथवा अन्य किसी कक्षा का विद्यार्थी था । क्लेम याचिका में इस तथ्य का उल्लेख नहीं किया गया कि मृतक अनाज के व्यापार से प्रतिमाह 4 हजार रुपए अथवा अन्य कोई आय अर्जित करता था । याचिका में मात्र यह कथन किया गया कि वह अपने माता-पिता का सहयोग कृषि कार्य में करता था । यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी श्रीमती सुप्यार कंवर का उक्त कथन दिनांक 17 जनवरी, 2003 को लेखबद्ध किया गया तथा उस दिन प्रथम बार वेतन प्रमाणपत्र के रूप में प्रदर्श-12 प्रस्तुत किया गया । अपने प्रतिपरीक्षण में अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि उसने अपने पुत्र के व्यवसाय संबंधी कोई हिसाब प्रस्तुत नहीं किया है । इस सुझाव को साक्षी ने गलत बताया है कि उसका पुत्र प्रतिमाह 2 हजार रुपए की आय अर्जित करता था तथा अधिक क्लेम राशि प्राप्त करने के लिए मिली-भगत कर झूंठा वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 दिनांक 21 फरवरी, 2003 को लेखबद्ध करवाए गए । अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया कि उसके विद्यालय में मृतक ने 1 अगस्त, 1998 से 20 जून, 1999 तक कक्षा 5, 6, 7 व 8 के विद्यार्थियों की ओर से प्रतिमाह 5 हजार रुपए का वेतन दिया जाता था । साक्षी ने वेतन प्रमाणपत्र दिनांक 9 जनवरी, 2003 प्रदर्श-12 को अपने हस्ताक्षर से जारी होना बताया है ।

उल्लेखनीय है कि साक्षी ने यह कथन किया है कि उनके विद्यालय में मृतक श्री सम्पत सिंह प्राइवेट ट्यूशन पढ़ाने का कार्य करता था । यह तथ्य इस न्यायालय के समझ से परे है कि कोई व्यक्ति किसी विद्यालय में विद्यार्थियों को प्राइवेट ट्यूशन पढ़ाने का कार्य कैसे कर सकता है । अपने प्रतिपरीक्षण में साक्षी ने स्वीकार किया कि उसने अपनी संस्था स्वामी विवेकानन्द शिक्षण संस्थान का अनुज्ञा पत्र, उसकी संस्था द्वारा अन्य शिक्षकों को दिए जाने वाले वेतन आदि के संबंध में कोई प्रलेख न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत

नहीं किया है । साक्षी ने यह भी स्वीकार किया कि वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 पर विद्यालय का डिस्पेच संख्या उल्लिखित नहीं है ।

जैसा पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है यद्यपि क्लेम याचिका के साथ अपीलार्थीगण द्वारा अन्य अनेक प्रलेख प्रस्तुत किए गए किंतु उक्त विद्यालय में तथाकथित रूप से किए गए प्राइवेट ट्यूशन का कार्य कर वेतन के रूप में 5 हजार रुपए प्राप्त किए जाने संबंधी वेतन प्रमाणपत्र अथवा अन्य कोई प्रलेख याचिका के साथ प्रस्तुत नहीं किया गया तथा प्रथम बार यह वेतन प्रमाणपत्र प्रदर्श-12 दिनांक 9 जनवरी, 2003 को जारी किया गया है ।

हम विद्वान् अधिकरण के इस मत से पूर्ण रूप से सहमत हैं कि प्राइवेट ट्यूशन कर मृतक श्री सम्पत सिंह द्वारा प्रतिमाह 5 हजार रुपए अथवा अन्य कोई राशि अर्जित करना पत्रावली पर विद्यमान उक्त साक्ष्य के आधार पर विश्वसनीय नहीं माना जा सकता है, ऐसी सूरत में प्रत्यर्थीगण की ओर से खण्डन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने से भी उक्त तथ्य के संबंध में विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा दिया गया निष्कर्ष पुष्ट किए जाने योग्य है ।

अतः यह निष्कर्ष दिया जाता है कि विद्वान् न्यायाधिकरण ने मृतक श्री सम्पत सिंह को एक कुशल श्रमिक निर्धारित कर प्रतिमाह आय 1,800/- रुपए निर्धारित करने में किसी तरह की कोई तथ्यात्मक एवं विधिक त्रुटि नहीं की है ।

3. जहां तक भविष्य संभावना के मद में प्रतिमाह आय में वृद्धि किए जाने का प्रश्न है, यह स्पष्ट है कि स्वरोजगार अथवा निश्चित वेतन पर कार्य करने वाले व्यक्तियों को इस मद के अधीन लाभ देकर मृत्यु के समय अर्जित मासिक आय में किसी तरह की वृद्धि किए जाने के प्रश्न पर माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधिपतिगण की दो भिन्न पीठों द्वारा परस्पर विरोधाभासी मत व्यक्त किए गए हैं तथा रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और अन्य के न्यायिक दृष्टांत में भी माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधिपतिगण की पीठ ने सरला वर्मा वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धान्त की पुष्टि कर अन्य के अलावा यह मत व्यक्त किया है कि स्वरोजगार एवं निश्चित वेतन पर काम करने वाले व्यक्तियों के मामलों में भी अपवादित परिस्थितियों तथा विरलतम मामलों में उक्त सिद्धांत से अलग हटकर भविष्य संभावना के मद में मासिक आय में

वृद्धि करते हुए क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जा सकता है ।

इस तरह से रेशमा कुमारी और अन्य बनाम मदन मोहन और अन्य के मामले में भी माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधिपतिगण की पीठ का यह सुदृढ़ मत नहीं रहा है कि किसी भी परिस्थिति में स्वरोजगार अथवा निश्चित वेतन पर कार्य करने वाले व्यक्तियों के मामलों में भविष्य संभावना के आधार पर मासिक आय में वृद्धि नहीं की जा सकती । यदि मामला अपवादित श्रेणी का है तो ऐसे मामलों में वृद्धि किए जाने में किसी तरह की कोई बाधा नहीं है ।

वर्तमान मामले में यह पाया गया है कि मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु दुर्घटना व मृत्यु के समय 22 वर्ष थी । प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर उसे कुशल श्रेणी का श्रमिक माना गया है । अपीलार्थी माता की आयु 50 वर्ष तथा पिता की आयु 60 वर्ष होना भी अविवादित है ।

हमारा निश्चित मत है कि मामले के समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की रोशनी में वर्तमान मामला अपवादित श्रेणी का है तथा अपीलार्थीगण मृतक की आय में भविष्य संभावना के आधार पर समुचित वृद्धि करवाए जाने के कानूनन अधिकारी हैं । मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए हम न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित की गई मासिक आय में 50 प्रतिशत की वृद्धि किया जाना न्यायोचित पाते हैं ।

यह सही है कि माननीय दिल्ली उच्च न्यायायल ने अपने कतिपय मामलों में तथा इस न्यायालय की सहपीठ ने भी प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत किए गए मामले में रेशमा कुमारी और अन्य के मामले को आधार बनाकर भविष्य संभावना के आधार पर आय में वृद्धि किए जाने के निष्कर्ष को विधिसम्मत नहीं माना है किन्तु इन मामलों में रेशमा कुमारी और अन्य के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रकट किए गए उक्त अपवादित मत पर विचार तक नहीं किया गया है, ऐसी सूरत में प्रत्यर्थीगण की ओर से किया गया यह निवेदन इस न्यायालय को मान्य नहीं है कि समानता के अधिकार व व्यवहार को ध्यान में रखते हुए इस मामले में भी भविष्य संभावना के आधार पर अपीलार्थीगण की ओर से किए गए निवेदन को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए ।

जहां तक प्रत्यर्थीगण की ओर से ध्यान आकर्षित किए इस न्यायालय की एकलपीठ द्वारा एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 2391/2007 में दिनांक 22 अगस्त, 2013 को प्रकट मत का प्रश्न है

हम विद्वान् एकलपीठ का सम्मान करते हुए उनके द्वारा प्रकट मत से सहमति प्रकट करने में कतई सहमत नहीं हैं । हम सहपीठ के इस मत से कतई सहमत नहीं है कि जिन मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय ने भविष्य संभावना के आधार पर मासिक आय में वृद्धि कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है, वे सभी मामले सम्माननीय एकलपीठ के समक्ष प्रस्तुत मामले में न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्णय व अवार्ड की तिथि के बाद निर्णीत किए गए हैं तथा इस कारणवश इन मामलों में नए रूप से प्रतिपादित सिद्धान्त माननीय सहपीठ के समक्ष प्रस्तुत प्रकरण पर लागू नहीं होगा ।

यह तथ्य उल्लेखनीय है कि श्रीमती सरला वर्मा और अन्य **बनाम** देहली ट्रान्सपोर्ट कॉरेपोरेशन और अन्य, (2009) 6 एस. सी. सी. 121 का निर्णय माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 15 अप्रैल, 2009 को निर्णीत किया गया । इस मामले से संबंधित दुर्घटना दिनांक 8 अप्रैल, 1988 को होना प्रकट है । इस मामले में सूक्ष्म अवलोकन से जाहिर है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने भविष्य संभावना के आधार पर मासिक आय में वृद्धि का सिद्धान्त पहली बार प्रतिपादित नहीं किया है बल्कि पूर्व में माननीय न्यायालय द्वारा निर्णीत कुछ मामलों का उल्लेख उक्त आधार पर आय में वृद्धि में समरूपता लाने के उद्देश्य से माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने इस मामले में मापदण्ड निर्धारित किए हैं ।

जब दिनांक 18 अप्रैल, 1988 को घटित दुर्घटना से संबंधित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने भविष्य संभावना के प्रश्न पर विचार कर इस मामले से संबंधित अपीलार्थीगण को इस सिद्धांत का लाभ प्राप्त करने के अधिकार से केवल इस आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता कि न्यायाधिकरण का निर्णय व अवार्ड दिनांक 1 अप्रैल, 2003 को पारित किया गया है ।

अन्यथा भी माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने जिन-जिन मामलों में भविष्य संभावना के आधार पर प्रतिमाह आय में वृद्धि कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किए जाने का अभिमत प्रकट किया है उनमें से किसी भी मामले में यह मत व्यक्त नहीं किया गया है कि भविष्य संभावना के आधार पर उपयुक्त वृद्धि करते हुए क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन करने का सिद्धान्त प्रथम बार न्यायालय द्वारा प्रतिपादित किया गया है ऐसी सूरत में यह सिद्धान्त केवल भविष्य में प्रस्तुत होने

वाली क्लेम याचिकाओं पर ही लागू होगा ।

हम सम्माननीय सहपीठ के इस मत से भी सहमत नहीं हैं कि अधिनियम के अधीन प्रस्तुत अपील में इस अपीलीय न्यायालय को केवल न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्णय की वैधानिकता अथवा अवैधानिकता को ही विचार कर अपना मत व्यक्त किया जाना होता है ।

विधि की सुस्थापित स्थिति है कि अपील मूल वाद की निरन्तरता के रूप में प्रस्तुत होती है तथा अपीलीय न्यायालय को मामले के उन सभी पहलुओं पर विचार करने की अधिकारिता होती है जो न्यायाधिकरण को प्राप्त है । अधिनियम की धारा 166 के अधीन प्रस्तुत क्लेम याचिका में न्यायाधिकरण को यह देखा जाना होता है कि प्रकरण के समस्त तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्तागण को दुर्घटना फलस्वरूप पहुंची क्षति के अनुपात में अल्प मात्रा में ही क्षतिपूर्ति राशि प्रदान की जानी चाहिए । इस संबंध में सुस्थापित विधिक स्थिति यह भी है कि क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान की जाने वाली राशि प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पीड़ित व्यक्ति को पहुंची क्षति के अनुरूप व अनुपात में होनी चाहिए । यदि न्यायाधिकरण द्वारा प्रदान की गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा से असंतुष्ट होकर उसमें वृद्धि किए जाने की प्रार्थना के साथ अपील प्रस्तुत की जाती है अथवा न्यायाधिकरण द्वारा प्रदान की गई क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा को अत्यधिक एवं अनुचित प्रकट कर उसमें कमी किए जाने की प्रार्थना के साथ बीमा कम्पनी अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा अपील प्रस्तुत की जाती है तो अपीलीय न्यायालय का दायित्व है कि वह प्रकरण के समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की रोशनी में पत्रावली पर विद्यमान अभिवचनों व साक्ष्य तथा प्रचलित विधिक स्थिति की रोशनी में स्वतंत्र रूप से विचार कर उपयुक्त क्षतिपूर्ति राशि की मात्रा की गणना करें ।

4. हम अपीलार्थीगण के अधिवक्ता के इस तर्क से सहमत नहीं है कि अपीलार्थीगण को आय में हुई क्षति की गणना मृतक श्री सम्पत सिंह की आयु को आधार बनाकर की जानी चाहिए न कि अपीलार्थीगण की आयु की ।

इस संबंध में प्रचलित विधिक स्थिति का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया जाए तो यह स्थिति सामने आती है कि यदि मृतक विवाहित व्यक्ति है तथा उसके आश्रितों में धर्म पत्नी के अलावा उसकी संतान

एवं माता-पिता आदि शामिल हैं, तो मृतक की आयु को आधार बनाकर उपयुक्त गुणांक का उपयोग करते हुए आय में हुई क्षति का आंकलन किया जाना चाहिए किन्तु जहां मृतक अविवाहित है तथा आश्रितों के रूप में वृद्ध माता-पिता हैं तो माता-पिता की आयु को आधार बनाकर उपयुक्त गुणांक का उपयोग किया जाना चाहिए ।

वर्तमान प्रकरण में जैसा पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि मृतक की माता अपीलार्थी श्रीमती सुप्यार कंवर की आयु 50 वर्ष तथा उसके पिता श्री डूंगर सिंह की आयु 60 वर्ष होना बताया गया है । क्लेम याचिका में अन्य किसी व्यक्ति को मृतक का आश्रित नहीं बताया है ऐसी सूरत में यदि विद्वान् न्यायाधिकरण ने अपीलार्थीगण की आयु को आधार बनाकर 8 के गुणांक का उपयोग क्षतिपूर्ति राशि के निर्धारण के लिए किया है तो इसे गलत व अनुचित नहीं माना जा सकता तथा इस संबंध में न्यायाधिकरण द्वारा प्रकट निष्कर्ष विधि अनुरूप होने से पुष्ट किए जाने योग्य है ।

5. जहां तक मृतक श्री सम्पत सिंह की व्यक्तिगत एवं निर्वाह व्यय के मद में कटौती किए जाने का प्रश्न है, हम अधिवक्ता प्रत्यार्थीगण के इस तर्क से सहमत हैं कि इस मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती की जाकर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना चाहिए था न कि 1/3 भाग की कटौती की जाकर जैसा विद्वान् न्यायाधिकरण ने किया है ।

यह स्वीकृत तथ्य है कि मृतक अविवाहित था, स्वयं अपीलार्थीगण के अनुसार वह बी. ए. द्वितीय वर्ष का छात्र था । याचिका के अनुसार अपीलार्थीगण स्वयं कृषि कार्य कर स्वतंत्र रूप में आय अर्जित कर रहे थे । माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने एक से अधिक मामलों में अभिमत व्यक्त किया है कि जहां मृतक अविवाहित है तथा आश्रित उसके माता-पिता हैं तो उक्त मद के अधीन 1/2 भाग की कटौती की जाकर ही क्षतिपूर्ति राशि की गणना की जानी चाहिए ।

यह सही है कि उक्त प्रश्न पर विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए निष्कर्ष को प्रत्यर्थी बीमा-कंपनी सहित किसी भी प्रत्यर्थी ने प्रति अपील अथवा प्रति आपत्तियां प्रस्तुत कर चुनौती नहीं दी है किन्तु हमारा निश्चित मत है कि अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत इस अपील में इस अपीलीय न्यायालय को अधिकारिता है कि वह उक्त प्रश्न पर विचार कर अपना स्वतंत्र मत व्यक्त करें । जैसा पूर्व में

उल्लेख किया जा चुका है कि अधिनियम की धारा 173 के अधीन प्रस्तुत अपील अधिनियम की धारा 166क के अधीन प्रस्तुत क्लेम याचिका की निरन्तरता में ही प्रस्तुत की जाती है तथा अपीलीय न्यायालय को उन सभी प्रश्नों पर विचार कर अपना मत व्यक्त करने की अधिकारिता है, जो न्यायाधिकरण को प्राप्त है । अधिनियम की धारा 166 व 168 के अनुसार न्यायाधिकरण/न्यायालय का दायित्व है कि दुर्घटना फलस्वरूप पहुंची क्षति के अनुरूप व अनुपात में न्यायसंगत, युक्तियुक्त एवं समुचित राशि क्षतिपूर्ति राशि के रूप में प्रदान करें ।

उक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त राशि का आंकलन इस अपीलीय न्यायालय द्वारा किया जाना है तथा यदि किसी मामले में यह पाया जाता है कि किसी मद में न्यायाधिकरण द्वारा गलत मापदंड का उपयोग कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया गया है तो अपीलीय न्यायालय इसमें आवश्यक परिवर्तन कर सकता है । ऐसा किए जाने में हम किसी तरह की कोई विधिक बाधा नहीं पाते ।

अतः मृतक श्री सम्पत सिंह की व्यक्तिगत एवं निर्वाह व्यय के मद के अधीन विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा की गई कटौती 1/3 के स्थान पर 1/2 भाग की कटौती कर क्षतिपूर्ति राशि का आंकलन किया जाना न्यायोचित होगा ।

उक्त समस्त विवेचन के आधार पर यह न्यायालय इस मत का है कि अपीलार्थीगण निम्नलिखित राशि आय में हुई क्षति के मद के अधीन प्राप्त करने के अधिकारी हैं :–

1800 + 900 = 2700 – 1350 = 1350 × 12 × 8 = 1,29,600/- रुपए ।

6. हम अधिवक्ता अपीलार्थीगण के इस तर्क से सहमत हैं कि विद्वान् न्यायाधिकरण ने दाह संस्कार के मद में कोई भी राशि अदा न कर कानूनन त्रुटि की है किंतु हम अधिवक्ता के इस तर्क से सहमत नहीं हैं कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा राजेश बनाम राजबीर सिंह और अन्य के मामले में प्रकट किए गए मत के अनुसार अपीलार्थीगण इस मद के अधीन 25 हजार रुपए प्राप्त करने के अधिकारी हैं ।

इस प्रकरण से संबंधित दुर्घटना तिथि 21 जून, 1999 को ध्यान में रखते हुए हम अपीलार्थीगण को इस मद के अधीन 10,000/- रुपए की राशि दिलाया जाना न्यायोचित पाते हैं ।

7. अधिवक्ता अपीलार्थीगण का यह तर्क भी विधिसम्मत होने से स्वीकार किए जाने योग्य है कि अपीलार्थीगण को हुए मानसिक संताप एवं कष्ट के मत के अधीन दिलाई गई राशि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अत्यन्त कम व अनुचित है । अपीलार्थीगण की आयु को दृष्टिगत रखते हुए हम प्रत्येक अपीलार्थी को इस मद के अधीन 15,000-15,000 रुपए यानि कुल 30,000/- रुपए दिलाया जाना उचित पाते हैं ।

8. यद्यपि सम्पदा को हुई क्षति के मद के संबंध में अपीलार्थीगण की ओर से इस अपील की सुनवाई के दौरान किसी राशि की मांग नहीं की गई है किन्तु प्रचलित विधिक स्थिति रोशनी में हम अपीलार्थीगण को इस मद के अधीन 10,000/- रुपए दिलाया जाना उचित पाते हैं ।

13. इस तरह से उक्त समस्त विवेचन के आधार पर अपीलार्थीगण-दावेदारों विभिन्न मदों में निम्नलिखित राशि प्राप्त करने के अधिकारी पाए जाते हैं :–

1. अपीलार्थीगण को हुई आय की क्षति के रूप में दिलाई गई राशि 1,15,200/- रुपए के स्थान पर 1,29,600/- रुपए की राशि दिलाई जाती है ।	1,29,600/- रुपए
2. अपीलार्थीगण को अपने पुत्र की मृत्यु के कारण उत्पन्न मानसिक संताप एवं कष्ट के मद के अधीन दिलाई गई 4,800/- रुपए की राशि के स्थान पर प्रत्येक को 15,000-15,000 रुपए की राशि दिलाई जाती है, जो कुल सदस्य संख्या के अनुसार 15,000 × 2 = 30,000/- रुपए होंगे ।	30,000/- रुपए
3. दाह संस्कार के मद के अधीन 10,000/- रुपए की राशि पृथक् से दिलाई जाती है ।	10,000/- रुपए
4. सम्पदा में हुई क्षति के मद में 10,000/- रुपए की राशि पृथक् से दिलाई जाती है ।	10,000/- रुपए
	1,79,600/- रुपए

14. इस तरह से अपीलार्थीगण क्षतिपूर्ति के रूप में कुल 1,79,600/- रुपए प्राप्त करने का अधिकारी हैं । विद्वान् न्यायाधिकरण द्वारा पूर्व में 1,21,000/- रुपए की राशि प्रदान की जा चुकी है । इसलिए अपीलार्थीगण-दावेदार क्षतिपूर्ति के रूप में 58,600/- रुपए और प्राप्त करने के अधिकारी हैं ।

15. अतः अपीलार्थीगण-दावेदारों, प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी से अतिरिक्त राशि के रूप में 58,600/- रुपए तथा इस राशि पर क्लेम याचिका प्रस्तुत तिथि से भुगतान तिथि तक 6 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज भी प्राप्त करने के अधिकारी हैं ।

16. प्रत्यर्थी-बीमा कम्पनी को निर्देश दिया जाता है कि वह उक्त प्रकार से बढ़ाई गई अतिरिक्त राशि सहित ब्याज के आज से एक माह की अवधि में सम्बन्धित न्यायाधिकरण के समक्ष नियमानुसार जमा कराएं ।

17. विद्वान् न्यायाधिकरण को निर्देश दिया जाता है कि प्रत्यर्थी-बीमा कंपनी द्वारा उक्त प्रकार राशि जमा कराए जाने के उपरान्त अपीलार्थीगण की पहचान की पुष्टि करते हुए उनको सुनवाई का अवसर देते हुए इस अतिरिक्त राशि के भुगतान के संबंध में अपने विवेकाधिकार का उपयोग करते हुए उपयुक्त आदेश पारित करेगा ।

18. अतः अपीलार्थीगण-दावेदारों की ओर से प्रस्तुत अपील आंशिक रूप से स्वीकार करके उक्त कारणों से निस्तारित की जाती है । पक्षकार इस अपील का खर्चा अपना-अपना स्वयं वहन करें ।

संबंधित न्यायाधिकरण का रिकार्ड तुरन्त वापस भिजवाया जाए ।

अपील आंशिक रूप से मंजूर की गई ।

मही./क.

ओरियंटल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड

बनाम

सुदेश कुमारी और अन्य

तारीख 4 अप्रैल, 2014

न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 और 2(21) – यानीय दुर्घटना – ट्रैक्टर चालक द्वारा ट्रैक्टर को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण स्कूटर से टक्कर होना – टक्कर के परिणामस्वरूप स्कूटर चालक की मृत्यु होना – दुर्घटना के समय ट्रैक्टर चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति होना – बीमा पालिसी के अधीन ट्रैक्टर चलाया जाना – बीमाकर्ता का दायित्व – यदि यह साबित कर दिया जाता है कि ट्रैक्टर बीमा पालिसी के अधीन चलाया जा रहा था तथा ट्रैक्टर चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति थी और ट्रैक्टर चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक ट्रैक्टर चलाने के कारण दुर्घटना घटित हुई जिसके परिणामस्वरूप स्कूटर चालक क्षतिग्रस्त हुआ और कारित क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हुई तो बीमा कंपनी अपने दायित्व से इस आधार पर बच नहीं सकती कि यान बीमा पालिसी के अधीन नहीं चलाया जा रहा था ।

वर्तमान मामले में, प्रवीण कुमार, दावेदार सं. 1 का पति, दावेदार सं. 2 और 3 का पिता और दावेदार सं. 4 का पुत्र, तारीख 25 जून, 2003 को अपने स्कूटर सं. एच पी 19ए 7675 से यात्रा कर रहा था और अपने कार्यालय के रास्ते पर था । जब वह मुबारकपुर के पास पहुंचा तो एक ट्रैक्टर रजिस्ट्रीकरण सं. एच पी 19ए 0434, जिसे रमेश चन्द नामक चालक उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था, ने उसके स्कूटर को टक्कर मार दी । जिसके परिणामस्वरूप प्रवीण कुमार को गंभीर क्षतियां कारित हुईं और उसे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, अम्ब ले जाया गया जहां से उसे पी. जी. आई., चंडीगढ़ स्थानांतरित कर दिया गया और पी. जी. आई. के रास्ते में ही क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । दावेदारों द्वारा यह अभिवाक् किया गया है कि मृतक वेतन के रूप में प्रतिमाह 9,000/- रुपए कमा रहा था और उसकी आयु 39 वर्ष थी । इस प्रकार, दावेदारों ने

आश्रिती के स्रोत को खो दिया है, इसलिए, उन्होंने दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार कुल रु. 30 लाख प्रतिकर का दावा किया । प्रत्यर्थियों अर्थात् चालक, स्वामी और बीमाकर्ता ने दावा याचिका का विरोध किया । अधिकरण ने सम्पूर्ण साक्षियों की सूक्ष्म संवीक्षा करने के पश्चात् सभी विवाद्यकों को दावेदारों के पक्ष में और प्रत्यर्थियों के विरुद्ध विनिश्चित किया और दावेदारों को दावा याचिका की तारीख से अधिनिर्णीत रकम उद्गृहीत किए जाने तक 7.5 प्रतिशत ब्याज के साथ 8,71,551/- रुपए का प्रतिकर पाने का हकदार अभिनिर्धारित किया । अधिनिर्णय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अंतिम हो गए जहां तक यह बीमाकृत/स्वामी और चालक से संबंधित हैं, क्योंकि उन्होंने इसे प्रश्नगत करने का विकल्प नहीं चुना । किंतु इससे व्यथित होकर बीमाकर्ता-अपीलार्थी ने वर्तमान अपील फाइल की । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – दावेदारों ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों से यह साबित कर दिया है कि मृतक, जो एक सरकारी कर्मचारी था, की दुर्भाग्यपूर्ण दिन अर्थात् तारीख 25 जून, 2003 को स्कूटर से अपने कार्यालय जा रहा था तो रास्ते में मुबारकपुर में अपराध करने वाले यान ने उसे टक्कर मार दी थी जिसे उसका चालक उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां कारित हुईं और जब उसे पी. जी. आई., चंडीगढ़ ले जाया जा रहा था तो रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई । प्रत्यर्थियों अर्थात् स्वामी, बीमाकृत, चालक और बीमाकर्ता द्वारा इसके प्रतिकूल कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । इस प्रकार, दावेदारों द्वारा दिए गए साक्ष्य से यह विवाद्यक साबित होता है जो अखंडनीय रहा और तद्नुसार, विद्वान् अधिकरण ने निष्कर्ष अभिलिखित किया और दावेदारों के पक्ष में सही ही निष्कर्ष निकाला है, जो कायम रखे जाने योग्य है । बीमाकर्ता को यह साबित करना था कि अपराध करने वाले ट्रैक्टर के चालक के पास प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी और स्वामी/बीमाकृत ने भंग कारित किया है । अपीलार्थी-बीमाकर्ता के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जी. सी. गुप्ता द्वारा दिया गया तारांकित तर्क यह है कि अपराध करने वाला ट्रैक्टर बीमा पालिसी में उपबंधित निबंधनों और शर्तों के अनुसार नहीं चलाया जा रहा था क्योंकि उक्त ट्रैक्टर चालक के पास हल्का मोटर यान चलाने की चालन अनुज्ञप्ति थी और यह कि ट्राली के साथ ट्रैक्टर हल्के मोटर यान की परिभाषा के भीतर नहीं आता है । इस प्रकार, श्री गुप्ता ने यह तर्क दिया कि स्वामी/बीमाकृत ने बीमा पालिसी में अन्तर्विष्ट निबंधनों और शर्तों के भंग में कार्य किया है । अपीलार्थी के

विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के तर्कों में कोई बल नहीं है इस कारण से कि विचारण न्यायालय की फाइल पर चालन अनुज्ञप्ति की फोटोप्रति प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए से यह दर्शित होता है कि चालक हल्के मोटर यान को चलाने के लिए सक्षम था और उक्त अनुज्ञप्ति दुर्घटना के समय पर वैध थी । बीमा पालिसी प्रदर्श आर. बी. से भी यह प्रकट होता है कि यान स्वराज ट्रैक्टर से बीमाकृत था । बीमाकर्ता ने अधिकरण के समक्ष फाइल उत्तर में यह अभिवाक् नहीं किया है कि ट्रैक्टर को ट्राली के साथ चलाया जा रहा था और ट्रैक्टर का भार, मोटर यान अधिनियम, 1988 में विहित हल्के मोटर यान के भार से अधिक था । यह निर्विवादित विधि का सिद्धांत है कि बीमाकर्ता को यह अभिवाक् और साबित करना चाहिए कि अपराध करने वाले यान के स्वामी ने जानबूझकर पालिसी में अन्तर्विष्ट निर्बंधनों को भंग किया है और मात्र यहां वहां का अभिवाक् ही भार मुक्ति के लिए आधार नहीं हो सकता है । अधिकरण के समक्ष दावेदारों का सकारात्मक पक्षकथन यह है कि मृतक एक सरकारी कर्मचारी था । दावेदारों ने मृतक के वेतन प्रमाणपत्र को अभिलेख पर रखा है, जिससे यह प्रकट होता है कि मृतक का वेतन रु. 8,218 था । मृतक के वेतन से 1/3 भाग घटाने के पश्चात्, अधिकरण द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि दावेदारों ने रु. 5,458.66 प्रतिमाह की आश्रिती के स्रोत को खोया है । दावेदारों ने दावा याचिका के पैराग्राफ 3 में यह अभिवाक् किया है कि मृतक की आयु 39 वर्ष थी, किन्तु शव-परीक्षा रिपोर्ट के अनुसार, मृतक की आयु 40 वर्ष थी । इस मत को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने मृतक की आयु 40 वर्ष माना और 13 का गुणक लागू किया, जो न्यायसंगत और समुचित है । (पैरा 9, 11, 14 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 10 एस. सी. सी. 217 : **पेप्सू सड़क परिवहन निगम** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लि. ;**	16
[2013]	2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120 : **रमेश कुमारी और अन्य** बनाम **मदन मोहन और एक अन्य ;**	19
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 121 : **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य ;**	19

[2004] [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर.
2004 एस. सी. 1531 :
नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड बनाम
स्वर्ण सिंह और अन्य । 15

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 की एफ. ए. ओ. सं. 293.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री जी. सी. गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री मीरा देवी, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 की ओर से श्री राहुल महाजन, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 5 की ओर से एकपक्षीय

प्रत्यर्थी सं. 6 की ओर से श्री राजेश वर्मा, प्राक्सी काउंसेल

न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर – अपीलार्थी-इंश्योरेंस कम्पनी ने मोटर यान अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 173 के निबंधनों में इस न्यायालय की अधिकारिता का अवलंब लिया है और मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, ऊना (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिकरण" कहा गया है) द्वारा 2003 की एम. ए. सी. याचिका सं. 38, शीर्षक सुदेश कुमारी और अन्य बनाम रमेश चन्द्र और अन्य में पारित तारीख 30 जून, 2006 के अधिनिर्णय (जिसे इसमें इसके पश्चात् "आक्षेपित अधिनिर्णय" कहा गया है) को प्रश्नगत किया है, जिसके द्वारा उन्होंने दावेदारों (इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 से 4) के पक्ष में कुल रु. 8,71,551 अधिनिर्णीत किया है और अपीलार्थी को आक्षेपित अधिनिर्णय की तुष्टि करने का निर्देश दिया है ।

2. मामले की पृष्ठभूमि देना आवश्यक है जिनसे वर्तमान अपील उद्भूत हुई है । प्रवीण कुमार, दावेदार सं. 1 का पति, दावेदार सं. 2 और 3 का पिता और दावेदार सं. 4 का पुत्र, तारीख 25 जून, 2003 को अपने स्कूटर सं. एच पी 19ए 7675 से यात्रा कर रहा था और अपने कार्यालय के रास्ते पर था । जब वह मुबारकपुर के पास पहुंचा तो एक ट्रैक्टर रजिस्ट्रीकरण सं. एच पी 19ए 0434, जिसे रमेश चन्द नामक चालक उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था, ने उसके स्कूटर को टक्कर मार दी । जिसके परिणामस्वरूप प्रवीण कुमार को गंभीर क्षतियां कारित हुईं और उसे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, अम्ब ले जाया गया जहां से उसे पी. जी.

आई., चंडीगढ़ स्थानांतरित कर दिया गया और पी. जी. आई. के रास्ते में ही क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । दावेदारों द्वारा यह अभिवाक् किया गया है कि मृतक वेतन के रूप में प्रतिमाह 9,000/- रुपए कमा रहा था और उसकी आयु 39 वर्ष थी । इस प्रकार, दावेदारों ने आश्रिती के स्रोत को खो दिया है, इसलिए, उन्होंने दावा याचिका में दिए गए विवरणों के अनुसार कुल रु. 30 लाख प्रतिकर का दावा किया ।

3. प्रत्यर्थियों अर्थात् चालक, स्वामी और बीमाकर्ता ने दावा याचिका का विरोध किया ।

4. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, अधिकरण ने निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :–

> "1. क्या प्रत्यर्थी सं. 1 तारीख 25 जून, 2003 को ट्रैक्टर सं. एच पी 19ए 0434 को मुबारकपुर में उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था जिसके परिणामस्वरूप प्रवीण कुमार की मृत्यु हुई, जैसा कि अभिकथित है ?
>
> 2. यदि विवाद्यक सं. 1 साबित हो जाता है तो क्या याची प्रतिकर पाने के हकदार है, यदि ऐसा है तो कितनी रकम और किनसे ?
>
> 3. क्या प्रत्यर्थी सं. 1 के पास ट्रैक्टर चलाते समय वैध और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी, जिसे बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अतिक्रमण में और बिना किसी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र और बिना रूट परमिट के चला रहा था, जैसा कि अभिकथित है ?
>
> 4. क्या प्रत्यर्थी सं. 3 प्रतिकर की क्षतिपूर्ति के लिए दायी नहीं है, जैसा कि अभिकथित है ?
>
> 4क. क्या तारीख 25 जून, 2003 का इंश्योरेंस कवर नोट एक कपटपूर्ण दस्तावेज है । यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव होगा ?
>
> 5. अनुतोष ।"

5. दावेदारों ने अपने पक्षकथन के समर्थन में कम से कम 5 साक्षियों, जिनमें दावेदार सुदेश कुमारी भी सम्मिलित थी, की परीक्षा की जबकि अपराध करने वाले ट्रैक्टर का चालक रमेश चन्द स्वयं प्रत्यर्थी साक्षी 1 के रूप में साक्षी कठघरे में उपस्थित हुआ और बीमा कम्पनी की कर्मचारी

सीमा पाठक की प्रत्यर्थी साक्षी 2 के रूप में परीक्षा हुई ।

6. अधिकरण ने सम्पूर्ण साक्षियों की सूक्ष्म संवीक्षा करने के पश्चात् सभी विवाद्यकों को दावेदारों के पक्ष में और प्रत्यर्थियों के विरुद्ध विनिश्चित किया और दावेदारों को दावा याचिका की तारीख से अधिनिर्णीत रकम उद्गृहीत किए जाने तक 7.5 प्रतिशत ब्याज के साथ रु. 8,71,551 का प्रतिकर पाने का हकदार अभिनिर्धारित किया ।

7. अधिनिर्णय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अंतिम हो गए जहां तक यह बीमाकृत/स्वामी और चालक से संबंधित हैं, क्योंकि उन्होंने इसे प्रश्नगत करने का विकल्प नहीं चुना । तथापि, बीमाकर्ता-अपीलार्थी ने वर्तमान अपील फाइल करते हुए इसे प्रश्नगत किया ।

8. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों की संवीक्षा की । मैं, अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पर विवाद्यकवार चर्चा करना समुचित समझता हूं ।

विवाद्यक सं. 1

9. दावेदारों ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों से यह साबित कर दिया है कि मृतक, जो एक सरकारी कर्मचारी था, की दुर्भाग्यपूर्ण दिन अर्थात् तारीख 25 जून, 2003 को स्कूटर से अपने कार्यालय जा रहा था तो रास्ते में मुबारकपुर में अपराध करने वाले यान ने उसे टक्कर मार दी थी जिसे उसका चालक उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां कारित हुईं और जब उसे पी. जी. आई. चंडीगढ़ ले जाया जा रहा था तो रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई । प्रत्यर्थियों अर्थात् स्वामी, बीमाकृत, चालक और बीमाकर्ता द्वारा इसके प्रतिकूल कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । इस प्रकार, दावेदारों द्वारा दिए गए साक्ष्य से यह विवाद्यक साबित होता है जो अखंडनीय रहा और तद्नुसार, विद्वान् अधिकरण ने निष्कर्ष अभिलिखित किया और दावेदारों के पक्ष में सही ही निष्कर्ष निकाला है, जो कायम रखे जाने योग्य है और तद्नुसार, इसे कायम रखा जाता है ।

10. विवाद्यक सं. 2 पर विचार करने के पूर्व मैं विवाद्यक सं. 3, 4 और 4क पर चर्चा करना समुचित समझता हूं ।

विवाद्यक सं. 3

11. बीमाकर्ता को यह साबित करना था कि अपराध करने वाले

ट्रैक्टर के चालक के पास प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी और स्वामी/बीमाकृत ने भंग कारित किया है । अपीलार्थी-बीमाकर्ता के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जी. सी. गुप्ता द्वारा दिया गया तारांकित तर्क यह है कि अपराध करने वाला ट्रैक्टर बीमा पालिसी में उपबंधित निबंधनों और शर्तों के अनुसार नहीं चलाया जा रहा था क्योंकि उक्त ट्रैक्टर चालक के पास हल्का मोटर यान चलाने की चालन अनुज्ञप्ति थी और यह कि ट्राली के साथ ट्रैक्टर हल्के मोटर यान की परिभाषा के भीतर नहीं आता है । इस प्रकार, श्री गुप्ता ने यह तर्क दिया कि स्वामी/बीमाकृत ने बीमा पालिसी में अन्तर्विष्ट निबंधनों और शर्तों के भंग में कार्य किया है । अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के तर्कों में कोई बल नहीं है इस कारण से कि विचारण न्यायालय की फाइल पर चालन अनुज्ञप्ति की फोटोप्रति प्रदर्श आर. डब्ल्यू. 1/ए से यह दर्शित होता है कि चालक हल्के मोटर यान को चलाने के लिए सक्षम था और उक्त अनुज्ञप्ति दुर्घटना के समय पर वैध थी । बीमा पालिसी प्रदर्श आर. बी. से भी यह प्रकट होता है कि यान स्वराज ट्रैक्टर से बीमाकृत था । बीमाकर्ता ने अधिकरण के समक्ष फाइल उत्तर में यह अभिवाक् नहीं किया है कि ट्रैक्टर को ट्राली के साथ चलाया जा रहा था और ट्रैक्टर का भार, मोटर यान अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) में विहित हल्के मोटर यान के भार से अधिक था ।

12. अधिनियम, 1988 की धारा 2(21) को यहां प्रस्तुत करना उचित है :–

> "2. .....
>
> (21) 'हल्का मोटर यान' से अभिप्रेत है ऐसा कोई परिवहन यान या बस जिसमें से किसी का सकल यान भार, या ऐसी मोटर कार या ट्रैक्टर या रोड-रोलर जिसमें से किसी का लदान रहित भार, 6,000 किलोग्राम से अधिक नहीं है ।"

13. इस प्रकार, उपर्युक्त उपबंध स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि ट्रैक्टर जिसका लदान रहित भार 7,500 किलोग्राम से अधिक नहीं है, "हल्का मोटर यान" की परिभाषा के भीतर आएगा । क्या ट्रैक्टर माल सहित या अन्यथा यान की प्रकृति में परिवर्तन नहीं करता है । यान का माडल, जैसा कि बीमा पालिसी और अन्य दस्तावेजों में दिया गया है, ट्रैक्टर, जो उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार एक हल्का मोटर यान है । स्वीकृततः, अपराध करने वाले यान के चालक के पास "हल्के मोटर यान"

की परिभाषा के भीतर आने वाले यानों को चलाने के लिए चालन अनुज्ञप्ति थी । अधिकरण ने भी विस्तृत रूप से चर्चा की है कि ट्रैक्टर "हल्के मोटर यान" की परिभाषा के अन्तर्गत आता है और तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया कि अपराध करने वाले यान के चालक के पास वैध और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति थी । इस प्रकार, श्री गुप्ता द्वारा दिया गया तर्क कायम रखे जाने योग्य नहीं है और तद्नुसार, इस विवाद्यक पर अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष कायम रखे जाते हैं ।

विवाद्यक सं. 4

14. यह निर्विवादित विधि का सिद्धांत है कि बीमाकर्ता को यह अभिवाक् और साबित करना चाहिए कि अपराध करने वाले यान के स्वामी ने जानबूझकर पालिसी में अन्तर्विष्ट निर्बंधनों को भंग किया है और मात्र यहां वहां का अभिवाक् ही भार मुक्ति के लिए आधार नहीं हो सकता है ।

15. मेरे इस मत की पुष्टि माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में की है । निर्णय के पैरा 105 के सुसंगत भाग को यहां नीचे प्रस्तुत करना उचित होगा :–

> "105. .....
>
> (i) .....
>
> (ii) .....
>
> (iii) बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से बचने के लिए पालिसी की शर्त का भंग अर्थात् अधिनियम की धारा 149 की उपधारा 2(क)(ii) में यथाअंतर्विष्ट चालक अयोग्यता या चालक द्वारा अविधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति को बीमाकृत व्यक्ति द्वारा किया गया साबित होना चाहिए । मात्र चालन अनुज्ञप्ति का न होना, उसका जाली या अविधिमान्य होना या सुसंगत समयबिंदु पर यान चालन के लिए चालक की अयोग्यता स्वयमेव ही बीमाकृत व्यक्ति या पर-व्यक्ति के विरुद्ध बीमाकर्ता को उपलब्ध प्रतिरक्षाएं नहीं हैं । बीमाकृत व्यक्ति के विरुद्ध अपने दायित्व से बचने के लिए बीमाकर्ता को यह साबित करना चाहिए कि बीमाकृत व्यक्ति उपेक्षा का दोषी था और वह सम्यक् रूप से अनुज्ञप्ति प्राप्त चालक या ऐसे व्यक्ति द्वारा जो सुसंगत समय पर

---

[1] [2004] 3 उम. नि. प. 24 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1531.

यान के चालन के लिए अयोग्य नहीं था, यानों के प्रयोग के संबंध में पालिसी की शर्तों को पूरा करने के मामले में युक्तियुक्त सावधानी बरतने में विफल रहा ।

(iv) तथापि, बीमा कंपनियों को अपने दायित्व को टालने के लिए न केवल उक्त कार्यवाहियों में उपलब्ध प्रतिरक्षा(ओं) को सिद्ध करना चाहिए अपितु यान के स्वामी की ओर से 'भंग' को भी सिद्ध करना चाहिए ; जिसके सबूत का भार उन पर होगा ।

(v) .....

(vi) यहां तक कि जहां बीमाकर्ता चालक द्वारा विधिमान्य अनुज्ञप्ति धारण करने या सुसंगत अवधि के दौरान यान चालन की अपनी अर्हता से संबंधित पालिसी की शर्त से संबंधित बीमाकृत व्यक्ति के भंग को साबित कर देता है तो उसे (बीमाकर्ता को) उस समय तक बीमाकृत व्यक्ति के प्रति अपने दायित्व को टालने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक कि चालन अनुज्ञप्ति की शर्तों के उक्त भंग इतने मौलिक न हों कि वे दुर्घटना से संबंधित पाए जाएं । पालिसी की शर्तों का निर्वचन करते समय अधिकरण अधिनियम की धारा 149(3) के अधीन बीमाकृत व्यक्ति को उपलब्ध प्रतिरक्षाओं को अनुज्ञात करने से संबंधित मूल भंग की संकल्पना और मुख्य प्रयोजन के नियम को लागू करेगा ।"

16. **पेप्सू सड़क परिवहन निगम** बनाम **नेशनल इंश्योरेंश कंपनी लि.**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के नवीनतम निर्णय के पैरा 10 को यहां नीचे प्रस्तुत करना भी लाभदायक हो सकता है :–

"10. प्रतिकर के लिए दावे में धारा 149(2)(क)(ii) के अधीन बीमाकर्ता के लिए सुनिश्चित तौर पर यह खुला होता है कि वह यह प्रतिरक्षा ले सके कि दुर्घटना में अन्तर्वलित यान का चालक सम्यक् रूप से अनुज्ञप्त नहीं था । जब एक बार ऐसी प्रतिरक्षा ले ली जाती है तो सबूत का भार बीमाकर्ता पर हो जाता है । किन्तु, इसके पश्चात् भी यह साबित करना होता है कि चालक के पास अनुज्ञप्ति जाली है, क्या बीमाकर्ता पर यह दायित्व होता है, यह एक विवाद्य प्रश्न है । जहां तक यान के स्वामी का संबंध है, जब वह एक चालक किराए

[1] (2013) 10 एस. सी. सी. 217.

पर लेता है तो उसे यह जांच करनी होती है कि क्या चालक के पास वैध चालन अनुज्ञप्ति है । इसके पश्चात्, उसे चालक की क्षमता के बारे में स्वयं का समाधान होना चाहिए । यदि इस बारे में उसका समाधान हो जाता है तो यह कहा जा सकता है कि स्वामी ने उस व्यक्ति को नियोजित करने में युक्तियुक्त सावधानी बरती थी, जो अर्ह है और यान चलाने के लिए सक्षम है । स्वामी से इसके परे जाने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है कि वह चालक की सेवाएं लेने के पूर्व अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से प्राप्त चालन अनुज्ञप्ति की सत्यता के बारे में सत्यापन कर सके । तथापि, परिस्थिति उस समय भिन्न होगी यदि यान के बीमा के समय पर या इसके पश्चात् बीमा कम्पनी यान के स्वामी से यह अपेक्षा करती है कि वह अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से अनुज्ञप्ति को सम्यक् रूप से सत्यापित कराए या यदि यान के स्वामी का ध्यान अन्यथा आकर्षित किया जाता है, यह अभिकथन करते हुए कि उसके द्वारा नियोजित चालक को जारी अनुज्ञप्ति जाली है और फिर भी स्वामी अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से अनुज्ञप्ति की सत्यता के बारे में मामले का सत्यापन करने के लिए समुचित कार्रवाई नहीं करता है । क्या इसे स्वर्ण सिंह वाले मामले में स्पष्टीकृत किया गया है । यदि स्वामी की ऐसी सूचना के बावजूद कि उसके चालक द्वारा धारित अनुज्ञप्ति जाली है, उसके बाद भी समुचित सत्यापन के लिए बीमाकृत द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की जाती है तो बीमाकृत की गलती होगी और ऐसी परिस्थितियों में बीमा कम्पनी प्रतिकर के लिए दायी नहीं है ।"

17. तद्नुसार, यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बीमाकर्ता-अपीलार्थी अपने सबूत के भार का निर्वहन करने में असफल रहा है और इसलिए, इस विवाद्यक के बारे में अपीलार्थी-बीमाकर्ता के विरुद्ध अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष कायम रखे जाने योग्य हैं ।

विवाद्यक सं. 4क

18. बीमाकर्ता ने यह अभिवाक् किया है कि इंश्योरेंस कवर नोट, दुर्घटना के ही दिन तैयार किए जाने के कारण एक कपटपूर्ण दस्तावेज है । बीमाकर्ता ने इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं दिया है, अतएव, वह इस भार का निर्वहन करने में भी असफल रहा है । इस प्रकार, इस विवाद्यक पर अधिकरण द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष भी कायम रखे जाते हैं ।

विवाद्यक सं. 2

19. अब, विवाद्यक सं. 2 पर विचार करते हैं, अधिकरण के समक्ष दावेदारों का सकारात्मक पक्षकथन यह है कि मृतक एक सरकारी कर्मचारी था । दावेदारों ने मृतक के वेतन प्रमाणपत्र को अभिलेख पर रखा है, जिससे यह प्रकट होता है कि मृतक का वेतन रु. 8,218 था । मृतक के वेतन से 1/3 भाग घटाने के पश्चात्, अधिकरण द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि दावेदारों ने रु. 5,458.66 प्रतिमाह की आश्रिती के स्रोत को खोया है । दावेदारों ने दावा याचिका के पैराग्राफ 3 में यह अभिवाक् किया है कि मृतक की आयु 39 वर्ष थी, किन्तु शव-परीक्षा रिपोर्ट के अनुसार, मृतक की आयु 40 वर्ष थी । इस मत को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने मृतक की आयु 40 वर्ष माना और 13 का गुणक लागू किया, जो न्यायसंगत और समुचित है, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है जिसे माननीय उच्चतम न्यायालय के बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा **रमेश कुमारी और अन्य** बनाम **मदन मोहन और एक अन्य**[2] वाले मामले में भी कायम रखा गया है । इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आक्षेपित अधिनिर्णय न तो अत्यधिक है न ही अपर्याप्त है ।

20. अधिकरण ने इसमें उपर्युक्त दिए गए कारणों से सही ही बीमाकर्ता तक दायित्व डाला है ।

21. तद्नुसार, यह अपील गुणागुणों के आधार पर खारिज किए जाने योग्य है और इस प्रकार, इसे खारिज किया जाता है । रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि अधिकरण के आदेशानुसार दावेदारों के पक्ष में अधिनिर्णीत रकम अवमुक्त करें । अधिकरण के अभिलेख को इस निर्णय की प्रति के साथ वापस भेजा जाए ।

अपील खारिज की गई ।

क.

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

[2] 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3120.

जय प्रकाश शर्मा

बनाम

सुशील कुमार शर्मा

तारीख 29 अप्रैल, 2014

न्यायमूर्ति धरम चन्द चौधरी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 और आदेश 39 – द्वितीय अपील – स्थायी व्यादेश – विवादित संयुक्त आबादी भूमि अधिकारधारकों के बीच विभाजित नहीं होना – भूमि का प्रयोग सामान्य प्रयोजनों जैसे रास्ते आदि के लिए किया जाना – अधिकारधारकों में एक द्वारा उस भूमि पर सेप्टिक टैंक का निर्माण करना – सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् भूमि बराबर करना जिससे भूमि का सार्वजनिक उपयोग बाधित न हो – इस प्रकार की भूमि अधिक्रमण को रोकने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की मांग करना – मांग खारिज होना – उपर्युक्त परिस्थितियों में स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की मांग खारिज करना समुचित, सही और न्यायोचित है ।

वर्तमान मामले का सार यह है कि वर्ष 2000-01 के लिए जमाबंदी की प्रविष्टियों प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए के अनुसार ग्राम भोंग, डाकघर राउंडी, तहसील और जिला शिमला में स्थित खेवट सं. 8/8, खतौनी सं. 11, खसरा सं. 26, माप 0-19-0 बीघा में प्रविष्ट आबादी भूमि है । वादी ने उसमें से 4 बीघा तक भूमि अपने हिस्से में होने का दावा किया है । स्वीकृततः, उसका गृह और प्रत्यर्थी, जिसे इसमें इसके पश्चात् प्रतिवादी कहा गया है, का गृह उसी स्थान पर मौजूद है जो विवादित भूमि से सटा हुआ है । वादी के पक्षकथन के अनुसार, उसका गृह और प्रतिवादी के साथ ही अन्य हिस्सेदारों के गृह विवादित भूमि के ऊपर मौजूद हैं और इस कारण से उस भूमि को जमाबंदी में गैर-मुमकिन आबादी के रूप में प्रविष्ट किया गया है । शेष भूमि का सभी हिस्सेदारों द्वारा संयुक्त रूप से सामान्य प्रयोजन, जैसे रास्ते, विवाह, धार्मिक कृत्यों और पशुओं के आने-जाने इत्यादि के लिए इसमें के किसी विशिष्ट हिस्सेदारों के अनन्य अधिकार होने के बिना ही प्रयोग किए जाते थे । उसका प्रयोग उसके गृह और प्रतिवादी के गृह के शहन के रूप में भी किया जाता था । तारीख 29 जनवरी,

2009 को अभिकथित तौर पर प्रतिवादी ने सह-हिस्सेदारों से जुड़े प्रथागत और परम्परागत व्यवस्थाओं का अतिलंघन करते हुए उस भूमि पर उनके रास्ते के अधिकार और अन्य क्रियाकलापों का प्रयोग करने से वादी और अन्य हिस्सेदारों को वंचित करने को दृष्टिगत रखते हुए, बलपूर्वक उस पर निर्माण करने के लिए भूमि के एक भाग को खोदना प्रारम्भ कर दिया था । प्रतिवादी ने वादी से ऐसी क्रियाकलाप बन्द करने का निवेदन किया किन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि वह छीना-झपटी पर उतर आया और उस भूमि पर वादी और अन्य हिस्सेदारों के अधिकारों को क्षति पहुंचाते हुए, उसे अपने अधिभोग में ले लिया । अतएव, प्रतिवादी को विवादित भूमि में हस्तक्षेप करने और अधिक्रमण करने से अवरुद्ध करने तथा बाधा, यदि कोई हो, जो वाद लम्बित रहने के दौरान कोई कारित की गई है तो उसे भी हटाने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक डिक्री के लिए वाद फाइल किया गया । लिखित कथन में, प्रतिवादी ने वाद कायम रखने, विबंधन और वाद हेतुक के प्रश्न भी उद्भूत करते हुए, के आधारों पर वाद का विरोध किया । गुणागुणों पर, यह दावा किया गया है कि उनके पूर्वजों के समय से ही पक्षकारों के अधिकारों के बीच विभाजन करते हुए भूमि विभाजित कर दी गई थी और अब संबंधित पक्षकारों के हिस्से अपनी सीमा तक भूमि कब्जे में हैं । इस बात से इनकार किया गया है कि खाली भूमि सामान्य प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाती है । यह भी निवेदन किया गया है कि सही हिस्सेदारों के गृहों के सामने आने वाले क्षेत्र, जो भी हों, उन्हें आबंटित कर दिए गए हैं और वे उनके अनन्य कब्जे में हैं । तीसरा गृह, श्री अमर चन्द का होना कथित है और उसके गृह के सामने की भूमि उसके अनन्य कब्जे में है । वादी अभिकथित तौर पर वादपत्र में दावाकृत किसी प्रथा का अभिवाक् करने में असफल रहा । इसलिए, यह निवेदन किया गया है कि चूंकि, प्रतिवादी के गृह के सामने की भूमि उसके अनन्य कब्जे में है, इसलिए, उसे अपनी सुविधा के अनुसार उसका प्रयोग करने के लिए सभी अधिकार हैं और यह कि वादी को प्रतिवादी द्वारा उसके प्रयोग करने में किसी प्रकार की बाधा या निर्बंधन, जो भी हो, डालने का कोई अधिकार नहीं है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस प्रकार प्रस्तुत साक्ष्यों का सम्यक् मूल्यांकन करने और दोनों पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात् विवाद्यक सं. 1 का उत्तर वादी के पक्ष में दिया, जबकि विवाद्यक सं. 2 से 4 का उत्तर प्रतिवादी के विरुद्ध दिया और इस प्रकार अभिलिखित निष्कर्षों के परिणामस्वरूप स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद डिक्री कर दिया जिसके द्वारा प्रतिवादी को आबादी भूमि के खाली भाग पर जब

तक उसका विधि के अनुसरण में विभाजन नहीं हो जाता है तब तक कोई भी निर्माण करने से अवरुद्ध कर दिया । प्रतिवादी ने अपने विरुद्ध पारित स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री से व्यथित होकर विद्वान् निचले अपील न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जबकि वादी ने भी आज्ञापक व्यादेश की डिक्री नामंजूर करने से व्यथित होकर प्रति-आक्षेप फाइल किया । विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने न केवल प्रति-आक्षेपों को खारिज कर दिया अपितु वाद में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री को भी उलट दिया । वाद को इन मताभिव्यक्तियों के साथ खारिज करने का आदेश दिया गया कि वादी के विरुद्ध इस बाबत कोई प्रतिकूलता कारित नहीं होती है कि प्रतिवादी ने विवादित भूमि के ऊपर एक सेप्टिक टैंक लगाने के लिए खुदाई की थी जिसे उसने अन्ततोगत्वा बराबर (भूमि) कर दिया था ताकि उसका रास्ते आदि के लिए प्रयोग हो सके । आक्षेपित निर्णय और डिक्री को चुनौती अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर भी दिया गया कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को उलटने में गलती की है । आज्ञापक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद में डिक्री नामंजूर करने को भी वैधतः कायम रखे जाने योग्य नहीं कहा गया और इसे अनुमानों और कल्पनाओं पर आधारित कहा गया । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार, मूल्यांकन, निर्वचन नहीं किया गया और इनका सही परिप्रेक्ष्य में अर्थान्वयन नहीं किया गया और इसके प्रतिकूल निष्कर्ष अभिलिखित किए गए जो पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से असंगत और विरोधाभास में है । इसलिए, यह निवेदन किया गया कि वाद न केवल स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए डिक्री होने योग्य अपितु आज्ञापक व्यादेश के लिए भी योग्य है यदि प्रतिवादी बलपूर्वक वाद भूमि पर गड्ढा खोदने में सफल हो जाता है । इसलिए, आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अभिखंडित और अपास्त करने की ईप्सा की गई है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह कहा जा सकता है कि विधिक शब्दावली में कोई भी निष्कर्ष जो साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है अथवा मिथ्या और अस्वीकार्य तरीके से निष्कर्ष निकाले गए हैं वे अनुचित कहे जा सकते हैं । निःसंदेह, उच्च न्यायालय द्वितीय अपील में, तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप कर सकता है, मात्र उन्हीं मामलों में जहां यह सिद्ध हो जाता है कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष प्रकटतः अनुचित हैं और अभिलेख पर के साक्ष्यों

द्वारा समर्थित नहीं हैं । विवाद्यक मुद्दा, कि क्या विद्वान् निचला अपील न्यायालय अभिवचनों और अभिलेख पर के साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में असफल रहा है और इसके बजाय विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को उलटते और वाद तथा प्रति-आक्षेपों को खारिज करते समय उसका गलत अर्थान्वयन किया है या नहीं, इनका अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्रियों में पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता नहीं है । वादपत्र में स्थापित मामला यह है कि विवादित भूमि आबादी है जो सभी अधिकारधारकों के संयुक्त स्वामित्व और कब्जे में है जिनमें वाद के पक्षकार और उस भूमि को रास्ते और अन्य प्रयोजनों जैसे धार्मिक कृत्यों, विवाहों और पशु आदि लाने-ले-जाने के लिए प्रयोग करने वाले व्यक्ति सम्मिलित हैं तथा प्रतिवादी ने अभिकथित तौर पर उस भूमि को ऐसे प्रथागत और परम्परागत प्रयोग में बाधा डालते हुए बलपूर्वक उस भाग पर निर्माण कर लिया था । सत्य यह है कि प्रथा और परम्परा को वादपत्र में विर्निदिष्ट तौर पर अभिवाचित नहीं किया गया है न ही इस बारे में ऐसा कोई साक्ष्य दिया गया है जो वाजिब-उल-अराज आदि की प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की जा सके, तथापि, इसके अतिरिक्त न्यायालय इन निवेदनों से सहमत नहीं है कि वादी अपने उन अधिकारों को साबित करने में असफल रहा है जिनका उसने वादपत्र में दावा किया है, इस कारण से कि वादपत्र में यथाअभिवाचित सामान्य प्रयोजनों के लिए वाद भूमि का प्रयोग करने वाले व्यक्ति वादी के कथन का समर्थन नहीं किया है जो अभि. सा. 2 के रूप में साक्षी कठघरे में साक्ष्य दिया है, किन्तु, संगति पटवार सर्किल के पटवारी अभि. सा. 1 भगत राम और अभि. सा. 3 राजेन्द्र शर्मा के भी परिसाक्ष्य से वादी के कथन की पुष्टि होती है । इस एवज में मैं उस बयान के प्रति निर्देश करना चाहूंगा जो अभि. सा. 1 भगत राम के कथन के माध्यम से अभिलेख पर लाया गया है । निःसंदेह, जमाबंदी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए में उसके बयान के अनुसार वाद भूमि पर कोई रास्ता दर्शित नहीं किया गया है, तथापि, उसके अनुसार, यह भूमि सामान्य प्रयोजनों के लिए सभी अधिकारधारकों द्वारा प्रयोग की जाती है । उसने यह भी कथन किया है कि आबादी भूमि को अधिकारधारको द्वारा उस सीमा तक प्रयोग किया जाता है जिस सीमा तक आबादी भूमि उनके कब्जे में है । अभि. सा. 2 जय प्रकाश, जो स्वयं वादी है, ने इस एवज में उसके पक्षकथन का भी समर्थन किया है । उसने कच्चा नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी को भी साबित किया है जिसमें उसका स्वयं का गृह और प्रतिवादी का भी गृह स्थित है । उनके गृहों के सामने की भूमि भी इस दस्तावेज में दर्शित की गई है । न केवल

यह अपितु फोटोग्राफ प्रदर्श पी-1 से पी-3 में भी दोनों के गृहों की स्थिति दर्शित की गई है । निःसंदेह प्रत्यर्थी-प्रतिवादी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि कच्चा नक्शे प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी और फोटोग्राफ प्रदर्श पी-1 से पी-3 को सबूत के रूप में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इन वस्तुओं को उन व्यक्तियों की परीक्षा करते समय प्रस्तुत किया गया है जिन्होंने कच्चा नक्शा तैयार किया है और फोटोग्राफ लिए हैं और ऐसे फोटोग्राफों के नेगेटिवों को साक्ष्य में भी प्रस्तुत किया गया है, तथापि, यह आक्षेप मुश्किल से ही प्रतिवादी के मामले में कोई सहायता करेगा इस कारण से कि प्रतिपरीक्षा में किसी भी साक्षी ने यह सुझाव नहीं दिया है कि फोटोग्राफ उस स्थल के नहीं हैं और उसका कच्चा नक्शा प्रतिवादी द्वारा तैयार नहीं किया गया है । इसलिए, चरण सिंह वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अधिकथित किया गया है कि मात्र प्रदर्श को चिन्हित करने से ही वह दस्तावेज का सबूत नहीं हो जाता है जो इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है । वादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह सुझाव दिया है कि उसके गृह के सामने की आबादी भूमि के सिवाय उसने शेष आबादी भूमि पर कब्जा नहीं किया है, जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिवादी ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि वादी के गृह के सामने आबादी भूमि उसके कब्जे में है । निःसंदेह, प्रतिवादी का गृह भी वादी की भूमि से सटा है और प्रतिवादी के गृह के सामने की आबादी भूमि उसके कब्जे में हो सकती है । तथापि, अनन्य रूप से नहीं बल्कि वादी के साथ सटी हुई है और उस मामले के लिए अन्य सह-हिस्सेदार भी इस कारण से कि लिखित कथन में प्रतिवादी द्वारा उद्भूत विभाजन के अभिवाक् को किसी भी प्रकार से साबित नहीं करते हैं । प्रतिवादी ने स्वयमेव यह कथन किया है कि विवादित भूमि के ऊपर मौजूद गृह ही पक्षकारों के दादा के जीवनकाल के दौरान विभाजित हुए हैं । उसने यह भी स्वीकार किया है कि उसके गृह के दाहिनी ओर वादी का गृह है । निःसंदेह, उसने न्यायालय के समक्ष यह कथन किया है कि सटी हुई भूमि भी गृहों के संबंधित स्वामियों को दी गई थी, तथापि, इस बारे में जमाबंदी में कोई उल्लेख नहीं है । इस प्रभाव के रोजनामचा में भी रपट आदि के रूप में कोई अभिलेख नहीं है न ही कोई विभाजन विलेख ही प्रस्तुत किया गया है । निःसंदेह, उसने इस बात से इनकार किया है कि भूमि का सभी तीनों कुटुम्बों के सदस्यों द्वारा अपने खेतों और जल स्रोत्रों में जाने के लिए प्रयोग किया जाता है तथापि, उसने यह स्वीकार किया है कि अमर चन्द के गृह के सामने की भूमि का प्रयोग कब्रिस्तान में शव ले जाने के लिए और अपने खेतों में जाने लिए

उसके, वादी और अन्य अधिकारधारकों द्वारा किया जाता है । प्रतिवादी साक्षी 2 श्री अमर चन्द और प्रतिवादी साक्षी 3 श्री दिनेश कुमार ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में इस तथ्य को स्वीकार किया है । प्रतिवादी साक्षी 2 अमर चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह भी स्वीकार किया है कि दोनों अर्थात् वादी और प्रतिवादी के गृहों के सामने की खाली भूमि पर वाटर टैप लगाया गया था जो सामान्य है । उसने यह भी स्वीकार किया है कि ग्राम में समारोहों के दौरान इस टैप से जल ले जाया जाता है । न केवल यह अपितु उसने यह भी स्वीकार किया है कि गृहों के सामने की भूमि का प्रयोग रास्ते के लिए सभी के द्वारा किया जाता है । प्रतिवादी साक्षी 3 दिनेश कुमार संबंध में पक्षकारों का भाई है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि वह सह-हिस्सेदारों के बीच किसी विभाजन का साक्षी नहीं है और यह भी कि ऐसे विभाजन के बारे में कोई प्रविष्टि कभी भी राजस्व अभिलेख में नहीं की गई है । (पैरा 13, 14, 15 और 16)

इसलिए, निःसंदेह, प्रतिवादी ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में स्वयं अपने कथन में साथ ही प्रतिवादी साक्षी 2 और प्रतिवादी साक्षी 3 सभी ने एक स्वर में यह कथन किया है कि ग्राम में क्रमशः गृहों के सामने की भूमि अनन्य रूप से ऐसे गृहों के स्वामियों के कब्जे में है जो पक्षकारों और अन्य अधिकारधारकों के पूर्वजों के जीवनकाल के दौरान तथाकथित विभाजन के आधार पर था, तथापि, साक्ष्यों की सूक्ष्म संवीक्षा, जैसी कि उपर्युक्त रूप से चर्चा की गई है, से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि वाटर टैप, वादी और प्रतिवादी के गृहों के सामने की वाद भूमि के भाग पर लगाया गया है जो सामान्य है और इसका प्रयोग ग्राम में समारोह आदि के समय जल ले जाने के लिए किया जाता है । तृतीय गृह अर्थात् अमर चन्द के गृह से सटी भूमि का प्रयोग कब्रिस्तान में शव ले जाने के लिए और अपने खेतों में जाने के लिए किया जाता है । न केवल यह अपितु, प्रतिवादी साक्षी 3 दिनेश कुमार के बयान के अनुसार खाली भूमि का प्रयोग सभी अधिकारधारकों द्वारा रास्ते के रूप में किया जाता है । इसलिए, यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं होगा कि वाद भूमि संयुक्त है और इसका प्रयोग सभी अधिकारधारकों द्वारा सामान्य प्रयोजनों के लिए किया जाता है और प्रतिवादी को यह असत्य कथन नहीं कहने दिया जा सकता है कि उक्त आबादी भूमि प्रत्येक अधिकारधारक के अनन्य कब्जे में है जिसमें वाद के पक्षकार सम्मिलित हैं । प्रतिवादी ने यह भी दलील दी कि यह साबित करने का भार कि वाद भूमि अब तक अविभाजित और संयुक्त है, वादी पर है । तथापि, वादी का

साधारण पक्षकथन यह है कि वाद भूमि अधिकारधारकों के संयुक्त अधिकार में होने के नाते सामान्य प्रयोजनों जैसे रास्ते और सामान्य समारोहों की व्यवस्था आदि करने के लिए किया जाता है । इस एवज में उसका पक्षकथन न केवल उस साक्ष्य से समर्थन पाता है जिन्हें उसने प्रस्तुत किया है अपितु प्रतिवादी और साक्षियों से भी समर्थन पाता है जिसकी उसने परीक्षा की है । वादी द्वारा की गई स्वीकृति के बारे में अधिक से अधिक यह कथित किया गया है कि अधिकारधारकों ने गृहों का विभाजन किया था । तथापि, ऐसी स्वीकृति, प्रतिवादी के मामले में कोई सहायता नहीं करती है, इस कारण से कि अविवादित तौर पर गृहों का विभाजन हुआ था और सभी शेयर-धारक ऐसे विभाजन के दौरान उन्हें आबंटित क्रमशः अपने गृहों के कब्जे में हैं । तथापि, स्वीकृति, खाली भूमि के विभाजन से संबंधित नहीं है । अभि. सा. 1 की प्रतिपरीक्षा में मात्र इस बात को भी असम्यक् भार दिया गया है कि अधिकारधारक आबादी भूमि में भूमि के उस भाग में अधिकार अर्जित किए हैं जो उनके कब्जे में है, तथापि, इस कारण से त्रुटिपूर्ण तौर पर कि अभिलेखों के आधार पर इसे अन्यथा यह सिद्ध किया गया है कि भूमि शेयर-धारकों के अनन्य कब्जे में नहीं है और बल्कि इसका प्रयोग सामान्य प्रयोजनों के लिए होता है । यद्यपि, प्रतिवादी साक्षी 1 ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया है, जिसे विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट उसके कथन के भाग का लोप किया गया है जिसके लिए बेहतर कारण वही जानते होंगे । निःसंदेह, अभि. सा. 3 राजेन्द्र शर्मा ने विभाजन के बारे में मुझे बताया है तथापि, उसने मात्र गृहों के विभाजन के बारे में ही बताया है । यह सुस्पष्ट तौर पर कथन किया है कि गृहों के विभाजन के समय पर खाली भूमि का विभाजन नहीं हुआ था और वह संयुक्त रूप से था । यदि वादी और प्रतिवादी के गृह के सामने की भूमि पर कोई रास्ता नहीं था जिसके बारे में विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने आवश्यक तौर पर यह मत व्यक्त किया है कि सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् उसे सामान्य रास्ते के रूप में प्रयोग करने के लिए बराबर कर दिया गया था और उस दशा में वादी द्वारा कोई प्रतिकूलता कारित नहीं की गई है । इसका अभिप्राय यह है कि सभी अधिकारधारकों जिसमें वादी सम्मिलित है, द्वारा प्रयोग किए जाने वाले रास्ते मौजूद हैं । प्रतिवादी द्वारा सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के लिए अपने गृह और वादी के गृह के सामने की भूमि में खुदाई करने से इनकार नहीं किया गया है । जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित किया जा चुका है, कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने भी अपने आक्षेपित निर्णय और डिक्री में वाद भूमि पर प्रतिवादी

द्वारा सेप्टिक टैंक के निर्माण के बारे में इसी प्रकार का मत व्यक्त किया है, तथापि, इस मताभिव्यक्ति के साथ उसे सही माना गया है कि सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् भूमि को बराबर कर दिया गया था ताकि उसका प्रयोग रास्ते के रूप में किया जा सके । तथापि, प्रतिवादी को वाद भूमि का सभी अधिकारधारकों के संयुक्त अधिकार और सामान्य प्रयोजनों के लिए प्रयोग में होने के नाते उसके किसी भाग के ऊपर कोई निर्माण करने का किसी भी प्रकार का हक नहीं है, जब तक कि विधि की सम्यक् प्रक्रिया के द्वारा उसका विभाजन नहीं हो जाता है । आबादी भूमि का विभाजन अनुज्ञेय है । इसलिए, विद्वान् विचारण न्यायालय ने स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद डिक्री करने में कोई अवैधता और अनियमितता कारित नहीं की है । (पैरा 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23 और 24)

जहां तक आज्ञापक व्यादेश को मंजूर करने की प्रार्थना का संबंध है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस बारे में कोई विवाद्यक विरचित नहीं किया है न ही वादी द्वारा ऐसे किसी विवाद्यक पर जोर दिया गया है । दूसरी ओर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 1 का उत्तर देते समय यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिवादी को वाद भूमि के उस भाग पर निर्माण करने का कोई हक नहीं है जो पक्षकारों के संयुक्त अधिकार में है । अतएव, इस एवज में किसी विवाद्यक पर जोर नहीं देने को ध्यान में रखते हुए, प्रतिवादी को यह निर्देश दिया जाता है कि वह वाद भूमि के उस भाग को बराबर करें जिसे खोदा गया है ताकि, यह उस मूल दशा में आ जाए कि उसका प्रयोग पक्षकारों और अन्य अधिकारधारकों द्वारा सामान्य रास्ते के रूप में किया जा सके । वर्तमान मामला ऐसा है जिसमें विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध अभिवचनों और साक्ष्यों का सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन नहीं किया है बल्कि अभिलेखों के परे जाकर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को उलट दिया है और वाद खारिज कर दिया है । (पैरा 25 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 269 : **भारत संघ और अन्य** बनाम **वसावी को-आपरेटिव हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड और अन्य ;**	26

[2012]	(2012) 7 एस. सी. सी. 288 : **विश्वनाथ अग्रवाल** बनाम **सरला विश्वनाथ अग्रवाल ;**	11
[2011]	(2011) 11 एस. सी. सी. 628 : **अमिया बाला दत्ता और अन्य** बनाम **मुकुट अधिकारी और अन्य ;**	11
[2010]	(2010) 13 एस. सी. सी. 216 : **नगर निगम समिति, होशियारपुर** बनाम **पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड ;**	11
[2002]	2002 (एच. पी.)(डी. बी.) 789 : **चरण सिंह** बनाम **योगेन्द्र सिंह और एक अन्य ;**	11
[1998]	1998 (2) एस. एल. सी. 135 : **मैसर्स सी. एम. आटो स्टोर्स और अन्य** बनाम **यूनियन बैंक आफ इंडिया ;**	11
[1988]	ए. आई. आर. 1988 हिमाचल प्रदेश 21 : **केवल राम** बनाम **ग्राम पंचायत, भुट्टी और अन्य** ।	23

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 की नियमित द्वितीय अपील सं. 4147.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री विवेक ठाकुर, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जी. सी. गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री मीरा देवी, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति धरम चन्द चौधरी – अपीलार्थी, जिसे इसमें इसके पश्चात् वादी कहा गया है, ने इस न्यायालय के समक्ष यह द्वितीय अपील फाइल की है क्योंकि विद्वान् जिला न्यायाधीश (वन), शिमला ने 2012/11 की सिविल अपील सं. 46-एस./13 में पारित तारीख 31 जुलाई, 2013 के निर्णय द्वारा विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), न्यायालय सं. 1, शिमला द्वारा 2009 की सिविल वाद सं. 6/1 में पारित तारीख 30 अप्रैल, 2011 के निर्णय और डिक्री को उलट दिया है और वाद खारिज कर दिया है ।

2. अपील को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार कर लिया गया है :–

(1) क्या विद्वान् निचले न्यायालयों ने प्रत्यर्थी/प्रतिवादी की अपील को मंजूर करते समय और विद्वान् जिला न्यायालय (वन), शिमला द्वारा अपीलार्थी/वादी के प्रति-आक्षेपों को खारिज करते समय और विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), शिमला द्वारा आज्ञापक व्यादेश के लिए डिक्री मंजूर नहीं करने के लिए निर्णय को खारिज करते समय विधि की भूल कारित की है और वह भूमि के स्थापित विधियों के प्रतिकूल है ?

(2) क्या विद्वान् जिला न्यायाधीश (वन), शिमला द्वारा अपील मंजूर करते समय और प्रति-आक्षेपों को खारिज करते समय निकाले गए निष्कर्ष और विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), शिमला द्वारा पारित आज्ञापक व्यादेश के लिए डिक्री को मंजूर नहीं करते समय दिया गया निर्णय आक्षेपित निर्णय और डिक्री अनुचितता के परिणामस्वरूप है ?

(3) क्या निचले न्यायालयों द्वारा अपील मंजूर करते समय और विद्वान् जिला न्यायाधीश (वन), शिमला द्वारा प्रति-आक्षेपों को खारिज करते समय निकाला गया निष्कर्ष और विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), शिमला द्वारा आज्ञापक व्यादेश के लिए डिक्री मंजूर नहीं करने के लिए दिया गया निर्णय अभिलेख पर के साक्ष्यों के प्रतिकूल और उनकी अवहेलना में है ?

3. वर्तमान वाद में दलील का सार यह है कि वर्ष 2000-01 के लिए जमाबंदी की प्रविष्टियों प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए के अनुसार ग्राम भोंग, डाकघर राउंडी, तहसील और जिला शिमला में स्थित खेवट सं. 8/8, खतौनी सं. 11, खसरा सं. 26, माप 0-19-0 बीघा में प्रविष्ट आबादी भूमि है । वादी ने उसमें से 4 बिस्वा तक भूमि अपने हिस्से में होने का दावा किया है । स्वीकृततः, उसका गृह और प्रत्यर्थी, जिसे इसमें इसके पश्चात् प्रतिवादी कहा गया है, का गृह उसी स्थान पर मौजूद है जो विवादित भूमि से सटा हुआ है । वादी के पक्षकथन के अनुसार, उसका गृह और प्रतिवादी के साथ ही अन्य हिस्सेदारों के गृह विवादित भूमि के ऊपर मौजूद हैं और इस कारण से उस भूमि को जमाबंदी में गैर-मुमकिन आबादी के रूप में प्रविष्ट किया गया है । शेष भूमि का सभी हिस्सेदारों द्वारा संयुक्त रूप से

सामान्य प्रयोजन, जैसे रास्ते, विवाह, धार्मिक कृत्यों और पशुओं के आने-जाने इत्यादि के लिए इसमें के किसी विशिष्ट हिस्सेदारों के अनन्य अधिकार होने के बिना ही प्रयोग किए जाते थे । उसका प्रयोग उसके गृह और प्रतिवादी के गृह के शहन के रूप में भी किया जाता था । तारीख 29 जनवरी, 2009 को अभिकथित तौर पर प्रतिवादी ने सह-हिस्सेदारों से जुड़े प्रथागत और परम्परागत व्यवस्थाओं का अतिलंघन करते हुए उस भूमि पर उनके रास्ते के अधिकार और अन्य क्रियाकलापों का प्रयोग करने से वादी और अन्य हिस्सेदारों को वंचित करने को दृष्टिगत रखते हुए, बलपूर्वक उस पर निर्माण करने के लिए भूमि के एक भाग को खोदना प्रारम्भ कर दिया था । प्रतिवादी ने वादी से ऐसी क्रियाकलाप बन्द करने का निवेदन किया किन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि वह छीना-झपटी पर उतर आया और उस भूमि पर वादी और अन्य हिस्सेदारों के अधिकारों को क्षति पहुंचाते हुए, उसे अपने अधिभोग में ले लिया । अतएव, प्रतिवादी को विवादित भूमि में हस्तक्षेप करने और अधिक्रमण करने से अवरुद्ध करने तथा बाधा, यदि कोई हो, जो वाद लम्बित रहने के दौरान कोई कारित की गई है तो उसे भी हटाने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक डिक्री के लिए वाद फाइल किया गया ।

4. लिखित कथन में, प्रतिवादी ने वाद कायम रखने, विबंधन और वाद हेतुक के प्रश्न भी उद्भूत करते हुए, के आधारों पर वाद का विरोध किया । गुणागुणों पर, यह दावा किया गया है कि उनके पूर्वजों के समय से ही पक्षकारों के अधिकारों के बीच विभाजन करते हुए भूमि विभाजित कर दी गई थी और अब संबंधित पक्षकारों के हिस्से अपनी सीमा तक भूमि कब्जे में है । इस बात से इनकार किया गया है कि खाली भूमि सामान्य प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाती है । यह भी निवेदन किया गया है कि सही हिस्सेदारों के गृहों के सामने आने वाले क्षेत्र, जो भी हों, उन्हें आबंटित कर दिए गए हैं और वे उनके अनन्य कब्जे में हैं । तीसरा गृह, श्री अमर चन्द का होना कथित है और उसके गृह के सामने की भूमि उसके अनन्य कब्जे में है । वादी अभिकथित तौर पर वादपत्र में दावाकृत किसी प्रथा का अभिवाक् करने में असफल रहा । इसलिए, यह निवेदन किया गया है कि चूंकि, प्रतिवादी के गृह के सामने की भूमि उसके अनन्य कब्जे में है, इसलिए, उसे अपनी सुविधा के अनुसार उसका प्रयोग करने के लिए सभी अधिकार हैं और यह कि वादी को प्रतिवादी द्वारा उसके प्रयोग करने में किसी प्रकार की बाधा या निर्बंधन, जो भी हो, डालने का कोई अधिकार नहीं है ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए हैं :–

(1) क्या वादी, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश का अनुतोष पाने का हकदार है, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?

(2) क्या वादी का वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

(3) क्या वादी स्वयं अपने कृत्य, विलेख, आचरण और उपमति के कारण वर्तमान वाद फाइल करने से विबंधित है ?

(4) क्या वादी के पास वर्तमान वाद फाइल करने के लिए वाद-हेतुक नहीं है ?

(5) अनुतोष ।

6. पक्षकारों का जब इस प्रकार विरचित विवाद्यकों पर विचारण किया गया, तब उन्होंने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस प्रकार प्रस्तुत साक्ष्यों का सम्यक् मूल्यांकन करने और दोनों पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात् विवाद्यक सं. 1 का उत्तर वादी के पक्ष में दिया, जबकि विवाद्यक सं. 2 से 4 का उत्तर प्रतिवादी के विरुद्ध दिया और इस प्रकार अभिलिखित निष्कर्षों के परिणामस्वरूप स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद डिक्री कर दिया जिसके द्वारा प्रतिवादी को आबादी भूमि के खाली भाग पर जब तक उसका विधि के अनुसरण में विभाजन नहीं हो जाता है तब तक कोई भी निर्माण करने से अवरुद्ध कर दिया ।

7. प्रतिवादी ने अपने विरुद्ध पारित स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री से व्यथित होकर विद्वान् निचले अपील न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जबकि वादी ने भी आज्ञापक व्यादेश की डिक्री नामंजूर करने से व्यथित होकर प्रति-आक्षेप फाइल किया । विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने न केवल प्रति-आक्षेपों को खारिज कर दिया अपितु वाद में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री को भी उलट दिया । वाद को इन मताभिव्यक्तियों के साथ खारिज करने का आदेश दिया गया कि वादी के विरुद्ध इस बाबत कोई प्रतिकूलता कारित नहीं होती है कि प्रतिवादी ने विवादित भूमि के ऊपर एक सेप्टिक टैंक लगाने के लिए खुदाई की थी जिसे उसने अन्ततोगत्वा बराबर (भूमि) कर दिया था ताकि उसका रास्ते आदि के लिए प्रयोग हो सके ।

8. आक्षेपित निर्णय और डिक्री को चुनौती अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर भी दिया गया कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को उलटने में गलती की है । आज्ञापक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद में डिक्री नामंजूर करने को भी वैधतः कायम रखे जाने योग्य नहीं कहा गया और इसे अनुमानों और कल्पनाओं पर आधारित कहा गया । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार, मूल्यांकन, निर्वचन नहीं किया गया और इनका सही परिप्रेक्ष्य में अर्थान्वयन नहीं किया गया और इसके प्रतिकूल निष्कर्ष अभिलिखित किए गए जो पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से असंगत और विरोधाभास में है । इसलिए, यह निवेदन किया गया कि वाद न केवल स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए डिक्री होने योग्य अपितु आज्ञापक व्यादेश के लिए भी योग्य है यदि प्रतिवादी बलपूर्वक वाद भूमि पर गड्ढा खोदने में सफल हो जाता है । इसलिए, आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अभिखंडित और अपास्त करने की ईप्सा की गई है ।

9. अपीलार्थी-वादी के विद्वान् काउंसेल श्री विवेक ठाकुर ने बलपूर्वक यह दलील दी कि यह प्रतिवादी ही था जिसने विभाजन के अभिवाक् को साबित किया है जिसे उसने लिखित कथन में दिया है । इसलिए, निचले अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित प्रतिकूल निष्कर्ष अभिलेखों के प्रतिकूल कथित किए गए हैं, अतएव, यह अनुचित है । प्रश्नगत भूमि के ऊपर सह-हिस्सेदारों के प्रथागत और परम्परागत अधिकारों को वादपत्र में विनिर्दिष्ट तौर पर अभिवाचित किए गए हैं । वाद भूमि के ऊपर जिस पर प्रतिवादी ने सेप्टिक टैंक लगाने के लिए खुदाई प्रारम्भ की थी, का कच्चे नक्शे से ठीक-ठीक पता लगाया गया है । प्रतिवादी और साक्षियों की स्वीकृति, जिसमें यह परीक्षा हुई है कि वाद भूमि के ऊपर सामान्य सीढ़ियां, वाटर टैंक और सामान्य रास्ते मौजूद हैं, श्री ठाकुर के अनुसार, इनसे वर्तमान मामले की जड़ में जाया जा सकता है । यदि विवादित भूमि पर कोई सामान्य रास्ता मौजूद नहीं था तो प्रतिवादी को विद्वान् निचले अपील न्यायालय के समक्ष यह वचनबद्ध करना था कि विवादित भूमि के ऊपर सेप्टिक टैंक लगाने के पश्चात् उस भाग को रास्ते के प्रयोग के लिए बराबर कर दिया जाएगा । अभिलेखों से यह भी इंगित होता है कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने साक्ष्यों के एक भाग पर चर्चा की न कि सम्पूर्ण साक्ष्य पर चर्चा की, विद्वान् काउंसेल के अनुसार, जिसके परिणामस्वरूप ही गलत निष्कर्ष अभिलिखित किए गए ।

10. दूसरी ओर, विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री जी. सी. गुप्ता ने यह दलील दी कि वादी वादपत्र में यथास्थापित अपने मामले को साबित करने में बुरी तरह असफल रहा है । तथाकथित प्रथाओं और परम्पराओं को न तो विनिर्दिष्ट तौर पर अभिवाचित किया गया न ही साबित किया गया है । इस अभिवाक् को कि विवादित भूमि अविभाजित है, किसी भी प्रकार से साबित नहीं किया गया है । इस बारे में कोई सुझाव नहीं दिया गया है कि विवादित भूमि में प्रयोग होने वाले सभी सामान्य प्रयोजनों को अभिलेख पर लाया गया है । विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री गुप्ता ने इस न्यायालय का ध्यान विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित इन निष्कर्षों की ओर दिलाया है कि सेप्टिक टैंक के निर्माण के पश्चात् विवादित भूमि को इसकी मूल दशा में लाने की स्थिति में ऐसे निर्माण होने से वादी को किसी भी प्रकार की क्षति कारित नहीं हो सकती है और यह निवेदन किया कि इस प्रकार व्यक्त की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए विवादित भूमि के एक भाग पर सेप्टिक टैंक के निर्माण होने के कारण भी वादी को कोई प्रतिकूलता कारित नहीं होती है । श्री गुप्ता ने अभिलेखों से यह भी इंगित किया कि वर्तमान मामले में कोई विधि का सारवान् प्रश्न अन्तर्ग्रस्त नहीं है जिसका वर्तमान अपील में अधिनिर्णय किया जाना आवश्यक हो । उनके अनुसार विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने वादी द्वारा वाद भूमि दावाकृत अधिकारों को सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत साक्ष्य को युक्तियुक्त और पर्याप्त नहीं होने के नाते सही ही त्यक्त किया है । यह भी इंगित किया गया है कि वाद के विचारण के दौरान दस्तावेजों को मात्र चिन्हित करने से ही वे ऐसे दस्तावेज के सबूत नहीं हो जाते हैं । इस प्रकार दी गई अपनी दलील को मजबूत करने के अनुक्रम में श्री गुप्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा और इस न्यायालय द्वारा भी विभिन्न न्यायिक उद्घोषणाओं में अधिकथित विधि का भी अवलंब लिया ।

11. दोनों पक्षकारों की ओर से किए गए निवेदनों से यह प्रतीत होता है कि इस अपील में इस प्रकार विरचित विधि के सारवान् प्रश्नों के अवधारण के अतिरिक्त, इस प्रश्न का भी अवधारण किया जाना चाहिए कि क्या वादी ने पक्षकारों से संयुक्त विवादित भूमि में अपने किसी अधिकार को साबित कर दिया है और वर्तमान वाद में इस बात का भी अवधारण किया जाना चाहिए कि क्या विवादित भूमि का सामान्य प्रयोजनों जैसे रास्ते आदि के लिए प्रयोग किया जाता है । श्री गुप्ता ने **नगर निगम समिति,**

होशियारपुर बनाम **पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड**[1], **अमिया बाला दत्ता और अन्य** बनाम **मुकुट अधिकारी और अन्य**[2], तथा **विश्वनाथ अग्रवाल** बनाम **सरला विश्वनाथ अग्रवाल**[3] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया, अपनी इस दलील को सिद्ध करने के लिए कि विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों का सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करने के पश्चात् पारित निर्णय और डिक्री में इस नियमित द्वितीय अपील में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है । इन निर्णयों में इस प्रकार सुस्थिर प्रतिपादनाओं से इनकार नहीं किया जा सकता है । तथापि, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है कि उच्च न्यायालय द्वारा अपील समक्ष प्रस्तुत मामले के तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर किया गया हस्तक्षेप समुचित है या नहीं । पुनः, इस सुस्थिर विधिक प्रतिपादना से इनकार नहीं किया गया है कि मात्र दस्तावेजों को चिन्हित करने से ही वे ऐसे दस्तावेज के सबूत नहीं हो जाते हैं जैसा कि इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा **चरण सिंह** बनाम **योगेन्द्र सिंह और एक अन्य**[4] तथा **मैसर्स सी. एम. आटो स्टोर्स और अन्य** बनाम **यूनियन बैंक आफ इंडिया**[5] वाले मामले में सुस्थिर किया गया है ।

12. अब, उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, वर्तमान अपील में सूत्रबद्ध विधि के सारवान् प्रश्नों पर विचार किया जाना है और उन पर अधिनिर्णय दिया जाना है । इस न्यायालय की सुविचारित राय यह है कि विधि के सारवान् प्रश्न सं. 1 और 2, इस मामले में दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में किसी भी प्रकार से उद्भूत नहीं होते हैं, अतएव, इनका अधिनिर्णयन किया जाना आवश्यक नहीं है । अपीलार्थी वादी के विद्वान् काउंसेल ने भी मामले के इस पहलू को विवादित नहीं किया है और इसके बजाय, उनके अनुसार, मात्र आक्षेपित निर्णय और डिक्री की अनुचितता का प्रश्न है जो साक्ष्यों के गलत मूल्यांकन और गलत अर्थान्वयन को ध्यान में रखते हुए अवधारण के लिए सारवान् प्रश्न सं. 3 के अधीन उद्भूत होता है ।

13. यह कहा जा सकता है कि विधिक शब्दावली में कोई भी निष्कर्ष जो साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है अथवा मिथ्या और अस्वीकार्य तरीके से

---

[1] (2010) 13 एस. सी. सी. 216.
[2] (2011) 11 एस. सी. सी. 628.
[3] (2012) 7 एस. सी. सी. 288.
[4] 2002 (एच. पी.)(डी. बी.) 789.
[5] 1998 (2) एस. एल. सी. 135.

निष्कर्ष निकाले गए हैं वे अनुचित कहे जा सकते हैं । निःसंदेह, उच्च न्यायालय द्वितीय अपील में, तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप कर सकता है, मात्र उन्हीं मामलों में जहां यह सिद्ध हो जाता है कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष प्रकटतः अनुचित हैं और अभिलेख पर के साक्ष्यों द्वारा समर्थित नहीं हैं ।

14. विवाद्यक मुद्दा, कि क्या विद्वान् निचला अपील न्यायालय अभिवचनों और अभिलेख पर के साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में असफल रहा है और इसके बजाय विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को उलटते और वाद तथा प्रति-आक्षेपों को खारिज करते समय उसका गलत अर्थान्वयन किया है या नहीं, इनका अभिलेख पर उपलब्ध सम्पूर्ण सामग्रियों में पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता नहीं है ।

15. वादपत्र में स्थापित मामला यह है कि विवादित भूमि आबादी है जो सभी अधिकारधारकों के संयुक्त स्वामित्व और कब्जे में है जिनमें वाद के पक्षकार और उस भूमि को रास्ते और अन्य प्रयोजनों जैसे धार्मिक कृत्यों, विवाहों और पशु आदि लाने-ले-जाने के लिए प्रयोग करने वाले व्यक्ति सम्मिलित हैं तथा प्रतिवादी ने अभिकथित तौर पर उस भूमि को ऐसे प्रथागत और परम्परागत प्रयोग में बाधा डालते हुए बलपूर्वक उस भाग पर निर्माण कर लिया था । सत्य यह है कि प्रथा और परम्परा को वादपत्र में विर्निदिष्ट तौर पर अभिवाचित नहीं किया गया है न ही इस बारे में ऐसा कोई साक्ष्य दिया गया है जो **वाजिब-उल-अराज** आदि की प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की जा सके, तथापि, इसके अतिरिक्त मैं इन निवेदनों से सहमत नहीं हूं कि वादी अपने उन अधिकारों को साबित करने में असफल रहा है जिनका उसने वादपत्र में दावा किया है, इस कारण से कि वादपत्र में यथाअभिवाचित सामान्य प्रयोजनों के लिए वाद भूमि का प्रयोग करने वाले व्यक्ति वादी के कथन का समर्थन नहीं किया है जो अभि. सा. 2 के रूप में साक्षी ने कठघरे में साक्ष्य दिया है, किन्तु, संगति पटवार सर्किल के पटवारी अभि. सा. 1 भगत राम और अभि. सा. 3 राजेन्द्र शर्मा के भी परिसाक्ष्य से वादी के कथन की पुष्टि होती है । इस एवज में मैं उस बयान के प्रति निर्देश करना चाहूंगा जो अभि. सा. 1 भगत राम के कथन के माध्यम से अभिलेख पर लाया गया है । निःसंदेह, जमाबंदी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए में उसके बयान के अनुसार वाद भूमि पर कोई रास्ता दर्शित नहीं किया गया है, तथापि, उसके अनुसार, यह भूमि सामान्य प्रयोजनों के लिए सभी अधिकारधारकों द्वारा प्रयोग की जाती है । उसने यह भी कथन किया है कि

आबादी भूमि का अधिकारधारक द्वारा उस सीमा तक प्रयोग किया जाता है जिस सीमा तक आबादी भूमि उनके कब्जे में है । अभि. सा. 2 जय प्रकाश, जो स्वयं वादी है, ने इस एवज में उसके पक्षकथन का भी समर्थन किया है । उसने कच्चा नक्शा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी को भी साबित किया है जिसमें उसका स्वयं का गृह और प्रतिवादी का भी गृह स्थित है । उनके गृहों के सामने की भूमि भी इस दस्तावेज में दर्शित की गई है । न केवल यह अपितु फोटोग्राफ प्रदर्श पी-1 से पी-3 में भी दोनों के गृहों की स्थिति दर्शित की गई है । निःसंदेह प्रत्यर्थी-प्रतिवादी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि कच्चा नक्शे प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी और फोटोग्राफ प्रदर्श पी-1 से पी-3 को सबूत के रूप में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इन वस्तुओं को उन व्यक्तियों की परीक्षा करते समय प्रस्तुत किया गया है जिन्होंने कच्चा नक्शा तैयार किया है और फोटोग्राफ लिए हैं और ऐसे फोटोग्राफों के नेगेटिवों को साक्ष्य में भी प्रस्तुत किया गया है, तथापि, यह आक्षेप मुश्किल से ही प्रतिवादी के मामले में कोई सहायता करेगा इस कारण से कि प्रतिपरीक्षा में किसी भी साक्षी ने यह सुझाव नहीं दिया है कि फोटोग्राफ उस स्थल के नहीं हैं और उसका कच्चा नक्शा प्रतिवादी द्वारा तैयार नहीं किया गया है । इसलिए, **चरण सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अधिकथित किया गया है कि मात्र प्रदर्श को चिन्हित करने से ही वह दस्तावेज का सबूत नहीं हो जाता है जो इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है । वादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह सुझाव दिया है कि उसके गृह के सामने की आबादी भूमि के सिवाय उसने शेष आबादी भूमि पर कब्जा नहीं किया है, जिससे मात्र यही निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिवादी ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि वादी के गृह के सामने आबादी भूमि उसके कब्जे में है । निःसंदेह, प्रतिवादी का गृह भी वादी की भूमि से सटा है और प्रतिवादी के गृह के सामने की आबादी भूमि उसके कब्जे में हो सकती है । तथापि, अनन्य रूप से नहीं बल्कि वादी के साथ सटी हुई है और उस मामले के लिए अन्य सह-हिस्सेदार भी इस कारण से कि लिखित कथन में प्रतिवादी द्वारा उद्भूत विभाजन के अभिवाक् को किसी भी प्रकार से साबित नहीं करते हैं । प्रतिवादी ने स्वयमेव यह कथन किया है कि विवादित भूमि के ऊपर मौजूद गृह ही पक्षकारों के दादा के जीवनकाल के दौरान विभाजित हुए हैं । उसने यह भी स्वीकार किया है कि उसके गृह के दाहिनी ओर वादी का गृह है । निःसंदेह, उसने हमारे समक्ष यह कथन किया है कि सटी हुई भूमि भी गृहों के संबंधित स्वामियों को दी गई थी, तथापि, इस बारे में जमाबंदी में कोई

उल्लेख नहीं है । इस प्रभाव के रोजनामचा में भी रपट आदि के रूप में कोई अभिलेख नहीं है न ही कोई विभाजन विलेख ही प्रस्तुत किया गया है । निःसंदेह, उसने इस बात से इनकार किया है कि भूमि का सभी तीनों कुटुम्बों के सदस्य द्वारा अपने खेतों और जल स्रोत्रों में जाने के लिए प्रयोग किया जाता है तथापि, उसने यह स्वीकार किया है कि अमर चन्द के गृह के सामने की भूमि का प्रयोग कब्रिस्तान में शव ले जाने के लिए और अपने खेतों में जाने लिए उसके, वादी और अन्य अधिकारधारकों द्वारा किया जाता है । प्रतिवादी साक्षी 2 श्री अमर चन्द और प्रतिवादी साक्षी 3 श्री दिनेश कुमार ने भी अपनी प्रतिपरीक्षा में इस तथ्य को स्वीकार किया है । प्रतिवादी साक्षी 2 अमर चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह भी स्वीकार किया है कि दोनों अर्थात् वादी और प्रतिवादी के गृहों के सामने की खाली भूमि पर वाटर टैप लगाया गया था जो सामान्य है । उसने यह भी स्वीकार किया है कि ग्राम में समारोहों के दौरान इस टैप से जल ले जाया जाता है । न केवल यह अपितु उसने यह भी स्वीकार किया है कि गृहों के सामने की भूमि का प्रयोग रास्ते के लिए सभी के द्वारा किया जाता है ।

16. प्रतिवादी साक्षी 3 दिनेश कुमार संबंध में पक्षकारों का भाई है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि वह सह-हिस्सेदारों के बीच किसी विभाजन का साक्षी नहीं है और यह भी कि ऐसे विभाजन के बारे में कोई प्रविष्टि कभी भी राजस्व अभिलेख में नहीं की गई है ।

17. इसलिए, निःसंदेह, प्रतिवादी ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में स्वयं अपने कथन में साथ ही प्रतिवादी साक्षी 2 और प्रतिवादी साक्षी 3 सभी ने एक स्वर में यह कथन किया है कि ग्राम में क्रमशः गृहों के सामने की भूमि अनन्य रूप से ऐसे गृहों के स्वामियों के कब्जे में है जो पक्षकारों और अन्य अधिकारधारकों के पूर्वजों के जीवनकाल के दौरान तथाकथित विभाजन के आधार पर था, तथापि, साक्ष्यों की सूक्ष्म संवीक्षा, जैसी कि उपर्युक्त रूप से चर्चा की गई है, से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि वाटर टैप, वादी और प्रतिवादी के गृहों के सामने की वाद भूमि के भाग पर लगाया गया है जो सामान्य है और इसका प्रयोग ग्राम में समारोह आदि के समय जल ले जाने के लिए किया जाता है । तृतीय गृह अर्थात् अमर चन्द के गृह से सटी भूमि का प्रयोग कब्रिस्तान में शव ले जाने के लिए और अपने खेतों में जाने के लिए किया जाता है । न केवल यह अपितु, प्रतिवादी साक्षी 3 दिनेश कुमार के बयान के अनुसार खाली भूमि का प्रयोग सभी अधिकारधारकों द्वारा रास्ते के रूप में किया जाता है ।

18. इसलिए, यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं होगा कि वाद भूमि संयुक्त है और इसका प्रयोग सभी अधिकारधारकों द्वारा सामान्य प्रयोजनों के लिए किया जाता है और प्रतिवादी को यह असत्य कथन नहीं कहने दिया जा सकता है कि उक्त आबादी भूमि प्रत्येक अधिकारधारक के अनन्य कब्जे में है जिसमें वाद के पक्षकार सम्मिलित हैं ।

19. प्रतिवादी ने यह भी दलील दी कि यह साबित करने का भार कि वाद भूमि अब तक अविभाजित और संयुक्त है, वादी पर है । तथापि, वादी का साधारण पक्षकथन यह है कि वाद भूमि अधिकारधारकों के संयुक्त अधिकार में होने के नाते सामान्य प्रयोजनों जैसे रास्ते और सामान्य समारोहों की व्यवस्था आदि करने के लिए किया जाता है । इस एवज में उसका पक्षकथन न केवल उस साक्ष्य से समर्थन पाता है जिन्हें उसने प्रस्तुत किया है अपितु प्रतिवादी और साक्षियों से भी समर्थन पाता है जिसकी उसने परीक्षा की है ।

20. वादी द्वारा की गई स्वीकृति के बारे में अधिक से अधिक यह कथित किया गया है कि अधिकारधारकों ने गृहों का विभाजन किया था । तथापि, ऐसी स्वीकृति, प्रतिवादी के मामले में कोई सहायता नहीं करती है, इस कारण से कि अविवादित तौर पर गृहों का विभाजन हुआ था और सभी शेयर धारक ऐसे विभाजन के दौरान उन्हें आबंटित क्रमशः अपने गृहों के कब्जे में हैं । तथापि, स्वीकृति, खाली भूमि के विभाजन से संबंधित नहीं है ।

21. अभि. सा. 1 की प्रतिपरीक्षा में मात्र इस बात को भी असम्यक् भार दिया गया है कि अधिकारधारक आबादी भूमि में भूमि के उस भाग में अधिकार अर्जित किए हैं जो उनके कब्जे में है, तथापि, इस कारण से त्रुटिपूर्ण तौर पर कि अभिलेखों के आधार पर इसे अन्यथा यह सिद्ध किया गया है कि भूमि शेयर धारकों के अनन्य कब्जे में नहीं है और बल्कि इसका प्रयोग सामान्य प्रयोजनों के लिए होता है । यद्यपि, प्रतिवादी साक्षी 1 ने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया है, जिसे विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट उसके कथन के भाग का लोप किया गया है जिसके लिए बेहतर कारण वही जानते होंगे । निःसंदेह, अभि. सा. 3 राजेन्द्र शर्मा ने विभाजन के बारे में मुझे बताया है तथापि, उसने मात्र गृहों के विभाजन के बारे में ही बताया है । यह सुस्पष्ट तौर पर कथन किया है कि गृहों के विभाजन के समय पर खाली भूमि का विभाजन नहीं हुआ था और वह संयुक्त रूप से था ।

22. यदि वादी और प्रतिवादी के गृह के सामने की भूमि पर कोई रास्ता नहीं था जिसके बारे में विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने आवश्यक तौर पर यह मत व्यक्त किया है कि सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् उसे सामान्य रास्ते के रूप में प्रयोग करने के लिए बराबर कर दिया गया था और उस दशा में वादी द्वारा कोई प्रतिकूलता कारित नहीं की गई है । इसका अभिप्राय यह है कि सभी अधिकारधारकों जिसमें वादी सम्मिलित है, द्वारा प्रयोग किए जाने वाले रास्ते मौजूद हैं ।

23. प्रतिवादी द्वारा सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के लिए अपने गृह और वादी के गृह के सामने की भूमि में खुदाई करने से इनकार नहीं किया गया है । जैसा कि उपर्युक्त उल्लिखित किया जा चुका है, कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने भी अपने आक्षेपित निर्णय और डिक्री में वाद भूमि पर प्रतिवादी द्वारा सेप्टिक टैंक के निर्माण के बारे में इसी प्रकार का मत व्यक्त किया है, तथापि, इस मताभिव्यक्ति के साथ उसे सही माना गया है कि सेप्टिक टैंक का निर्माण करने के पश्चात् भूमि को बराबर कर दिया गया था ताकि उसका प्रयोग रास्ते के रूप में किया जा सके । तथापि, प्रतिवादी को वाद भूमि का सभी अधिकारधारकों के संयुक्त अधिकार और सामान्य प्रयोजनों के लिए प्रयोग में होने के नाते उसके किसी भाग के ऊपर कोई निर्माण करने का किसी भी प्रकार का हक नहीं है, जब तक कि विधि की सम्यक् प्रक्रिया के द्वारा उसका विभाजन नहीं हो जाता है । आबादी भूमि का विभाजन अनुज्ञेय है । इस एवज में, **केवल राम** बनाम **ग्राम पंचायत, भुट्टी और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के समन्वय न्यायपीठ के निर्णय को निर्दिष्ट किया जा सकता है ।

24. इसलिए, विद्वान् विचारण न्यायालय ने स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद डिक्री करने में कोई अवैधता और अनियमितता कारित नहीं की है ।

25. जहां तक आज्ञापक व्यादेश को मंजूर करने की प्रार्थना का संबंध है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस बारे में कोई विवाद्यक विरचित नहीं किया है न ही वादी द्वारा ऐसे किसी विवाद्यक पर जोर दिया गया है । दूसरी ओर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 1 का उत्तर देते समय यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिवादी को वाद भूमि के उस भाग पर निर्माण करने का कोई हक नहीं है जो पक्षकारों के संयुक्त अधिकार में है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1988 हिमाचल प्रदेश 21.

अतएव, इस एवज में किसी विवाद्यक पर जोर नहीं देने को ध्यान में रखते हुए, प्रतिवादी को यह निर्देश दिया जाता है कि वह वाद भूमि के उस भाग को बराबर करें जिसे खोदा गया है ताकि, यह उस मूल दशा में आ जाए कि उसका प्रयोग पक्षकारों और अन्य अधिकारधारकों द्वारा सामान्य रास्ते के रूप में किया जा सके ।

26. **भारत संघ और अन्य** बनाम **वसावी को-आपरेटिव हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का निर्णयसार, वर्तमान मामले में लागू नहीं होता है क्योंकि वर्तमान मामले में हक और कब्जे की घोषणा के लिए वाद नहीं है बल्कि वर्तमान मामले में स्थायी प्रतिषेधात्मक और आज्ञापक व्यादेश के अनुतोष के लिए वाद किया गया है ।

27. वर्तमान मामला ऐसा है जिसमें विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध अभिवचनों और साक्ष्यों का सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन नहीं किया है बल्कि अभिलेखों के परे जाकर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को उलट दिया है और वाद खारिज कर दिया है ।

28. इसलिए, आक्षेपित निर्णय अनुचित होने के नाते वैधतः और तथ्यतः कायम रखे जाने योग्य नहीं है । परिणामतः, अपील सफल होती है और तद्नुसार, इसे मंजूर किया जाता है । आक्षेपित निर्णय और डिक्री अभिखंडित और अपास्त किए जाते हैं और विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की जाती है । तथापि, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

अपील खारिज की गई ।

क.

---

[1] (2014) 2 एस. सी. सी. 269.

भारत संघ

बनाम

राम कृष्ण

तारीख 23 जुलाई, 2014

मुख्य न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर और न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान

सेवा नियम, 1954 – नियम 13(3) [सपठित पेंशन विनियम 173, 173क, 183, 186 और विनियम 173 के परिशिष्ट 2 का नियम 1 और 2] – निःशक्तता पेंशन – शारीरिक क्षति के कारण रिट याची को निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में रखा जाना – हताश होकर याची द्वारा सेना की सेवा से उन्मुक्ति का अनुरोध किया जाना – अनुरोध का अनुमोदन करते हुए याची को सेवोन्मुक्त किया जाना – याची को केवल सेवा पेंशन प्रदान करते हुए निःशक्तता पेंशन प्रदान करने से इनकार करना – ऐसे मामलों में अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्ति के लिए अनुरोध करने के कारण ही निःशक्तता पेंशन का दावा करने का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता है ।

वर्तमान मामले में, रिट याची को अपनी सेना की सेवा में रहते हुए एक बारूदी सुरंग फट जाने के कारण शारीरिक क्षति हुई थी, जिसके कारण चिकित्सीय बोर्ड द्वारा उसकी निःशक्तता को 30% से अधिक निर्धारित करते हुए उसे निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में रखा गया था । इससे हताश होकर, रिट याची ने अपनी घरेलू परिस्थितियों और अपनी असमर्थता का हवाला देते हुए अनुकम्पा के आधार पर सेना की सेवा से मुक्त किए जाने का अनुरोध किया था । उसके अनुरोध को स्वीकार करते हुए रिट याची को उसकी सेवा के 25 वर्ष और 106 दिन पूरे होने पर सेवोन्मुक्त कर दिया गया । किन्तु उसे केवल सेवा पेंशन प्रदान की गई और निःशक्तता पेंशन मंजूर करने से इस आधार पर इनकार कर दिया गया कि याची ने स्वयं अनुरोध करके स्वैच्छिक आधार पर सेवानिवृत्ति ली थी । इससे व्यथित होकर याची ने उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका फाइल की । इस रिट याचिका को उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने मंजूर करते हुए, रिट प्रत्यर्थी को यह निदेश दिया कि याची को निःशक्तता पेंशन प्रदान की जाए । एकल न्यायाधीश के इस निर्णय से व्यथित होकर रिट

प्रत्यर्थी ने लेटर्स पेटेंट अपील फाइल की । न्यायालय द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पक्षकारों का स्वीकृत पक्षकथन यह है कि भर्ती के समय रिट याची किसी निःशक्तता से ग्रस्त नहीं था और उसे उसके शासकीय कर्तव्य का निर्वहन करते समय एक बारूदी सुरंग फटने के कारण 23 मई, 2002 को शारीरिक क्षति हुई थी, जिसे अविवादित रूप से उसके पश्चात् 30% निर्धारित किया गया था । याची को पेंशन विनियम 173 के परिशिष्ट 2 के नियम 1 और 2 के अनुसार निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में रखे जाने के पश्चात् यह अपेक्षित था कि उसे सेवा से अशक्त माना जाए । (पैरा 8)

अपीलार्थी तब यह दलील देंगे कि रिट याची को, जैसा कि उसके तारीख 13 अक्तूबर, 2004 के पत्र से उपदर्शित है, उसकी घरेलू समस्या के कारण अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्त किया गया था और इसलिए, यह कथन नहीं किया जा सकता कि रिट याची अपनी सेवा में बने रहने का इच्छुक था, जबकि अपीलार्थी ने उसे उसके नियोजन का कार्यकाल पूरा होने तक निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में आश्रय नियोजन में रखा था । यह अभिकथन केवल इस साधारण कारण से नामंजूर किए जाने योग्य है कि यह अविवादित है कि रिट याची 30% से अधिक की निःशक्तता से ग्रस्त हुआ है और उसके सेवोन्मुक्ति के अनुरोध में दिए गए अन्य कारणों के अलावा एक कारण यह भी था कि रिट याची भलीभांति उस रीति में कार्यपालन करने के योग्य नहीं था, जिस प्रकार वह पूर्व में कार्यपालन कर रहा था, जिसका अर्थ अनिवार्य रूप से यह है कि वह स्पष्ट रूप से अपनी निःशक्तता का प्रतिनिर्देश कर रहा था । एक प्रतिबद्ध सैनिक होने के कारण, रिट याची अपने राष्ट्र की सेवा करना चाहता था किंतु उसी समय वह यह भी नहीं चाहता था कि उसकी निःशक्तता उसकी सेवा में बाधा बने, विशेष रूप से तब जब उसकी निःशक्तता उसे हानि पहुंचा रही थी, जिसके कारण रिट याची के मस्तिष्क में कुंठा की भावना पैदा हो रही होगी । रिट याची के पत्र को केवल उसके शाब्दिक अर्थों तक सीमित नहीं किया जा सकता और उसका निर्वचन शब्द-दर-शब्द नहीं किया जा सकता । इसकी बजाय पत्र के अभिप्राय को समझना होगा । अन्यथा भी, इस बात पर विवाद नहीं है कि याची उस समय निःशक्तता से ग्रस्त हुआ था जब वह राष्ट्र की सेवा कर रहा था और जिसके दौरान वह 30% से अधिक की निःशक्तता से ग्रस्त हुआ था, जिसको अपुरस्कृत नहीं रखा जा सकता । (पैरा 9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1997]	1997 एल. ए. बी. आई. सी. 1818 : **पूर्व सूबेदार बलजोर सिंह** बनाम **भारत संघ और अन्य** ।	4, 5

अपीली अधिकारिता : 2007 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. 164.

हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय को यथा लागू दिल्ली उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेंट नियम के खंड 10 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री संदीप शर्मा, भारत के सहायक महासालिसिटर

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री रीटा गोस्वामी, अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान ने दिया ।

न्या. चौहान – रिट-प्रत्यर्थी ने यह अपील वर्ष 2006 की सिविल रिट याचिका सं. 213 में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 22 जून, 2007 को पारित निर्णय के विरुद्ध फाइल की है, जिसके द्वारा उन्होंने याचिका को मंजूर किया था और रिट याची को तारीख 1 फरवरी, 2005 से निःशक्तता पेंशन प्रदान करने का निदेश दिया था ।

2. मामले के आवश्यक तथ्य संक्षेप में यह हैं कि रिट याची ने 8 अक्तूबर, 1979 को भारतीय सेना में सेवा आरंभ की थी और 5 जनवरी, 2002 को उसके साथ युद्ध दुर्घटना हुई थी जिसके परिणामस्वरूप उसे उसकी सेवा के 25 वर्ष और 106 दिन पूरे होने पर सेवोन्मुक्त कर दिया गया । चिकित्सीय बोर्ड आयोजित करने के पश्चात् रिट याची को निम्न चिकित्सीय वर्गीकरण में रखा गया था । तत्पश्चात् उसे 4 दिसंबर, 2014 को पुनः सर्वेक्षण चिकित्सीय बोर्ड के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा गया था । वहां उसे अशक्त घोषित किया गया था और यह सिफारिश की गई थी कि "उसे 31 जनवरी, 2005 से चिकित्सीय प्रवर्ग एस, एच, ए2 (पी) पी, ई में सेवोन्मुक्त करना उचित है" । उसकी निःशक्तता के संबंध में यह घोषित किया गया था कि उसकी निःशक्तता सेना की सेवा के कारण है और उसकी निःशक्तता को 30% से अधिक अभिलिखित किया गया था । उसे 31 जनवरी, 2005 को सेवोन्मुक्त किया गया और इस प्रकार सेवोन्मुक्त करने के कारण सेना नियम 13(3) के अधीन "उसकी सेवा का

कार्यकाल पूरा हो जाने'' के रूप में उपदर्शित किया गया था तथा उसे 1 फरवरी, 2005 से 5,643/- रुपए प्रतिमास की सेवा पेंशन मंजूर की गई थी । उसे निःशक्तता पेंशन मंजूर नहीं की गई थी, यद्यपि उसकी निःशक्तता को 30% से अधिक निर्धारित किया गया था, जिसका कारण सेना की सेवा थी । उसे 7 मार्च, 2005 को यह सूचना दी गई थी कि चूंकि उसे अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्त किया गया है, इसलिए वह निःशक्तता पेंशन का हकदार नहीं था ।

3. रिट याची ने 13 फरवरी, 2004 को अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्त किए जाने के लिए आवेदन किया था, जिसे प्रभारी अधिकारी अभिलेख द्वारा 2 दिसंबर, 2014 को अनुमोदित किया गया और तद्नुसार उसे 25 वर्ष और 106 दिन की सेवा प्रदान करने के पश्चात् सेना नियम, 1954 के नियम 13(3) के साथ संलग्न सारणी की मद सं. 1(i)(ख) के अधीन पेंशन स्थापन को स्थानांतरित किया गया । उसके पश्चात् उसके कमान अधिकारी, 19 डोगरा द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर प्रभारी अधिकारी, अभिलेख द्वारा 02 दिसंबर, 2014 को उसकी सेवोन्मुक्ति को अनुमोदित किया गया । याची को शारीरिक क्षति 23 मई, 2002 को एक बारूदी सुरंग फटने के कारण हुई थी और उसकी निःशक्तता को 30% से अधिक निर्धारित किया गया और उस समय तक उसने अपनी सेवा के 25 वर्ष और 106 दिन पूरे कर लिए थे । तथापि, शारीरिक क्षति के कारण, उसने मजबूर होकर 13 अक्तूबर, 2014 को सेना की सेवा से मुक्त किए जाने का अनुरोध किया, उसका आवेदन निम्नानुसार है :–

> "प्रेषक : जे सी 519627 एक्स नायब सूबेदार राम कृष्ण
> डी कापी, 19 डोगरा,
> सी/ओ 56 ए पी ओ
>
> द्वारा : कंपनी कमांडर, डी कापी
> 19 डोगरा,
> सी/ओ 56 ए पी ओ
>
> (के माध्यम से)
>
> विषय : **सेना की सेवा से उन्मुक्ति के लिए अनुरोध**
> आदरणीय महोदय,
>
> 1. आदरपूर्वक, मैं नायब सूबेदार राम कृष्ण वर्तमान में 'डी'

कापी, 19 डोगरा में सेवारत हूं । मैं निम्नानुसार अनुरोध करता हूं :–

2. मैं ग्राम और डाकघर सरोह, तहसील घुमारविन, जिला बिलासपुर (हिमाचल प्रदेश) का स्थायी निवासी हूं । मैंने 18 अक्तूबर, 1979 को सेना की सेवा में प्रवेश किया था । अब मैंने अपनी सेना की सेवा के 25 वर्ष पूरे कर लिए हैं । अब मैं नीचे उल्लिखित कारणों से सेना की सेवा से उन्मुक्ति की वांछा करता हूं –

(क) मेरी पत्नी पिछले 5 वर्ष से बीमार है और उसका उपचार सिविल अस्पताल में चल रहा है । इस कारण से मेरे बच्चों की शिक्षा भी बाधित हो रही है ।

(ख) मैं सेना में कोई कठिन कार्य करने में असमर्थ हूं ।

(ग) मेरे पास 20 कनाल कृषि भूमि है, जो देखभाल न होने के कारण बंजर पड़ी है ।

3. ऊपर उल्लिखित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, कृपया मुझे सेना की सेवा से उन्मुक्त होने की अनुमति प्रदान की जाए ।

आपका आज्ञाकारी सैनिक
ह./- xxxxxx
(जे सी-519627 एक्स नायब सूबेदार राम कृष्ण)

तारीख : 13 अक्तूबर, 2004

सिफारिश की गई/सिफारिश नहीं की गई

स्टेशन : सी/ओ 56 ए पी ओ ह./- xxxxxx
तारीख : 13 अक्तूबर, 2004 मेजर
डी कापी कमांडर
19 डोगरा ।

सिफारिश की गई/सिफारिश नहीं की गई

स्टेशन : सी/ओ 56 ए पी ओ ह./- xxxxxx
तारीख : 13 अक्तूबर, 2004 कर्नल
कमान अधिकारी
19 डोगरा ।"

4. विद्वान् एकल न्यायाधीश तारीख 13 अक्तूबर, 2004 के पूर्वोक्त पत्र पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि यद्यपि रिट याची ने सेवोन्मुक्ति के लिए अनुरोध किया था, किंतु उसे स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति नहीं माना जा सकता था क्योंकि वह चिकित्सीय आधारों पर आधारित थी । अतः, याची का मामला नियम 13(3)2(ii) के अंतर्गत आएगा और उस आधार पर वह निःशक्तता पेंशन प्राप्त करने का हकदार होगा । पूर्वोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पूर्व **सूबेदार बलजोर सिंह** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] दिल्ली उच्च न्यायालय की खंड पीठ के निर्णय का अवलंब भी लिया गया था ।

5. अब, जहां तक **बलजोर सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में निर्णय का संबंध है, उसके तथ्य स्पष्ट रूप से विशेषणीय हैं क्योंकि उस मामले में वर्तमान मामले की भांति सेवोन्मुक्ति अनुकम्पा के आधार पर नहीं मांगी गई थी । अतः, इस पृष्ठभूमि में, विचारार्थ केवल यह प्रश्न आवश्यक रूप से उठता है कि क्या अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्ति की वांछा करने के कारण, रिट याची ने निःशक्तता पेंशन का दावा करने का अपना अधिकार खो दिया है, हालांकि उसकी निःशक्तता सेना में उसकी सेवा के कारण है और उसी कारण से उसमें वृद्धि हुई है । इसका उत्तर पेंशन विनियमों के विनियम 173, 173क, 183 और 186 में यथा अंतर्विष्ट उपबंधों में मिलता है, जो निम्नानुसार हैं :–

> "173. जब तक कि विनिर्दिष्ट रूप से अन्यथा उपबंधित न हो, सेवा तत्व और निःशक्तता तत्व से युक्त निःशक्तता पेंशन किसी ऐसे व्यष्टि को मंजूर की जा सकती है, जो ऐसी किसी निःशक्तता, जो सेना सेवा में गैर-युद्ध दुर्घटना के कारण हुई है या उसके कारण उसमें वृद्धि हुई है और जिसे 20 प्रतिशत या उससे अधिक निर्धारित किया गया है, के कारण सेवा से अशक्त ठहराया गया है । इस प्रश्न का अवधारण कि क्या निःशक्तता सेना सेवा के कारण है और उसके कारण उसमें वृद्धि हुई है, परिशिष्ट 2 में दिए नियमों के अधीन किया जाएगा ।
>
> 173क. ऐसे व्यष्टियों को, जिन्हें स्थायी रूप से निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग ('ई' से भिन्न) में रखा गया है और जिन्हें इसलिए सेवोन्मुक्त किया गया है क्योंकि उन्हें उनके निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग से उपयुक्त उनके अपने व्यवसाय/प्रवर्ग में कोई वैकल्पिक नियोजन उपलब्ध नहीं कराया जा सका था या जो ऐसा वैकल्पिक नियोजन स्वीकार करने के इच्छुक नहीं

---

[1] 1997 एल ए बी आई सी 1818.

हैं या जिन्हें ऐसी वैकल्पिक नियुक्ति में रखने के पश्चात्, उनके नियोजन का कार्यकाल पूरा होने से पूर्व सेवोन्मुक्त कर दिया गया है, इन विनियमों के परिशिष्ट 2 में अधिकथित पात्रता नियमों के प्रयोजन के लिए सेवा से अशक्त किया गया समझा जाएगा ।

टिप्पण .....

183. निःशक्तता पेंशन में दो तत्व सम्मिलित होते हैं, अर्थात् सेवा तत्व और निःशक्तता तत्व जिन्हें निम्नानुसार निर्धारित किया जाएगा –

1. सेवा तत्व :

(क)	जहां व्यष्टि ने सेवा पेंशन अर्जित करने के लिए पर्याप्त सेवा प्रदान की है, अर्थात् वास्तविक सेवा 15 वर्ष या अधिक है [(एन सी (ई) की दशा में 20 वर्ष या अधिक] ।	(i)	वास्तव में प्रदान की गई अर्हक सेवा की अवधि से सुसंगत सामान्य सेवा पेंशन के समतुल्य, धन विनियम 136(क) या 146 में दिए गए अनुसार 5 वर्ष का अधिमान ।
(ख)	जहां व्यष्टि ने सेवा पेंशन हेतु अर्हित होने के लिए पर्याप्त सेवा प्रदान की है ।	(i)	यदि निःशक्तता, किसी वायुयान को उड़ाते समय या उसमें से पैराशूट के माध्यम से कूदने का कर्तव्य पूरा करते समय या उपयुक्त प्राधिकार के अधीन किसी वायुयान में कार्य करते हुए वहन की गई है :
		(ii)	उसकी रैंक (विनियम 180 देखें) और समूह, यदि कोई हो, से उपयुक्त न्यूनतम सेवा पेंशन । अन्य सभी मामलों में : विनियम 136(क) या 146 के अनुसार यथा अवधारित सेवा

			पेंशन के समतुल्य, किंतु किसी भी दशा में यह किसी रैंक/वेतन समूह को अनुज्ञेय न्यूनतम सेवा पेंशन के दो तिहाई से कम नहीं होगी । यह आगे और न्यूनतम 375/- रुपए प्रतिमास के अध्यधीन होगी ।

टिप्पण : .....

2. निःशक्तता तत्व xxx xxx xxx

186. (1) ऐसा कोई व्यष्टि, जिसे ऐसी निःशक्तता के साथ सेवा से अशक्त ठहराया गया है, जो सेवा के कारण हुई है या जिसमें सेवा के कारण वृद्धि हुई है, किंतु जिसे 20 प्रतिशत से कम निर्धारित किया गया है, केवल सेवा तत्व के लिए हकदार होगा ।

(2) ऐसा कोई व्यष्टि, जिसे आरंभ में निःशक्तता पेंशन मंजूर की गई थी किंतु उसके पश्चात् उसकी निःशक्तता को 20% से निम्न के रूप में पुनः निर्धारित किया गया है, उस तारीख से जिसको उसकी निःशक्तता 20 प्रतिशत से कम हो जाती है, निःशक्तता पेंशन के निःशक्तता तत्व को आहरित करना बंद कर देगा । तथापि, वह निःशक्तता पेंशन के सेवा तत्व का आहरण करता रहेगा ।"

6. उपरोक्त उपबंधों के संयुक्त परिशीलन से यह प्रतीत होगा कि निःशक्तता पेंशन के दो तत्व हैं – सेवा तत्व और निःशक्तता तत्व । निःशक्तता पेंशन वहां मंजूर की जाती है, जहां किसी व्यष्टि को किसी ऐसी निःशक्तता के कारण सेवा से अशक्त ठहराया जाता है जो सेना सेवा में किसी गैर-युद्ध संबंधी दुर्घटना के कारण हुई है या उसके कारण उसकी निःशक्तता में वृद्धि हुई है और ऐसी निःशक्तता 20% या अधिक निर्धारित की गई है । विनियम 173क, के अधीन स्थायी रूप से निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग ('ई' से भिन्न) में रखे गए और उसमें उल्लिखित परिस्थितियों में निर्मुक्त किए गए व्यष्टियों के संबंध में, परिशिष्ट 2 में अधिकथित पात्रता नियमों के प्रयोजन के लिए "यह माना जाएगा कि उन्हें सेवा से अशक्त ठहराया गया है" । विनियम 183 वह रीति अधिकथित करता है, जिसमें निःशक्तता पेंशन की

रकम का अवधारण करने के लिए सेवा तत्व और निःशक्तता तत्व की संगणना की जाती है । विनियम 186 के अधीन जहां किसी व्यष्टि को ऐसी निःशक्तता के कारण सेवा से अशक्त ठहराया जाता है, जो सेवा के कारण हुई है या सेवा के कारण उसमें वृद्धि हुई है, किंतु जिसे 20% से कम निर्धारित किया गया है वहां वह केवल निःशक्तता पेंशन के सेवा तत्व का हकदार है ।

7. पूर्वोक्त उपबंधों का और परिशीलन करने से यह स्पष्ट है कि निःशक्तता पेंशन की मंजूरी के लिए सेवा से अशक्त होना एक आवश्यक शर्त है । ऐसे किसी व्यष्टि, जो निर्मुक्ति विनियमों के अधीन उसकी निर्मुक्ति के समय उस प्रवर्ग से, जिसमें उसे भर्ती किया गया था, निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में है, के बारे में यह माना जाएगा कि उसे सेवा से अशक्त ठहराया गया है । जे. सी. ओ./ओ. आर. तथा अन्य सेवाओं में उनके समतुल्य व्यक्तियों को, जिन्हें स्थायी रूप से 'ए' से भिन्न किसी चिकित्सीय प्रवर्ग में रखा गया है और उन्हें इसलिए सेवोन्मुक्त किया जाता है क्योंकि वैकल्पिक या आश्रय नियुक्ति उपलब्ध नहीं कराई जा सकी थी और साथ ही ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें वैकल्पिक नियोजन प्रदान किया गया है, किंतु उनके नियोजन का कार्यकाल पूरा होने से पूर्व सेवोन्मुक्त किया जाता है, सेवा से अशक्त ठहराए गए के रूप में माना जाएगा ।

8. पक्षकारों का स्वीकृत पक्षकथन यह है कि भर्ती के समय रिट याची किसी निःशक्तता से ग्रस्त नहीं था और उसे उसके शासकीय कर्तव्य का निर्वहन करते समय एक बारूदी सुरंग फटने के कारण 23 मई, 2002 को शारीरिक क्षति हुई थी, जिसे अविवादित रूप से उसके पश्चात् 30% निर्धारित किया गया था । याची को पेंशन विनियम 173 के परिशिष्ट 2 के नियम 1 और 2 के अनुसार निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में रखे जाने के पश्चात् यह अपेक्षित था कि उसे सेवा से अशक्त माना जाए ।

9. अपीलार्थी तब यह दलील देंगे कि रिट याची को, जैसा कि उसके तारीख 13 अक्तूबर, 2004 के पत्र से उपदर्शित है, उसकी घरेलू समस्या के कारण अनुकम्पा के आधार पर सेवोन्मुक्त किया गया था और इसलिए, यह कथन नहीं किया जा सकता कि रिट याची अपनी सेवा में बने रहने का इच्छुक था, जबकि अपीलार्थी ने उसे उसके नियोजन का कार्यकाल पूरा होने तक निम्न चिकित्सीय प्रवर्ग में आश्रय नियोजन में रखा था । यह अभिकथन केवल इस साधारण कारण से नामंजूर किए जाने योग्य है कि यह अविवादित है कि

रिट याची 30% से अधिक की निःशक्तता से ग्रस्त हुआ है और उसके सेवोन्मुक्ति के अनुरोध में दिए गए अन्य कारणों के अलावा एक कारण यह भी था कि रिट याची भलीभांति उस रीति में कार्यपालन करने के योग्य नहीं था, जिस प्रकार वह पूर्व में कार्यपालन कर रहा था, जिसका अर्थ अनिवार्य रूप से यह है कि वह स्पष्ट रूप से अपनी निःशक्तता का प्रतिनिर्देश कर रहा था । एक प्रतिबद्ध सैनिक होने के कारण, रिट याची अपने राष्ट्र की सेवा करना चाहता था किंतु उसी समय वह यह नहीं चाहता था कि उसकी निःशक्तता उसकी सेवा में बाधा बने, विशेष रूप से तब जब उसकी निःशक्तता उसे हानि पहुंचा रही थी, जिसके कारण रिट याची के मस्तिष्क में कुंठा की भावना पैदा हो रही होगी । रिट याची के पत्र को केवल उसके शाब्दिक अर्थों तक सीमित नहीं किया जा सकता और उसका निर्वचन शब्द-दर-शब्द नहीं किया जा सकता । इसकी बजाय पत्र के अभिप्राय को समझना होगा । अन्यथा भी, इस बात पर विवाद नहीं है कि याची उस समय निःशक्तता से ग्रस्त हुआ था जब वह राष्ट्र की सेवा कर रहा था और जिसके दौरान वह 30% से अधिक की निःशक्तता से ग्रस्त हुआ था, जिसको अपुरस्कृत नहीं रखा जा सकता ।

10. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं और तद्नुसार अपील और साथ ही लंबित आवेदनों, यदि कोई है, को खारिज किया जाता है । पक्षकार अपने खर्चों का वहन स्वयं करेंगे ।

लेटर्स पेटेंट अपील खारिज की गई ।

पु./क.

परमा और अन्य

बनाम

शिव सिंह (मृत) मार्फत **उसके विधिक प्रतिनिधिगण**

तारीख 28 जुलाई, 2014

न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रत्यास्थापन अधिनियम, 1976 की धारा 13 और परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 18] – द्वितीय अपील – बंधक विलेख की अभिस्वीकृति – अभिस्वीकृति विधिमान्य नहीं होना – परिसीमा अवधि की गणना विधिमान्य अभिस्वीकृति की तारीख से किया जाना – बंधक मोचन कराने के लिए विधि में विहित परिसीमा अवधि व्यतीत हो जाना – यदि बंधक मोचन कराने के लिए विधिमान्य अभिस्वीकृति की तारीख से विहित परिसीमा अवधि व्यतीत हो जाती है और तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन उपलब्ध अन्य उपचार का भी लाभ नहीं उठाया जाता है तो तत्पश्चात् बंधक मोचन के लिए फाइल वाद विबंधित हो जाएगा ।

वर्तमान मामले में, वादियों/प्रत्यर्थियों ने मोचन के लिए वाद फाइल किया था और वादियों ने यह प्रकथन किया था कि वे ग्राम मंगू, परगना मत्यांज कालन, तहसील अर्की, जिला सोलन में स्थित खतौनी सं. 30, खतौनी सं. 120, खसरा सं. 992, माप 17 बीघा, 13 बिस्वा में समाविष्ट भूमि के स्वामी हैं । यह भी प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि को वर्ष संवत् 2004 बी. के. में 400/- रुपए के प्रतिफल के एवज में वादियों द्वारा धानू के पास बंधक रखा गया था और वाद भूमि का वर्ष 1951 में मोचन करा लिया गया था और इस प्रभाव का नामांतरण भी प्रविष्ट करा लिया गया था और तारीख 18 अप्रैल, 1951 को क्रम सं. 839 पर अनुप्रमाणन भी करा लिया गया था । यह भी प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि को धानू के पास 800/- रुपए के प्रतिफल के एवज में तारीख 18 अप्रैल, 1951 को पुनः बंधक रखा गया और इस प्रभाव का नामांतरण भी क्रम सं. 840 पर प्रविष्ट करा लिया गया था जिसका अनुप्रमाणन तारीख 18 अप्रैल, 1951 को हुआ था । चकबंदी के दौरान वादी सं. 1 और 2 के बीच विभाजन हुआ था और पूर्वोक्त वाद भूमि में से खेवट सं. 32, खतौनी सं. 40,

खसरा सं. 3, माप 6 बीघा वादी सं. 2 के हिस्से में आया और खेवट सं. 38, खतौनी सं. 45, खसरा सं. 563, माप 8 बीघा 17 बिस्वा, वादी सं. 1 के हिस्से में आया । यद्यपि, उपर्युक्त वाद भूमि पर बंधकदार सामान्य दर्शित किए गए थे, किन्तु वस्तुतः उक्त भूमि पर बंधकदार के रूप में धानू का कब्जा था और उक्त भूमि पर धानू वादियों की सहमति के बिना संयुक्त बंधकदार मस्ता के रूप में दर्शित था । यह भी प्रकथन किया गया था कि वादी सं. 2 ने धानू बंधकदार के विधिक उत्तराधिकारियों अर्थात् प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 2 से 13 को विचारण न्यायालय के समक्ष मंसू के माध्यम से 400/- रुपए संगत किया था जिसने खेवट सं. 32, खतौनी सं. 40, खसरा सं. 3, माप 6 बीघा भूमि का कब्जा प्रदान किया था और तभी से वादी सं. 2 उस भूमि का कब्जे सहित स्वामी है । आगे, यह प्रकथन किया गया था कि वादियों ने बंधक रकम 400/- रुपए को लेने के लिए प्रतिवादी सं. 1 से सम्पर्क किया था यद्यपि, वह धन लेने का हकदार नहीं था किन्तु आपस में विवाद सुलझाने के लिए खेवट सं. 38, खतौनी सं. 45, खसरा सं. 563 में समाविष्ट भूमि का कब्जा देने के लिए प्रस्थापना की गई थी किन्तु वह सहमत नहीं हुआ और इसलिए, वादी सं. 1 तारीख 4 फरवरी, 1980 को कलक्टर के समक्ष उक्त बंधक भूमि की प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन फाइल करने को बाध्य हुआ जो तारीख 19 अगस्त, 1983 को विनिश्चित हुआ था । कलक्टर, अर्की के आदेश के विरुद्ध प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील भी फाइल की गई थी जिसे भी दोनों राजस्व अधिकारियों द्वारा परिसीमा के आधार पर तारीख 29 अगस्त, 1987 को नामंजूर कर दिया था । वादियों के अनुसार, कलक्टर अर्की और प्रभागीय आयुक्त द्वारा पारित आदेश अवैध, गलत और शून्य है तथा विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । अतएव, वाद भूमि का मोचन के लिए और यह घोषणा करने के लिए कि वादी सं. 2 वाद भूमि के एक भाग का कब्जे सहित स्वामी है क्योंकि उसने बंधक रकम संदत्त कर दी है और धानू के साथ संयुक्त बंधक मस्तिया दर्शित करते हुए राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियां करा ली गई हैं और उसकी मृत्यु के पश्चात् परमा प्रतिवादी सं. 1 का वाद शून्य है और वादी उससे आबद्ध नहीं है । मात्र प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वाद का विरोध किया गया और वाद के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप समय-वर्जित, सिविल न्यायालय की अधिकारिता, वाद बनाए रखने के बारे में किया गया और यह कि प्रतिवादी समय बीतने के साथ कब्जे सहित स्वामी हो गए । गुणागुणों पर प्रतिवादी सं. 1 द्वारा यह स्वीकार किया गया कि वादियों ने प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों अर्थात् धानू और मस्तिया के पास बराबर हिस्सों में कब्जे

सहित वाद भूमि का बंधक रखा था और नामांतरण सं. 700 मंजूर की गई थी और इस प्रभाव का अनुप्रमाणन तारीख 7 फरवरी, 2004 बी. के. को हुआ था, यद्यपि पटवारी ने इसकी रिपोर्ट तारीख 2 जनवरी, 2004 बी. के. को किया था । यह प्रकथन किया गया कि प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों ने वर्ष 2003 बी. के. में वाद भूमि को दखल में लिया था और इस प्रकार, वादियों ने वाद भूमि का मोचन कराने का अधिकार खो दिया है और प्रोफार्मा प्रतिवादी स्वामियों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में नहीं हैं । यह भी प्रकथन किया गया कि भूलवश श्री मस्तिया का नाम प्रविष्ट नहीं हुआ था और नामांतरण में अनुप्रमाणन नहीं हुआ था और जब भूल का पता चला तो तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को इस प्रभाव का नामांतरण सं. 735 अनुप्रमाणित किया गया, जबकि रिपोर्ट इसके तत्काल पश्चात् तारीख 30 फरवरी, 2004 बी. के. को किया गया । प्रतिवादी सं. 1 के अनुसार, वर्ष 1951 में प्रतिवादियों ने 400/- रुपए का और ऋण लिया तथा औपचारिक नामांतरण से यह दर्शित होता है कि उन्होंने 800/- रुपए की वृद्धि पर भूमि का बंधक बनाए रखा, जो अनुप्रमाणित हुआ जिसे सुनिश्चित बढ़े हुए रकम के तथ्य को स्पष्टीकृत करते हुए "इजादी रेहान" के नामांतरण के रूप में वर्णित किया गया और उन बंधकदारों का कब्जा जारी रहा और "इजादी रेहान" और "टर्टीबाई फक्कुअल रेहान" को उसी दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 1951 को रिपोर्ट सं. 291 के आधार पर अनुप्रमाणित किया गया । वादियों ने प्रत्युत्तर फाइल किया और वादपत्र में किए गए प्रकथनों को पुनः दोहराया । वादियों के अनुसार, पूर्ववर्ती बंधक समाप्त हो गया था और वाद भूमि का नया बंधक तारीख 18 अप्रैल, 1951 को सृजित हुआ था । पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों को अभिलिखित करने और मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 18 जनवरी, 1992 को वादियों द्वारा फाइल वाद को खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादियों ने विद्वान् निचले अपील न्यायालय के समक्ष एक अपील फाइल की, जिन्होंने तारीख 23 नवम्बर, 1998 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा अपील स्वीकार कर ली, और उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित 18 जनवरी, 1992 के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया और वादियों द्वारा 800/- रुपए के संदाय पर वाद भूमि का मोचन कराने के माध्यम से कब्जे के लिए फाइल वाद डिक्री कर दिया । इससे व्यथित होकर, प्रतिवादियों ने यह द्वितीय अपील फाइल की । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – तथ्य यह है कि वादियों द्वारा वाद भूमि का बंधक "खरीफ गिरदावरा" संवत् 2003 के दौरान या पूर्व किया गया था और नामांतरण सं. 700 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/ई, तारीख 7 फरवरी, 2004 बी. के. को अनुप्रमाणित किया गया था । यद्यपि, नामांतरण सं. 700 में यह उल्लिखित किया गया है कि वाद भूमि को धानू बंधकदार के पास बंधक रखा गया है किन्तु, नामांतरण सं. 735 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/एफ के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि तारीख 30 फरवरी, 2004 बी. के. को तत्काल ही इस प्रभाव का रिपोर्ट किया गया था मस्तिया भी धानू के साथ सह-बंधकदार है और वह भी वाद भूमि के सह-बंधकदार के रूप में कब्जे में है और इस प्रभाव का नामांतरण तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को अनुप्रमाणित किया गया था और इसके पश्चात्, इसे वर्ष 1946-47 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/सी के लिए जमाबंदी में भी परिलक्षित किया गया है । मस्तिया की मृत्यु के पश्चात्, नामांतरण सं. 786 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ई प्रविष्ट किया गया और इसे तारीख 27 मार्च, 1949 को प्रतिवादी के नाम में अनुप्रमाणित किया गया और इसे वर्ष 1950-51 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एफ में भी परिलक्षित किया गया । यह प्रविष्टि कई वर्षों तक बनी रही जो वादियों के इस आधार को मिथ्या बनाती हैं कि वादियों द्वारा वाद भूमि को मस्तिया के पास कभी बंधक नहीं रखा गया । इस पृष्ठभूमि में, अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसिल ने यह सही ही दलील दी है कि वादियों द्वारा कलक्टर, अर्की द्वारा पारित तारीख 19 अगस्त, 1983 के आदेश प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/टी और प्रभागीय आयुक्त द्वारा पारित तारीख 29 अगस्त, 1987 के आदेश को चुनौती नहीं दी जा सकती है क्योंकि, वे वस्तुतः हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रत्यास्थापन अधिनियम, 1976 के अधीन गठित सक्षम प्राधिकारियों द्वारा पारित किए गए थे, जो उक्त अधिनियम की धारा 13 के अधीन स्पष्टतः वर्जन अधिरोपित करता है । कलक्टर और प्रभागीय आयुक्त की कार्यवाहियों की विधिमान्यता को वर्तमान वाद के माध्यम से चुनौती देते हुए प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है और ऐसी चुनौती को खारिज किया जाना अपेक्षित है । इसके अलावा, दोनों कलक्टर और प्रभागीय आयुक्त ने सुस्पष्टतः यह निष्कर्ष निकाला है कि आवेदन की तारीख पर कोई बंधक अस्तित्व में नहीं है और इसलिए, वे उसे ग्रहण नहीं कर रहे हैं । हलकू पटवारी की वर्ष 1950-51 की "रोजनामचा वकायती" प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/डी में रिपोर्ट सं. 291 जो धानू बंधकदार और वादी गुलाब सिंह द्वारा की गई थी, में स्पष्टतः यह लिखित है कि 400/- रुपए के प्रतिफल के लिए वाद

भूमि के बंधक को 800/- रुपए के प्रतिफल के लिए बंधक माना जाएगा और बंधकदारों का कब्जा बाधित नहीं किया गया और शब्द "रेहान इजादी जारे रेहान कब्जा बस्तूर" प्रयोग किया गया था । नामांतरण सं. 840 से यह दर्शित होता है कि तारीख 18 अप्रैल, 1951 की रिपोर्ट सं. 291, प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/जे के आधार पर उसे अनुप्रमाणित और प्रविष्ट किया गया था जिससे यह परिलक्षित होता है कि केशब राम आदि बंधकदारों से पुनः 400/- रुपए लिए थे और वाद भूमि को 400/- रुपए के प्रतिफल के लिए बंधक समझा गया था । इसी प्रकार, नामांतरण सं. 839 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/एच से भी वैसी ही प्रविष्टि चित्रित होती है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने सही ही यह अभिनिर्धारित किया है कि पंजाब भूमि अभिलेख मैनुअल के पैरा 7 मुद्दा सं. 18 में अन्तर्विष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए नामांतरण सं. 839 और 840 के अनुप्रमाणन की कोई आवश्यकता नहीं थी, जो यह उपबंधित करते हैं कि मात्र पूर्ववर्ती बंधक में बंधक धन की वृद्धि जिसे अन्यथा भी अपरिवर्तित रखा जाता, को नामांतरण रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं करना चाहिए । वस्तुतः, विद्वान् प्रभागीय आयुक्त ने भी यह अभिनिर्धारित किया है कि पटवारी को नए नामांतरण को प्रविष्ट करने की आवश्यकता नहीं थी और पूर्वोक्त "रोजनामचा" में प्रविष्टि रिपोर्ट सं. 291 बंधक धन की वृद्धि को अभिलेख पर लाने के लिए पर्याप्त था । चूंकि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि 400/- रुपए के प्रतिफल में पूर्ववर्ती बंधक, बंधकदारों को वापस कर दिया गया था और उसके पश्चात् वाद भूमि को प्रतिवादी और प्रोफार्मा प्रतिवादियों के हित-पूर्वाधिकारियों के पक्ष में पुनः बंधक कर दिया गया था । इसलिए यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को कोई नया बंधक सृजित नहीं किया गया था । दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1(ए), प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ङ) के विद्वान् काउंसेल श्री अनूपिन्दर रोहल ने यह दलील दी कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने सही ही यह अभिनिर्धारित किया है कि बंधक वर्ष 1950-51 में सृजित किया गया है । क्योंकि बंधक ने प्रयुक्त शब्द "इजादीनामा" और इसके अतिरिक्त शब्द "इजाद" प्रयुक्त किया गया है । मेरे विवेक में, विद्वान् निचले अपील न्यायालय दो बंधकदारों के प्रतिफल पर विचार किए बिना पूर्णतया भटक गया था जो पूर्णतया एक-दूसरे से पृथक् और स्वतंत्र थे, तो क्यों तथाकथित पूर्ववर्ती बंधक 400/- रुपए के अतिरिक्त 400/- रुपए को संदर्भित किया गया । इससे, इस निष्कर्ष की कल्पना करने की

आवश्यकता नहीं है कि यदि दो संव्यवहार पूर्णतया एक-दूसरे से स्वतंत्र हैं तो पूर्ववर्ती संव्यवहार से तुलना या संदर्भित करने की आवश्यकता साधारणतया नहीं रह जाती है । इस कारण से, विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के पैरा 16 में यथाअभिलिखित निष्कर्ष किसी भी प्रकार से कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं । यदि बंधककर्ताओं ने 400/- रुपए की अतिरिक्त रकम प्राप्त की है जैसा कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा उल्लिखित किया गया है, तो सभी अन्तर्वस्तुओं और प्रयोजनों के लिए बंधक निरंतर बना हुआ था और कोई स्वतंत्र बंधक नहीं किया गया था । यद्यपि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण के निष्कर्षों को उलट दिया था किन्तु उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यथाअभिलिखित कारणों को उल्लिखित नहीं किया और इसलिए उन्होंने विधि के अधीन अपने ऊपर अधिरोपित कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया । विद्वान् निचले अपील न्यायालय को निष्कर्ष उलटते समय विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा समनुदेशित कारणों की सूक्ष्म संवीक्षा करनी चाहिए थी और उसके बाद इससे भिन्न निष्कर्ष निकालने के लिए स्वयं अपने कारण समनुदेशित करना चाहिए था । ऐसे कर्तव्य की प्रत्याशा विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय से मात्र अंतिम न्यायालय होने के लिए नहीं की जाती जिसके निष्कर्ष इस न्यायालय के समक्ष चुनौती देने से उन्मुक्त होते हैं अपितु अंतिम न्यायालय होने के नाते भी त्रुटिपूर्ण विनिश्चय द्वितीय अपील में इस न्यायालय के समक्ष आलोचनीय नहीं होते हैं क्योंकि इस न्यायालय की अधिकारिता मात्र विधि के प्रश्न पर ही प्रथम अपील न्यायालय के निष्कर्ष में विधि की त्रुटि या तथ्यों की त्रुटि के बारे में ही उपलब्ध है जब तक कि विधि का प्रश्न सारवान् नहीं हो । प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ङ) और दो के विद्वान् काउंसेल श्री रोहल ने यह दलील दी कि चूंकि उसके बाद "रपट" प्रविष्ट की गई थी जो लिखित में थी जिसमें संबंधित पक्षकारों की उपस्थिति चिन्हित की गई थी, उसे परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 18 के निबंधनों में अभिस्वीकृति मानी जा सकती है और इसलिए, परिसीमा अवधि की गणना ऐसी अभिस्वीकृति की तारीख से की जानी अपेक्षित है न कि आरंभिक बंधक की तारीख से । न्यायालय को यह शंका है कि इस अभिवाक् को स्वीकार किया जा सकता है, कि इस कारण से कि धारा 18 के प्रयोजन के लिए अभिस्वीकृति न केवल लिखित में जानी अपेक्षित है अपितु उस पर हस्ताक्षर भी किए जाने अपेक्षित हैं या तो व्यक्तिगत तौर पर या उसकी ओर से सम्यक् रूप से प्राधिकृत अभिकर्ता

की ओर से । (पैरा 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15 और 16)

यह दर्शित होता है कि विधिमान्य अभिस्वीकृति की आवश्यक अपेक्षाएं हैं – (i) स्वीकृति या अभिस्वीकृति, (ii) कि ऐसी अभिस्वीकृति, संपत्ति या अधिकार के बारे में दायित्व के संबंध में होनी चाहिए, (iii) कि यह परिसीमा अवधि की समाप्ति के पूर्व होनी चाहिए, और (iv) कि लिखित में होना चाहिए और उस पक्षकार द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए जिसके विरुद्ध ऐसी संपत्ति या अधिकार दावाकृत है । पूर्वोक्त शर्तों में से किसी के भी अभाव में, "रपट" में प्रविष्टि को लिखित में अभिस्वीकृति नहीं माना जा सकता है । इसका कारण सुस्पष्ट है कि वैयक्तिक अभिस्वीकृति अपने दायित्व की सचेतता में होनी चाहिए क्योंकि यह प्रतिबद्धता दायित्व के बारे में आवश्यक है । स्वीकृततः, इस मामले में अन्य अपेक्षाओं के अलावा ऐसी कोई अभिस्वीकृति नहीं है जिस पर उस पक्षकार द्वारा हस्ताक्षर किए गए हों जिसके विरुद्ध ऐसे दायित्व या अधिकार दावाकृत हैं । उन्होंने विद्वान् निचले न्यायालय की मताभिव्यक्तियों का भी अवलंब लिया जिन्होंने इस मामले का भी अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि मोचन के प्रयोजन के लिए तीस वर्ष की परिसीमा अवधि, वर्ष 1951 में बंधक की अभिस्वीकृति के 12 वर्ष बीतने के पश्चात् वर्ष 1963 में ही आरंभ होती है जो वर्ष 1993 आती है और वाद, तारीख 18 अप्रैल, 1988 को संस्थित किया गया है और इसलिए, यह परिसीमा अवधि के भीतर है । मुझे आशंका है कि प्रत्यर्थियों की यह दलील भी स्वीकार नहीं की जा सकती है, क्योंकि, स्वीकृततः पुराने हिमाचल में, उस समय अविभावी विधियों के अनुसार, मौखिक बंधक विधिमान्य तौर पर अनुज्ञेय था और इसलिए, 12 वर्ष की चिरभोग अवधि का फायदा प्रत्यर्थियों को उपलब्ध नहीं है । वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा यह वाद फाइल नहीं कर सकने के अन्य कारण भी हैं । वादियों/प्रत्यर्थियों को स्वीकृततः उस समय जब बंधक किया गया था, दो विकल्प थे या तो सिविल न्यायालय के समक्ष जा सकते थे या हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रतिस्थापन अधिनियम, 1976 के अधीन गठित प्राधिकारियों के समक्ष जा सकते थे । विकल्प चुनने और अधिनियम, 1976 के अधीन गठित प्राधिकारियों के समक्ष अवसर लेने के पश्चात्, वादी-प्रत्यर्थी वर्तमान वाद फाइल करने से विबंधित हो गए हैं । (पैरा 17, 18, 21, 22 और 23)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2001]	[2001] 4 उम. नि. प. 300 = (2001) 3 एस. सी. सी. 179 : **संतोष हजारी** बनाम **पुरुषोत्तम तिवारी (मृत)** मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण** ;	15
[1994]	1994 (1) नवीनतम ला जर्नल (एच. पी.) 636 : **जगदीश दत्त सामनोल और अन्य** बनाम **मैसर्स राला राम चरनजी लाल और अन्य** ;	19
[1981]	ए. आई. आर. 1981 गुजरात 142 : **बाई सकीनाबाई और अन्य** बनाम **गुलाम रसूल उमरभाई शेख** ;	20
[1966]	(1966) पंजाब ला रिपोर्टर 408 : **इन्दर सिंह और अन्य** बनाम **मुस्तफा किशनो और अन्य** ।	21

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 1999 की नियमित द्वितीय अपील सं. 11.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से	सर्वश्री भूपेन्दर गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ नीरज गुप्ता, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ङ) और 2 की ओर से	श्री अनूपिन्दर रोहल, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 7(क) से 7(घ) की ओर से	सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ बी. सी. वर्मा, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान – यह नियमित द्वितीय अपील प्रतिवादियों, जो इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी हैं, ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन द्वारा 1992 की सिविल अपील सं. 3-एन. एस./13 में पारित तारीख 23 नवम्बर, 1988 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की है जिसके द्वारा उन्होंने विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, अर्की द्वारा

1988 की वाद सं. 53/1 में पारित तारीख 18 जनवरी, 1992 के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया था । परिणामतः, वाद भूमि के मोचन द्वारा कब्जे के लिए वादियों का वाद 800/- रुपए की रकम पर बंधक के लिए संदाय करने पर डिक्री हो गया था ।

2. वादियों/प्रत्यर्थियों (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् "वादियों" कहा गया है) ने मोचन के लिए वाद फाइल किया था और वादियों ने यह प्रकथन किया था कि वे ग्राम मंगू, परगना मत्यांज कालन, तहसील अर्की, जिला सोलन में स्थित खतौनी सं. 30, खतौनी सं. 120, खसरा सं. 992, माप 17 बीघा, 13 बिस्वा में समाविष्ट भूमि (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वाद भूमि" कहा गया है) के स्वामी हैं । यह भी प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि को वर्ष संवत् 2004 बी. के. में 400/- रुपए के प्रतिफल के एवज में वादियों द्वारा धानू के पास बंधक रखा गया था और वाद भूमि का वर्ष 1951 में मोचन करा लिया गया था और इस प्रभाव का नामांतरण भी प्रविष्ट करा लिया गया था और तारीख 18 अप्रैल, 1951 को क्रम सं. 839 पर अनुप्रमाणन भी करा लिया गया था । यह भी प्रकथन किया गया था कि वाद भूमि को धानू के पास 800/- रुपए के प्रतिफल के एवज में तारीख 18 अप्रैल, 1951 को पुनः बंधक रखा गया और इस प्रभाव का नामांतरण भी क्रम सं. 840 पर प्रविष्ट करा लिया गया था जिसका अनुप्रमाणन तारीख 18 अप्रैल, 1951 को हुआ था । चकबंदी के दौरान वादी सं. 1 और 2 के बीच विभाजन हुआ था और पूर्वोक्त वाद भूमि में से खेवट सं. 32, खतौनी सं. 40, खसरा सं. 3, माप 6 बीघा वादी सं. 2 के हिस्से में आया और खेवट सं. 38, खतौनी सं. 45, खसरा सं. 563, माप 8 बीघा 17 बिस्वा, वादी सं. 1 के हिस्से में आया । यद्यपि, उपर्युक्त वाद भूमि पर बंधकदार सामान्य दर्शित किए गए थे, किन्तु वस्तुतः उक्त भूमि पर बंधकदार के रूप में धानू का कब्जा था और उक्त भूमि पर धानू वादियों की सहमति के बिना संयुक्त बंधकदार मस्ता के रूप में दर्शित था । यह भी प्रकथन किया गया था कि वादी सं. 2 ने धानू बंधकदार के विधिक उत्तराधिकारियों अर्थात् प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 2 से 13 को विचारण न्यायालय के समक्ष मंसू के माध्यम से 400/- रुपए संगत किया था जिसने खेवट सं. 32, खतौनी सं. 40, खसरा सं. 3, माप 6 बीघा भूमि का कब्जा प्रदान किया था और तभी से वादी सं. 2 उस भूमि का कब्जे सहित स्वामी है ।

3. आगे, यह प्रकथन किया गया था कि वादियों ने बंधक रकम 400/- रुपए को लेने के लिए प्रतिवादी सं. 1 से सम्पर्क किया था यद्यपि, वह धन लेने का हकदार नहीं था किन्तु आपस में विवाद सुलझाने के लिए

खेवट सं. 38, खतौनी सं. 45, खसरा सं. 563 में समाविष्ट भूमि का कब्जा देने के लिए प्रस्थापना की गई थी किन्तु वह सहमत नहीं हुआ और इसलिए, वादी सं. 1 तारीख 4 फरवरी, 1980 को कलक्टर के समक्ष उक्त बंधक भूमि की प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन फाइल करने को बाध्य हुआ जो तारीख 19 अगस्त, 1983 को विनिश्चित हुआ था । कलक्टर, अर्की के आदेश के विरुद्ध प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील भी फाइल की गई थी जिसे भी दोनों राजस्व अधिकारियों द्वारा परिसीमा के आधार पर तारीख 29 अगस्त, 1987 को नामंजूर कर दिया था । वादियों के अनुसार, कलक्टर अर्की और प्रभागीय आयुक्त द्वारा पारित आदेश अवैध, गलत और शून्य है तथा विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । अतएव, वाद भूमि का मोचन के लिए और यह घोषणा करने के लिए कि वादी सं. 2 वाद भूमि के एक भाग का कब्जे सहित स्वामी है क्योंकि उसने बंधक रकम संदत्त कर दी है और धानू के साथ संयुक्त बंधक मस्तिया दर्शित करते हुए राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियां करा ली गई हैं और उसकी मृत्यु के पश्चात् परमा प्रतिवादी सं. 1 का वाद शून्य है और वादी उससे आबद्ध नहीं है ।

4. मात्र प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वाद का विरोध किया गया और वाद के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप समय-वर्जित, सिविल न्यायालय की अधिकारिता, वाद बनाए रखने के बारे में किया गया और यह कि प्रतिवादी समय बीतने के साथ कब्जे सहित स्वामी हो गए । गुणागुणों पर प्रतिवादी सं. 1 द्वारा यह स्वीकार किया गया कि वादियों ने प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों अर्थात् धानू और मस्तिया के पास बराबर हिस्सों में कब्जे सहित वाद भूमि का बंधक रखा था और नामांतरण सं. 700 मंजूर की गई थी और इस प्रभाव का अनुप्रमाणन तारीख 7 फरवरी, 2004 बी. के. को हुआ था, यद्यपि पटवारी ने इसकी रिपोर्ट तारीख 2 जनवरी, 2004 बी. के. को किया था । यह प्रकथन किया गया कि प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों ने वर्ष 2003 बी. के. में वाद भूमि को दखल में लिया था और इस प्रकार, वादियों ने वाद भूमि का मोचन कराने का अधिकार खो दिया है और प्रोफार्मा प्रतिवादी स्वामियों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में नहीं हैं । यह भी प्रकथन किया गया कि भूलवश श्री मस्तिया का नाम प्रविष्ट नहीं हुआ था और नामांतरण में अनुप्रमाणन नहीं हुआ था और जब भूल का पता चला तो तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को इस प्रभाव का नामांतरण सं. 735 अनुप्रमाणित किया गया, जबकि रिपोर्ट इसके तत्काल पश्चात् तारीख 30 फरवरी, 2004 बी. के. को किया गया । प्रतिवादी सं. 1 के अनुसार, वर्ष 1951 में प्रतिवादियों 400/- रुपए का और ऋण लिया तथा औपचारिक नामांतरण से

यह दर्शित होता है कि उन्होंने 800/- रुपए की वृद्धि पर भूमि का बंधक बनाए रखा, जो अनुप्रमाणित हुआ जिसे सुनिश्चित बढ़े हुए रकम के तथ्य को स्पष्टीकृत करते हुए ''इजादी रेहान'' के नामांतरण के रूप में वर्णित किया गया और उन बंधकदारों का कब्जा जारी रहा और ''इजादी रेहान'' और ''टर्टीबाई फक्कुअल रेहान'' को उसी दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 1951 को रिपोर्ट सं. 291 के आधार पर अनुप्रमाणित किया गया ।

5. वादियों ने प्रत्युत्तर फाइल किया और वादपत्र में किए गए प्रकथनों को पुनः दोहराया । वादियों के अनुसार, पूर्ववर्ती बंधक समाप्त हो गया था और वाद भूमि का नया बंधक तारीख 18 अप्रैल, 1951 को सृजित हुआ था ।

6. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 15 मई, 1990 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए :–

> ''1. क्या वादी, वाद भूमि का मोचन कराने के हकदार हैं, जैसा कि अभिकथित है ?
>
> 2. क्या वाद समय-वर्जित है ?
>
> 3. क्या इस न्यायालय की अधिकारिता वर्जित है, जैसा कि अभिकथित है ?
>
> 4. क्या प्रतिवादी समय बीतने के साथ कब्जे सहित स्वामी हो गए हैं ?
>
> 5. अनुतोष ।''

7. पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों को अभिलिखित करने और मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 18 जनवरी, 1992 को वादियों द्वारा फाइल वाद को खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादियों ने विद्वान् निचले अपील न्यायालय के समक्ष एक अपील फाइल की, जिन्होंने तारीख 23 नवम्बर, 1998 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा अपील स्वीकार कर ली, और उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित 18 जनवरी, 1992 के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया और वादियों द्वारा 800/- रुपए के संदाय पर वाद भूमि का मोचन कराने के माध्यम से कब्जे के लिए फाइल वाद डिक्री कर दिया ।

8. यह, यही निर्णय और डिक्री है जिसे इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है । तारीख 8 जनवरी, 1999 को इस न्यायालय ने

निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर अपील स्वीकार कर ली थी :–

1. जब वाद फाइल करने के 30 वर्षों से अधिक समय पूर्व बंधक सृजित हुआ तो क्या वाद को परिसीमा अवधि के भीतर अभिनिर्धारित किया जा सकता है, मात्र इस तथ्य पर कि बंधक की रकम को बढ़ाने के तथ्य को राजस्व अधिकारी को रिपोर्ट किया गया था, विशिष्टतया तब जबकि ऐसी रिपोर्ट को विधि के अनुसरण में साबित नहीं किया गया है ?

2. क्या राजस्व अधिकारी को की गई रिपोर्ट जिस पर न तो बंधककर्ता के हस्ताक्षर थे न ही अंगूठे के निशान तो भी क्या इसे परिसीमा अधिनियम, 1963 के उपबंधों के भीतर अभिस्वीकृति कहा जा सकता है, जिससे कि बंधक मोचन के लिए परिसीमा अवधि को बढ़ाया जा सके, तो क्या निचले अपील न्यायालय ऐसे नामांतरण पर विश्वास कर सकता है जो बंधक रकम बढ़ाने का साक्ष्य है जिससे कि बंधककर्ता को नई परिसीमा अवधि दे सके ?

3. क्या हिमाचल प्रदेश बंधक मोचन अधिनियम, 1971 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए सक्षम अधिकारियों द्वारा पारित आदेश अंतिम होते हैं और सिविल न्यायालय में अनाक्षेपणीय होते हैं, क्या ऐसे आदेश वाद फाइल करने को वर्जित करते हैं जो आन्वयिक प्राग-न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण करता है ?

4. क्या विद्वान् अपील निचले न्यायालय ने इस माननीय न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए, हिमाचल प्रदेश ऋण मोचन अधिनियम, 1953 के उपबंधों का गलत तौर पर अवलंब लिया है, जिसे ऐसे अधिनियम के अधीन दिया गया था, विशिष्टतया, तब जबकि ऐसा अधिनियम वादी/प्रत्यर्थी द्वारा वाद फाइल किए जाने के काफी समय पूर्व निरस्त हो गया था ?

5. क्या विद्वान् निचले अपील न्यायालय स्वयं को अपील न्यायालय मानते हुए हिमाचल प्रदेश भूमि बंधक मोचन अधिनियम, 1971 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए सक्षम प्राधिकारियों के आदेशों की सुनवाई करते हुए अपनी अधिकारिता का अतिक्रमण किया है, तो क्या ऐसे निष्कर्षों को सिविल न्यायालय द्वारा अपास्त किया जा सकता है, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि बंधक को विधि की त्रुटिपूर्ण मत अपनाते हुए अस्तित्व में बनाए रखा गया ?

विधि का प्रश्न सं. 1 से 5

9. सुविधा के लिए, विधि के सभी सारवान् प्रश्नों पर एक साथ विचार किया जाता है । तथ्य यह हैं कि वादियों द्वारा वाद भूमि का बंधक "खरीफ गिरदावरी" संवत् 2003 के दौरान या पूर्व किया गया था और नामांतरण सं. 700 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/ई, तारीख 7 फरवरी, 2004 बी. के. को अनुप्रमाणित किया गया था । यद्यपि, नामांतरण सं. 700 में यह उल्लिखित किया गया है कि वाद भूमि को धानू बंधकदार के पास बंधक रखा गया है किन्तु, नामांतरण सं. 735 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/एफ के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि तारीख 30 फरवरी, 2004 बी. के. को तत्काल ही इस प्रभाव का रिपोर्ट किया गया था मस्तिया भी धानू के साथ सह-बंधकदार है और वह भी वाद भूमि के सह-बंधकदार के रूप में कब्जे में है और इस प्रभाव का नामांतरण तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को अनुप्रमाणित किया गया था और इसके पश्चात्, इसे वर्ष 1946-47 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/सी के लिए जमाबंदी में भी परिलक्षित किया गया है ।

10. मस्तिया की मृत्यु के पश्चात्, नामांतरण सं. 786 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ई प्रविष्ट किया गया और इसे तारीख 27 मार्च, 1949 को प्रतिवादी के नाम में अनुप्रमाणित किया गया और इसे वर्ष 1950-51 प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/एफ में भी परिलक्षित किया गया । यह प्रविष्टि कई वर्षों तक बनी रही जो वादियों के इस आधार को मिथ्या बनाती हैं कि वादियों द्वारा वाद भूमि को मस्तिया के पास कभी बंधक नहीं रखा गया । इस पृष्ठभूमि में, अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसिल ने यह सही ही दलील दी है कि वादियों द्वारा कलक्टर, अर्की द्वारा पारित तारीख 19 अगस्त, 1983 के आदेश प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/टी और प्रभागीय आयुक्त द्वारा पारित तारीख 29 अगस्त, 1987 के आदेश को चुनौती नहीं दी जा सकती है क्योंकि, वे वस्तुतः हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रत्यास्थापन अधिनियम, 1976 के अधीन गठित सक्षम प्राधिकारियों द्वारा पारित किए गए थे, जो उक्त अधिनियम की धारा 13 के अधीन स्पष्टतः वर्जन अधिरोपित करता है, जो इस प्रकार है :–

> "13. **सिविल न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन** – किसी सिविल न्यायालय की इस अधिनियम के अधीन निर्वापित घोषित बंधक के अधीन किसी अधिकार को प्रवर्तित कराने या इस अधिनियम के अधीन किन्हीं कार्यवाहियों की विधिमान्यता को प्रश्नगत करने के दावे को ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं होगी ।"

पूर्वोक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, कलक्टर और प्रभागीय आयुक्त की कार्यवाहियों की विधिमान्यता को वर्तमान वाद के माध्यम से चुनौती देते हुए प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है और ऐसी चुनौती को खारिज किया जाना अपेक्षित है ।

11. इसके अलावा, दोनों कलक्टर और प्रभागीय आयुक्त ने सुस्पष्टतः यह निष्कर्ष निकाला है कि आवेदन की तारीख पर कोई बंधक अस्तित्व में नहीं है और इसलिए, वे उसे ग्रहण नहीं कर रहे हैं ।

12. हलकू पटवारी की वर्ष 1950-51 की ''रोजनामचा वकायती'' प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/डी. में रिपोर्ट सं. 291 जो धानू बंधकदार और वादी गुलाब सिंह द्वारा की गई थी, में स्पष्टतः यह लिखित है कि 400/- रुपए के प्रतिफल के लिए वाद भूमि के बंधक को 800/- रुपए के प्रतिफल के लिए बंधक माना जाएगा और बंधकदारों का कब्जा बाधित नहीं किया गया और शब्द ''रेहान इजादी जारे रेहान कब्जा बस्तूर'' प्रयोग किया गया था । नामांतरण सं. 840 से यह दर्शित होता है कि तारीख 18 अप्रैल, 1951 की रिपोर्ट सं. 291, प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/जे के आधार पर उसे अनुप्रमाणित और प्रविष्ट किया गया था जिससे यह परिलक्षित होता है कि केशब राम आदि बंधकदारों से पुनः 400/- रुपए लिए थे और वाद भूमि को 400/- रुपए के प्रतिफल के लिए बंधक समझा गया था । इसी प्रकार, नामांतरण सं. 839 प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/एच से भी वैसी ही प्रविष्टि चित्रित होती है ।

13. इस पृष्ठभूमि में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने सही ही यह अभिनिर्धारित किया है कि पंजाब भूमि अभिलेख मैनुअल के पैरा 7 मुद्दा सं. 18 में अन्तर्विष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए नामांतरण सं. 839 और 840 के अनुप्रमाणन की कोई आवश्यकता नहीं थी, जो यह उपबंधित करते हैं कि मात्र पूर्ववर्ती बंधक में बंधक धन की वृद्धि जिसे अन्यथा भी अपरिवर्तित रखा जाता, को नामांतरण रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं करना चाहिए । वस्तुतः, विद्वान् प्रभागीय आयुक्त ने भी यह अभिनिर्धारित किया है कि पटवारी को नए नामांतरण को प्रविष्ट करने की आवश्यकता नहीं थी और पूर्वोक्त ''रोजनामचा'' में प्रविष्टि रिपोर्ट सं. 291 बंधक धन की वृद्धि को अभिलेख पर लाने के लिए पर्याप्त था । चूंकि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि 400/- रुपए के प्रतिफल में पूर्ववर्ती बंधक, बंधकदारों को वापस कर दिया गया था और उसके पश्चात् वाद भूमि को प्रतिवादी और प्रोफार्मा प्रतिवादियों के हित-पूर्वाधिकारियों के पक्ष में पुनः बंधक कर दिया गया था ।

इसलिए यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि तारीख 25 मार्च, 2004 बी. के. को कोई नया बंधक सृजित नहीं किया गया था ।

14. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1(ए), प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ङ) के विद्वान् काउंसेल श्री अनूपिन्दर रोहल ने यह दलील दी कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने सही ही यह अभिनिर्धारित किया है कि बंधक वर्ष 1950-51 में सृजित किया गया है । क्योंकि बंधक ने प्रयुक्त शब्द "इजादीनामा" और इसके अतिरिक्त शब्द "इजाद" प्रयुक्त किया गया है । मेरे विवेक में, विद्वान् निचले अपील न्यायालय दो बंधकदारों के प्रतिफल पर विचार किए बिना पूर्णतया भटक गया था जो पूर्णतया एक-दूसरे से पृथक् और स्वतंत्र थे, तो क्यों तथाकथित पूर्ववर्ती बंधक 400/- रुपए के अतिरिक्त 400/- रुपए को संदर्भित किया गया । इससे, इस निष्कर्ष की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है कि यदि दो संव्यवहार पूर्णतया एक-दूसरे से स्वतंत्र हैं तो पूर्ववर्ती संव्यवहार से तुलना या संदर्भित करने की आवश्यकता साधारणतया नहीं रह जाती है । इस कारण से, विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के पैरा 16 में यथा अभिलिखित निष्कर्ष किसी भी प्रकार से कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं । यदि बंधककर्ताओं ने 400/- रुपए की अतिरिक्त रकम प्राप्त की है जैसा कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा उल्लिखित किया गया है, तो सभी अन्तर्वस्तुओं और प्रयोजनों के लिए बंधक निरंतर बना हुआ था और कोई स्वतंत्र बंधक नहीं किया गया था ।

15. यद्यपि, विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने विद्वान् विचारण के निष्कर्षों को उलट दिया था किन्तु उन्होंने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यथाअभिलिखित कारणों को उल्लिखित नहीं किया और इसलिए उन्होंने विधि के अधीन अपने ऊपर अधिरोपित कर्तव्यों का निर्वहन नहीं किया । विद्वान् निचले अपील न्यायालय को निष्कर्ष उलटते समय विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा समनुदेशित कारणों की सूक्ष्म संवीक्षा करनी चाहिए थी और उसके बाद इससे भिन्न निष्कर्ष निकालने के लिए स्वयं अपने कारण समनुदेशित करना चाहिए था । ऐसे कर्तव्य की प्रत्याशा विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय से मात्र अंतिम न्यायालय होने के लिए नहीं की जाती जिसके निष्कर्ष इस न्यायालय के समक्ष चुनौती देने से उन्मुक्त होते हैं अपितु अंतिम न्यायालय होने के नाते भी त्रुटिपूर्ण विनिश्चय द्वितीय अपील में इस न्यायालय के समक्ष आलोचनीय नहीं होते हैं क्योंकि इस न्यायालय की अधिकारिता मात्र विधि के प्रश्न पर ही प्रथम अपील न्यायालय के निष्कर्ष

में विधि की त्रुटि या तथ्यों की त्रुटि के बारे में ही उपलब्ध है जब तक कि विधि का प्रश्न सारवान् नहीं हो । ऐसा ही **संतोष हजारी** बनाम **पुरुषोत्तम तिवारी (मृत)** मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है ।

> "15. विचारण न्यायालय के निर्णय के परिशीलन से दर्शित होता है कि इसने उन विवाद्यकों, जिन पर पक्षकारों ने विचारण की ईप्सा की थी, को विनिश्चित करने के लिए पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर व्यापक रूप से विचार किया है । उसने यह भी निष्कर्ष निकाला कि विवादित भूमि पर प्रतिकूल कब्जे के अपने अभिवाक् के समर्थन में प्रतिवादी ने कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जबकि प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य विरोधी प्रकृति का था और इसलिए उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता है । प्रथम अपील न्यायालय ने कब्जे और बेकब्जा करने के प्रश्न पर जैसाकि वादी द्वारा अभिकथित किया गया और प्रतिकूल कब्जे के प्रश्न पर प्रतिवादी द्वारा भी अभिवाक् किया गया बहुत ही अस्पष्ट रीति में निर्णय को उलट दिया । अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटने अथवा पुष्ट करने की अधिकारिता है । प्रथम अपील करना पक्षकारों का महत्वपूर्ण अधिकार है और जब तक विधि द्वारा निर्बंधित न हो, इस दृष्टि से पूरे मामले में तथ्य और विधि के प्रश्नों पर पुनः सुनवाई की जा सकती है । अतः अपील न्यायालय के निर्णय से उसके द्वारा प्रबुद्ध विवेक का प्रयोग करना दर्शित होना चाहिए और पक्षकारों द्वारा अपील न्यायालय के विनिश्चय के लिए बल दिए गए तर्कों के साथ उद्भूत सभी विवाद्यकों के संबंध में अपने निष्कर्ष कारण सहित अभिलिखित करने चाहिएं । अपील न्यायालय के लिए विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करना आसान है । यदि अपील न्यायालय विचारण न्यायालय के मत से सहमत है तो उसे विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों को दोहराने अथवा साक्ष्य के प्रभाव को बताने की आवश्यकता नहीं है; न्यायालय द्वारा दिए गए कारण के साथ-साथ जिसका विनिश्चय अपीलाधीन है, सामान्य सहमति की अभिव्यक्ति साधारणतः पर्याप्त होगी । [गिरिजानन्दनी देवी और अन्य **बनाम** बिजेन्द्र नारायण चौधरी (ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1124) वाले मामले को देखें] तथापि, हम सावधान करते हैं । अपीलाधीन निर्णय में अभिलिखित निष्कर्षों के साथ

---

[1] [2001] 4 उम. नि. प. 300 = (2001) 3 एस. सी. सी. 179.

साधारण सहमति की अभिव्यक्ति अपील न्यायालय द्वारा उसे सौंपे गए कर्तव्य से बचने के लिए अंगीकृत युक्ति या छल के रूप में नहीं होनी चाहिए । अपील न्यायालय को निर्णय उलटते समय दो सिद्धांतों के प्रति सावधान रहना होगा । प्रथमतः, अपील न्यायालय को भी विचारण न्यायालय द्वारा विरोधी साक्ष्य के आधार पर दिए गए तथ्य के निष्कर्ष को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए, इससे भी अधिक तब जब उसी पीठासीन न्यायाधीश जो निर्णय का लेखक था, द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष मौखिक साक्ष्य पर आधारित हो । निश्चित तौर पर इसका यह अर्थ नहीं होना चाहिए कि जब कोई अपील तथ्यों के आधार पर की जाती है तो अपील न्यायालय विचारण न्यायाधीश द्वारा निकाले गए तथ्य के निष्कर्ष को उलटने के लिए सक्षम नहीं होगा । यदि विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य का आकलन विधि की दृष्टि से तात्विक अनियमितताओं से ग्रस्त है अथवा अग्राह्य साक्ष्य पर आधारित है अथवा निराधार कल्पनाओं और अनुमान पर आधारित है तो अपील न्यायालय तथ्य संबंधी निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का हकदार होगा । [मधुसूदन दास **बनाम** श्रीमती नारायणी बाई और अन्य (1983) 2 उम. नि. प. 588 = ए. आई. आर. 1983 एस. सी. 214 = (1983) 1 एस. सी. सी. 35 वाला मामला देंखे] नियम यह है और यह व्यवहार नियम से अधिक कुछ नहीं है कि जब किसी मामले में किसी विवाद्यक पर पक्षकारों द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य में विरोध है और इसका विनिश्चय साक्षियों की विश्वसनीयता पर निर्भर है तो जब तक विशिष्ट साक्षी के साक्ष्य की कोई ऐसी विशेषता न हो, जिस पर विचारण न्यायालय का ध्यान न गया हो अथवा वह कैसे विश्वसनीय होगा इस संबंध में उसका मत निरस्त होने की पर्याप्त असंभाव्यता हो तब तक अपील न्यायालय तथ्य के प्रश्न पर विचारण न्यायाधीश के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करेगा । [सरजू प्रसाद रामदेव साहू **बनाम** ज्वलेश्वरी प्रताप नारायण सिंह और अन्य (ए. आई. आर. 1951 एस. सी. 120) वाला मामला देखें] द्वितीयतः, तथ्य के निष्कर्ष को उलटते समय अपील न्यायालय को विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्कों पर ध्यान देना होगा और तत्पश्चात् भिन्न निष्कर्ष देने के संबंध में अपने तर्क देने होंगे । इससे न्यायालय अगली अपील की सुनवाई करने वाले न्यायालय का समाधान हो जाएगा कि प्रथम अपील न्यायालय ने अपने उन कर्तव्यों का निर्वहन किया था जिसकी उससे प्रत्याशा की गई थी । हमें केवल प्रथम अपील न्यायालयों को संहिता में प्रतिस्थापित वर्तमान धारा 100 की

स्कीम द्वारा उन पर डाली गई अतिरिक्त बाध्यताओं को स्मरण करवाने की आवश्यकता है । प्रथम अपील न्यायालय पहले की भांति तथ्य संबंधी अंतिम न्यायालय होगा; तथ्य के विशुद्ध निष्कर्ष को द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी जा सकती है । अब, प्रथम अपील न्यायालय इस अर्थ में भी अंतिम न्यायालय है कि विधि के प्रश्न पर इसका विनिश्चय भले ही यदि गलत हो तो भी द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय के समक्ष आलोच्य नहीं हो सकता है क्योंकि उच्च न्यायालय की अधिकारिता विधि के प्रश्नों पर भी प्रथम अपील न्यायालय के दोषपूर्ण निष्कर्षों या विधि की गलतियों को सुधारने के संबंध में अब समाप्त हो गई है जब तक ऐसा विधि का प्रश्न सारवान् न हो ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया ।)

16. उसके बाद, प्रत्यर्थी सं. 1(क) से 1(ङ) और दो के विद्वान् काउंसेल श्री रोहल ने यह दलील दी कि चूंकि उसके बाद "रपट" प्रविष्ट की गई थी जो लिखित में थी जिसमें संबंधित पक्षकारों की उपस्थिति चिन्हित की गई थी, उसे परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 18 के निबंधनों में अभिस्वीकृति मानी जा सकती है और इसलिए, परिसीमा अवधि की गणना ऐसी अभिस्वीकृति की तारीख से की जानी अपेक्षित है न कि आरंभिक बंधक की तारीख से । मुझे शंका है कि इस अभिवाक् को स्वीकार किया जा सकता है, कि इस कारण से कि धारा 18 के प्रयोजन के लिए अभिस्वीकृति न केवल लिखित में की जानी अपेक्षित है अपितु उस पर हस्ताक्षर भी किए जाने अपेक्षित हैं या तो व्यक्तिगत तौर पर या उसकी ओर से सम्यक् रूप से प्राधिकृत अभिकर्ता की ओर से । परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा इस प्रकार है :–

"धारा 18. **लिखित अभिस्वीकृति का प्रभाव** – (1) जहां कि किसी सम्पत्ति या अधिकार विषयक वाद या आवेदन के लिए विहित काल के अवसान के पहले ऐसी सम्पत्ति या अधिकार विषयक दायित्व की लिखित अभिस्वीकृति की गई है, जो उस पक्षकार द्वारा, जिसके विरुद्ध ऐसी सम्पत्ति या अधिकार का दावा किया जाता है, या ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा जिसमें वह अपना अधिकार या दायित्व व्युत्पन्न करता है, हस्ताक्षरित है वहां उस समय से, जब वह अभिस्वीकृति इस प्रकार हस्ताक्षरित की गई थी, एक नया परिसीमा काल संगणित किया जाएगा ।

(2) जहां कि वह लेख जिसमें अभिस्वीकृति अन्तर्विष्ट है, बिना

तारीख का है वहां उस समय के बारे में, जब वह हस्ताक्षरित किया गया था, मौखिक साक्ष्य दिया जा सकेगा, किन्तु भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) के उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि उसकी अन्तर्वस्तु का मौखिक साक्ष्य ग्रहण नहीं किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए –

(क) अभिस्वीकृति पर्याप्त हो सकेगी यद्यपि वह उस सम्पत्ति या अधिकार की यथावत् प्रकृति का विनिर्देश न करती हो अथवा यह प्रकथन करती हो कि संदाय, परिदान, पालन या उपभोग का समय अभी नहीं आया है, अथवा वह संदाय, परिदान या पालन के अथवा उपभोग की अनुज्ञा के इनकार सहित हो अथवा मुजरा के किसी दावे से युक्त हो, अथवा उस सम्पत्ति या अधिकार के हकदार व्यक्ति से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति को सम्बोधित हो ;

(ख) ''हस्ताक्षरित'' शब्द से या तो स्वयं द्वारा या इस निमित्त सम्यक् प्राधिकृत अभिकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित अभिप्रेत है ; तथा

(ग) वह आवेदन जो डिक्री या आदेश के निष्पादन के लिए हो किसी सम्पत्ति या अधिकार की बाबत आवेदन नहीं समझा जाएगा ।''

17. उपर्युक्त धारा के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि विधिमान्य अभिस्वीकृति की आवश्यक अपेक्षाएं हैं :–

(i) स्वीकृति या अभिस्वीकृति,

(ii) कि ऐसी अभिस्वीकृति, संपत्ति या अधिकार के बारे में दायित्व के संबंध में होनी चाहिए,

(iii) कि यह परिसीमा अवधि की समाप्ति के पूर्व होनी चाहिए, और

(iv) कि लिखित में होना चाहिए और उस पक्षकार द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए जिसके विरुद्ध ऐसी संपत्ति या अधिकार दावाकृत है ।

18. पूर्वोक्त शर्तों में से किसी के भी अभाव में, ''रपट'' में प्रविष्टि को लिखित में अभिस्वीकृति नहीं माना जा सकता है । इसका कारण सुस्पष्ट है

कि वैयक्तिक अभिस्वीकृति अपने दायित्व की सचेतता में होनी चाहिए क्योंकि यह प्रतिबद्धता दायित्व के बारे में आवश्यक है । स्वीकृततः, इस मामले में अन्य अपेक्षाओं के अलावा ऐसी कोई अभिस्वीकृति नहीं है जिस पर उस पक्षकार द्वारा हस्ताक्षर किए गए हों जिसके विरुद्ध ऐसे दायित्व या अधिकार दावाकृत हैं ।

19. उसके बाद, प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने **जगदीश दत्त सामनोल और अन्य** बनाम **मैसर्स राला राम चरनजी लाल और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए, यह दलील दी कि अंतरण विलेख में वर्णन, बंधक की अभिस्वीकृति की कोटि में नहीं आता है । इस निर्णय का अवलंब पूर्णतया भ्रांतिपूर्ण है क्योंकि इसमें के दस्तावेज प्रदर्श पी. ए. एक विक्रय विलेख है जिसमें बंधककर्ता और बंधकदार के बीच न्यायिक संबंध उल्लिखित है और इसमें के अपीलार्थी को 2900/- रुपए की बंधक रकम का संदाय करने पर संपत्ति का मोचन कराने के लिए हकदार अभिनिर्धारित किया गया था और उसे कब्जे का भी हकदार अभिनिर्धारित किया गया था । यह दस्तावेज दोनों पक्षकारों द्वारा सम्यक् रूप से हस्ताक्षरित था और इसलिए, इसे बंधक की अभिस्वीकृति के रूप में अभिनिर्धारित किया गया था । वास्तव में, न्यायालय ने विनिर्दिष्टतया यह अभिनिर्धारित किया है कि कृत्य एकपक्षीय नहीं था और इसलिए, लिखित में अभिस्वीकृति के निबंधन पूरे होते थे ।

20. इसके पश्चात्, प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने **बाई सकीना-बाई और अन्य** बनाम **गुलाम रसूल उमरभाई शेख**[2] वाले मामले का अवलंब लिया । मैंने उपर्युक्त निर्दिष्ट निर्णय का परिशीलन किया किन्तु मैंने इसमें ऐसी कोई मताभिव्यक्ति नहीं पाई जो कि प्रत्यर्थियों के पक्ष में हो या उनकी सहायता करता हो ।

21. उसके बाद, प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने **इन्दर सिंह और अन्य** बनाम **मुस्तफा किशनो और अन्य**[3] वाले मामले में, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि अरजिस्ट्रीकृत बंधक के मामले में, कब्जा वापस लेने का अधिकार बंधक विलेख के निष्पादन के पश्चात् प्राप्त नहीं होता है और ऐसे अधिकार मात्र

---

[1] 1994 (1) नवीनतम ला जर्नल (एच. पी.) 636.

[2] ए. आई. आर. 1981 गुजरात 142.

[3] (1966) पंजाब ला रिपोर्टर 408.

12 वर्ष बीतने के पश्चात् ही प्राप्त होते हैं जबकि 12 वर्ष की चिरभोग कालावधि बीतने के पश्चात् विधिमान्य बंधक विलेख अस्तित्व में आ जाता है । उन्होंने विद्वान् निचले न्यायालय की मताभिव्यक्तियों का भी अवलंब लिया जिन्होंने इस मामले का भी अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि मोचन के प्रयोजन के लिए तीस वर्ष की परिसीमा अवधि, वर्ष 1951 में बंधक की अभिस्वीकृति के 12 वर्ष बीतने के पश्चात् वर्ष 1963 में ही आरंभ होती है जो वर्ष 1993 आती है और वाद, तारीख 18 अप्रैल, 1988 को संस्थित किया गया है और इसलिए, यह परिसीमा अवधि के भीतर है ।

22. मुझे आशंका है कि प्रत्यर्थियों की यह दलील भी स्वीकार नहीं की जा सकती है, क्योंकि, स्वीकृततः पुराने हिमाचल में, उस समय अविभावी विधियों के अनुसार, मौखिक बंधक विधिमान्य तौर पर अनुज्ञेय था और इसलिए, 12 वर्ष की चिरभोग अवधि का फायदा प्रत्यर्थियों को उपलब्ध नहीं है ।

23. वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा यह वाद फाइल नहीं कर सकने के अन्य कारण भी हैं । वादियों/प्रत्यर्थियों को स्वीकृततः उस समय जब बंधक किया गया था, दो विकल्प थे या तो सिविल न्यायालय के समक्ष जा सकते थे या हिमाचल प्रदेश बंधक भूमि प्रतिस्थापन अधिनियम, 1976 के अधीन गठित प्राधिकारियों के समक्ष जा सकते थे । विकल्प चुनने और अधिनियम, 1976 के अधीन गठित प्राधिकारियों के समक्ष अवसर लेने के पश्चात्, वादी/प्रत्यर्थी वर्तमान वाद फाइल करने से विबंधित हो गए हैं ।

तद्नुसार, सभी विधि के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है ।

24. परिणामतः, मैं, इस अपील में गुणागुण पाता हूं और इसे मंजूर करता हूं । विद्वान् निचले अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अपास्त किए जाते हैं और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री पुनःस्थापित किए जाते हैं, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

क.

परस राम

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 8 सितम्बर, 2014

न्यायमूर्ति पी. एस. राणा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 – धारा 2(i) और धारा 47] – याची का सेवा के दौरान जीर्ण खंडित मनस्कता के रोग से पीड़ित होना – इस आधार पर याची को सेवानिवृत्त किया जाना – याची द्वारा तत्समय प्रवृत्त राज्य की अनुकम्पा नीति के अनुसार अपनी पत्नी या पुत्र को नियुक्ति प्रदान करने के लिए आवेदन किया जाना – आवेदन नामंजूर किया जाना – चुनौती – ऐसे मामलों में, यदि तत्समय प्रवृत्त विधि और विभागीय अनुकम्पा नीति के अधीन, दोनों में से किसी एक विकल्प के अधीन फायदा प्राप्त कर लिया जाता है तो दूसरे विकल्प के अधीन भी फायदा प्राप्त करने का दावा नहीं किया जा सकता है ।

वर्तमान मामले में, रिट याची, जो उपायुक्त शिमला के कार्यालय में चपरासी के पद पर नियुक्त था, सेवा के दौरान जीर्ण खंडित मनस्कता के रोग से ग्रस्त हो गया, जिसके कारण उपायुक्त, शिमला ने एक कार्यालय आदेश द्वारा उसे सेवानिवृत्त कर दिया और उसकी पत्नी को अधिवर्षिता फायदे तथा पेंशन प्रदान कर दिए गए । तत्पश्चात्, रिट याची ने हिमाचल प्रदेश सरकार की अनुकम्पा नीति के अनुसार अपनी पत्नी या पुत्र को अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने हेतु आवेदन किया । इस आवेदन को उपायुक्त, शिमला द्वारा नामंजूर कर दिया गया । इससे व्यथित होकर रिट याची ने यह रिट याचिका फाइल की । न्यायालय द्वारा रिट याचिका भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि याची परस राम, मानसिक रोग अस्पताल, अमृतसर में चिकित्सीय अधिकारी के रूप में तैनात डा. गुरप्रताप सिंह और डा. सविन्द्र सिंह द्वारा जारी और अभिलेख पर रखे गए चिकित्सीय प्रमाणपत्र के अनुसार जीर्ण खंडित मनस्कता से पीड़ित है ।

अभिलेख पर यह भी सिद्ध हो गया है कि परस राम को जीर्ण खंडित मनस्कता का रोग उस समय हुआ था, जब वह सेवारत था । अभिलेख पर यह साबित है कि परस राम ने आज की तारीख तक सेवा नियमों के अनुसार अधिवर्षिता की आयु प्राप्त नहीं की है । न्यायालय की यह राय है कि निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 को 7 फरवरी, 1996 से प्रभावी किया गया था, ताकि निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 2(i) के अधीन यथा परिभाषित निःशक्त व्यक्ति को संरक्षण प्रदान किया जा सके । याची का मामला निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 के अंतर्गत आता है । निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 2(i) के अनुसार मानसिक मंदन और मानसिक रोग से पीड़ित व्यक्तियों के मामले निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 के अंतर्गत आते हैं । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची विधिक रूप से 'अधिनियम' की धारा 47 के अधीन उल्लिखित सभी संरक्षणों का हकदार है । याची की ओर से उपस्थित विद्वान् अधिवक्ता की इस दलील को, कि याची की पत्नी अर्थात् उर्मिला देवी और याची का पुत्र, अर्थात् दीपक कुमार भी अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए विधिक रूप से हकदार हैं, इसमें इसके पश्चात् उल्लिखित कारण से किसी बल से रहित होने के कारण खारिज किया जाता है । अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि विद्वान् उपायुक्त, शिमला द्वारा फाइल शपथपत्र, जिसे कार्यपालक मजिस्ट्रेट, शिमला द्वारा अनुप्रमाणित किया गया है, के अनुसार सेवानिवृत्ति शोध्यों के रूप में 1,32,797/- रुपए (एक लाख बत्तीस हजार सात सौ सतानवे रुपए) की रकम का संदाय याची परस राम की पत्नी श्रीमती उर्मिला देवी को किया गया है । अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि याची की पत्नी अर्थात् उर्मिला देवी पेंशन के रूप में 5,285/- रुपए (पांच हजार दो सौ पचासी रुपए) प्रतिमास की रकम प्राप्त कर रही है । अभिलेख पर यह भी साबित किया गया है कि याची की पत्नी गृह संपत्ति से 35,000/- रुपए (पैंतीस हजार रुपए) प्रतिवर्ष की आय का अर्जन कर रही है । अभिलेख पर यह साबित किया गया है कि अनुकम्पा संबंधी नीति के अनुसार, ऐसे आश्रित व्यक्ति जिनकी अधिकतम कुटुंब आय 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) से अधिक है, अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए हकदार नहीं हैं । न्यायालय की यह राय है कि याची को दो फायदे एक साथ नहीं दिए जा सकते, अर्थात् 'अधिनियम' की धारा 47 का फायदा और अनुकम्पा के आधार पर नियोजन का फायदा । आज की तारीख में श्री परस राम जीवित है और जीर्ण खंडित मनस्कता से पीड़ित है । अतः यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची परस

राम विधिक रूप से केवल एक फायदे का हकदार है, अर्थात् 'अधिनियम' की धारा 47 के अधीन फायदे का हकदार है । ऊपर कथित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि (1) परस राम निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 के अधीन सभी फायदों के लिए हकदार होगा । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची को, जब तक कि कोई उपयुक्त पद उपलब्ध नहीं हो जाता या जब तक कि याची परस राम अधिवर्षिता की आयु पूरी नहीं कर लेता, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, किसी अधिसंख्य पद पर रखा जाएगा । विद्वान् उपायुक्त के तारीख 16 जून, 2010 के आदेश, अनुलग्नक पी 8 को, जिसके द्वारा परस राम, चपरासी को सेवानिवृत्त किया गया था, अपास्त किया जाता है । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि श्री परस राम विधिक रूप से, श्री परस राम को उनकी पत्नी के माध्यम से संदत्त सभी शोध्यों के समायोजन के अधीन रहते हुए, निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 में यथा उल्लिखित अधिसंख्य पद के सभी पारिणामिक फायदों के हकदार होंगे । (2) याची की यह प्रार्थना कि श्री परस राम की पत्नी, अर्थात् उर्मिला देवी या याची के पुत्र, अर्थात् दीपक कुमार को अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति प्रदान की जाए, नामंजूर की जाती है । विद्वान् उपायुक्त के तारीख 28 सितंबर, 2011 के कार्यालय आदेश, अनुलग्नक पी 10 की, जिसके द्वारा याची की पत्नी श्रीमती उर्मिला देवी या याची के पुत्र अर्थात् दीपक कुमार को अनुकम्पा के आधार पर नियोजन प्रदान करने से इनकार किया गया था, पुष्टि की जाती है । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची को एक साथ दो फायदे, अर्थात् निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 का फायदा और अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति के फायदे प्रदान नहीं किए जा सकते हैं । (पैरा 5, 6, 7 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2008]	(2008) 1 एस. सी. सी. 579 : **भगवान दास और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड** ।	6

सिविल (रिट) अधिकारिता : 2011 की सिविल रिट याचिका सं. 10583.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री जे. एल. भारद्वाज

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री पुष्पेन्द्र सिंह जसवाल, उप महाधिवक्ता और जे. एस. राणा, सहायक महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति पी. एस. राणा – यह रिट याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई है । मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची परस राम को प्रत्यर्थी सं. 2, उपायुक्त, शिमला, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश के कार्यालय में चपरासी के रूप में नियुक्त किया गया था । यह और अभिवाक् किया गया है कि याची जीर्ण खंडित मनस्कता से पीड़ित है । यह और अभिवाक् किया गया है कि उसके पश्चात् याची की पत्नी श्रीमती उर्मिला देवी ने अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए आवेदन किया । यह और अभिवाक् किया गया है कि **परस राम** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** शीर्षक वाली 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 850 फाइल की गई थी, जिसका निर्णय 19 अक्तूबर, 2010 को किया गया था । यह और अभिवाक् किया गया कि प्रत्यर्थियों ने **परस राम** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** शीर्षक वाली 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 850 में, जिसका निर्णय 19 अक्तूबर, 2010 को दिया गया था, हिमाचल प्रदेश के माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निदेश का अनुपालन नहीं किया । यह और अभिवाक् किया गया है कि वर्तमान में, विद्वान् उपायुक्त, शिमला ने अपने तारीख 16 जून, 2010 के आदेश द्वारा एक कार्यालय आदेश पारित किया, जिसके अनुसार याची परस राम को केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के नियम 38 के अधीन तारीख 16 जून, 2010 (अपराह्न) से सेवानिवृत्त किया गया है । यह और अभिवाक् किया गया है कि विद्वान् उपायुक्त, शिमला का आदेश निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 47 के प्रतिकूल है । यह और अभिवाक् किया गया है कि विद्वान् उपायुक्त ने श्रीमती उर्मिला देवी, पत्नी श्री परस राम और उसके पुत्र दीपक कुमार के अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए किए गए दावे को भी तारीख 28 सितंबर, 2011 को नामंजूर कर दिया था । यह और अभिवाक् किया गया है कि विद्वान् उपायुक्त, शिमला द्वारा पारित तारीख 16 जून, 2010 और तारीख 28 सितंबर, 2011 के आदेशों को अपास्त किया जाए । यह और

अभिवाक् किया गया है कि श्री परस राम के पुत्र, अर्थात् दीपक कुमार को अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति प्रदान की जाए या याची परस राम को पारिणामिक वेतन का फायदा दिया जाए ।

2. प्रत्यर्थियों की ओर से फाइल किए गए प्रतिपक्षी उत्तर में यह अभिवाक् किया गया कि वर्तमान याचिका बनाए रखे जाने योग्य नहीं है । यह अभिवाक् किया गया है कि चिकित्सीय रिपोर्ट के अनुसार श्री परस राम, उसके खराब स्वास्थ्य अर्थात् जीर्ण खंडित मनस्कता के कारण सेवा में बनाए रखे जाने के लिए उपयुक्त नहीं है । यह और अभिवाक् किया गया है कि श्रीमती उर्मिला देवी, पत्नी श्री परस राम को 1,32,797/- रुपए (एक लाख बत्तीस हजार सात सौ सतानवे रुपए) की रकम सेवानिवृत्ति शोध्यों के रूप में प्राप्त हुई है और उसे 5,285/- रुपए (पांच हजार दो सौ पचासी रुपए) प्रतिमास की पेंशन भी प्राप्त हो रही है । इसके अतिरिक्त वह 35,000/- रुपए (पैंतीस हजार रुपए) प्रतिवर्ष की गृह संपत्ति से आय भी प्राप्त कर रही है । यह और अभिवाक् किया गया है कि श्री परस राम के कुटुंब की कुल आय 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) प्रतिवर्ष से अधिक है । यह और अभिवाक् किया गया है कि अनुकम्पा के आधार पर नियोजन प्रदान करने की नीति के अनुसार यह फायदा केवल ऐसे आश्रितों को ही दिया जा सकता है, जिनकी अधिकतम कुटुंब आय 1,00,000/- (एक लाख रुपए) से अधिक नहीं है । रिट याचिका को खारिज करने का अनुरोध किया गया है ।

3. न्यायालय ने याची की ओर से उपस्थित विद्वान् अधिवक्ता और प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् उप महाधिवक्ता को सुना है और साथ ही संपूर्ण अभिलेख का ध्यानपूर्वक परिशीलन किया है ।

4. वर्तमान सिविल रिट याचिका में अवधारण हेतु निम्नलिखित मुद्दे उद्भूत हैं :–

(1) क्या याची, यथा अभिकथित निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम की धारा 47 का लाभ लेने के लिए हकदार है ?

(2) क्या याची की पत्नी, अर्थात् श्रीमती उर्मिला देवी या याची का पुत्र दीपक कुमार यथा अभिकथित, अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए हकदार हैं ?

मुद्दा सं. 1 के संबंध में निष्कर्ष

5. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् अधिवक्ता की इस दलील को, कि याची विधिक रूप से निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की धारा 47 के फायदे के लिए हकदार है, इसमें इसके पश्चात् उल्लिखित कारण से स्वीकार किया जाता है । अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि याची परस राम, मानसिक रोग अस्पताल, अमृतसर में चिकित्सीय अधिकारी के रूप में तैनात डा. गुरप्रताप सिंह और डा. सविन्द्र सिंह द्वारा जारी और अभिलेख पर रखे गए चिकित्सीय प्रमाणपत्र के अनुसार जीर्ण खंडित मनस्कता से पीड़ित है । अभिलेख पर यह भी सिद्ध हो गया है कि परस राम को जीर्ण खंडित मनस्कता का रोग उस समय हुआ था, जब वह सेवारत था । अभिलेख पर यह साबित है कि परस राम ने आज की तारीख तक सेवा नियमों के अनुसार अधिवर्षिता की आयु प्राप्त नहीं की है । न्यायालय की यह राय है कि निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 को 7 फरवरी, 1996 से प्रभावी किया गया था, ताकि निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 2(i) के अधीन यथा परिभाषित निःशक्त व्यक्ति को संरक्षण प्रदान किया जा सके । 'अधिनियम' की धारा 47 को उद्धृत किया गया है :–

> "(1) कोई स्थापन, ऐसे कर्मचारी को, जो सेवा के दौरान निःशक्त हो जाता है, सेवोन्मुक्त या पंक्तिच्युत नहीं करेगा । परंतु यदि कोई कर्मचारी निःशक्त हो जाने के पश्चात् उस पद के लिए जिसे वह धारण करता है, उपयुक्त नहीं रह जाता है तो उसे, उसी वेतनमान और सेवा संबंधी फायदों वाले किसी अन्य पद पर स्थानांतरित किया जा सकेगा । परंतु यह और कि यदि किसी कर्मचारी को किसी पद पर समायोजित करना संभव नहीं है तो उसे समुचित पद उपलब्ध होने तक या उसके द्वारा अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर लेने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, किसी अधिसंख्य पद पर रखा जा सकेगा ।"

6. ऊपर कथित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची का मामला निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 के अंतर्गत आता है । निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 2(i) के अनुसार मानसिक मंदन और मानसिक रोग से पीड़ित व्यक्तियों के मामले निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 के अंतर्गत आते हैं । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची विधिक रूप से 'अधिनियम' की धारा

47 के अधीन उल्लिखित सभी संरक्षणों का हकदार है । **भगवान दास और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य विद्युत बोर्ड**[1] शीर्षक वाला मामला देखें । मुद्दा संख्या 1 का विनिश्चय याची के पक्ष में किया जाता है ।

मुद्दा संख्या 2 के संबंध में निष्कर्ष

7. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् अधिवक्ता की इस दलील को, कि याची की पत्नी अर्थात् उर्मिला देवी और याची का पुत्र, अर्थात् दीपक कुमार भी अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए विधिक रूप से हकदार हैं, इसमें इसके पश्चात् उल्लिखित कारण से किसी बल से रहित होने के कारण खारिज किया जाता है । अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि विद्वान् उपायुक्त, शिमला द्वारा फाइल शपथपत्र, जिसे कार्यपालक मजिस्ट्रेट, शिमला द्वारा अनुप्रमाणित किया गया है, के अनुसार सेवानिवृत्ति शोध्यों के रूप में 1,32,797/- रुपए (एक लाख बत्तीस हजार सात सौ सतानवे रुपए) की रकम का संदाय याची परस राम की पत्नी श्रीमती उर्मिला देवी को किया गया है । अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि याची की पत्नी अर्थात् उर्मिला देवी पेंशन के रूप में 5,285/- रुपए (पांच हजार दो सौ पचासी रुपए) प्रतिमास की रकम प्राप्त कर रही है । अभिलेख पर यह भी साबित किया गया है कि याची की पत्नी गृह संपत्ति से 35,000/- रुपए (पैंतीस हजार रुपए) प्रतिवर्ष की आय का अर्जन कर रही है । अभिलेख पर यह साबित किया गया है कि अनुकम्पा संबंधी नीति के अनुसार, ऐसे आश्रित व्यक्ति जिनकी अधिकतम कुटुंब आय 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) से अधिक है, अनुकम्पा के आधार पर नियोजन के लिए हकदार नहीं हैं । न्यायालय की यह राय है कि याची को दो फायदे एक साथ नहीं दिए जा सकते, अर्थात् 'अधिनियम' की धारा 47 का फायदा और अनुकम्पा के आधार पर नियोजन का फायदा । आज की तारीख में श्री परस राम जीवित है और जीर्ण खंडित मनस्कता से पीड़ित है । अतः यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची परस राम विधिक रूप से केवल एक फायदे का हकदार है, अर्थात् 'अधिनियम' की धारा 47 के अधीन फायदे का हकदार है ।

8. ऊपर कथित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि (1) परस राम निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 के अधीन सभी फायदों के लिए हकदार होगा । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची को, जब तक कि कोई उपयुक्त पद उपलब्ध नहीं हो जाता या जब

---

[1] (2008) 1 एस. सी. सी. 579.

तक कि याची परस राम अधिवर्षिता की आयु पूरी नहीं कर लेता, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, किसी अधिसंख्य पद पर रखा जाएगा । विद्वान् उपायुक्त के तारीख 16 जून, 2010 के आदेश, अनुलग्नक पी 8 को, जिसके द्वारा परस राम, चपरासी को सेवानिवृत्त किया गया था, अपास्त किया जाता है । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि श्री परस राम विधिक रूप से, श्री परस राम को उनकी पत्नी के माध्यम से संदत्त सभी शोध्यों के समायोजन के अधीन रहते हुए, निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 में यथा उल्लिखित अधिसंख्य पद के सभी पारिणामिक फायदों के हकदार होंगे । (2) याची की यह प्रार्थना कि श्री परस राम की पत्नी, अर्थात् उर्मिला देवी या याची के पुत्र, अर्थात् दीपक कुमार को अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति प्रदान की जाए, नामंजूर की जाती है । विद्वान् उपायुक्त के तारीख 28 सितंबर, 2011 के कार्यालय आदेश, अनुलग्नक पी 10 की, जिसके द्वारा याची की पत्नी श्रीमती उर्मिला देवी या याची के पुत्र अर्थात् दीपक कुमार को अनुकम्पा के आधार पर नियोजन प्रदान करने से इनकार किया गया था, पुष्टि की जाती है । यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची को एक साथ दो फायदे, अर्थात् निःशक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 47 का फायदा और अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति का फायदा, प्रदान नहीं किए जा सकते । (3) याची द्वारा दावा किए गए अन्य अनुतोष (अनुतोषों) को खारिज किया जाता है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अन्य सभी अनुतोषों को मुद्दा सं. 1 और 2 में सम्मिलित किया गया है, जिनका अवधारण न्यायालय द्वारा किया गया है । तद्नुसार, रिट याचिका का निपटारा किया जाता है और लागत-खर्चों के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है । सभी प्रकीर्ण आवेदनों का भी निपटारा किया जाता है ।

रिट याचिका भागतः मंजूर की गई ।

पु./क.

गतांक से आगे.....

अध्याय 4

जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण

25. जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण का गठन – (1) प्रत्येक राज्य सरकार, धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र राज्य में प्रत्येक जिले के लिए ऐसे नाम से, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए, एक जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण की स्थापना करेगी ।

(2) जिला प्राधिकरण में अध्यक्ष और सात से अनधिक उतने अन्य सदस्य होंगे जितने राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं और जब तक कि नियमों में अन्यथा उपबंध न किया जाए, इसमें निम्नलिखित होंगे, अर्थात् :–

(क) जिले का, यथास्थिति, कलक्टर या जिला मजिस्ट्रेट या उपायुक्त जो पदेन अध्यक्ष होगा ;

(ख) स्थानीय प्राधिकारी का निर्वाचित प्रतिनिधि जो पदेन सह-अध्यक्ष होगा :

परंतु संविधान की छठी अनुसूची में जैसा निर्दिष्ट है, जनजाति क्षेत्रों में, स्वशासी जिले की जिला परिषद् का मुख्य कार्यपालक सदस्य, पदेन सह-अध्यक्ष होगा ;

(ग) जिला प्राधिकरण का मुख्य कार्यपालक अधिकारी, पदेन ;

(घ) पुलिस अधीक्षक, पदेन ;

(ङ) जिले का मुख्य चिकित्सा अधिकारी, पदेन ;

(च) दो से अनधिक जिला स्तर के अन्य अधिकारी जिन्हें राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा ।

(3) ऐसे किसी जिले में जहां जिला परिषद् विद्यमान है, उसका अध्यक्ष जिला प्राधिकरण का सह-अध्यक्ष होगा ।

(4) राज्य सरकार जिले के किसी ऐसे अधिकारी को, जो यथास्थिति, अपर कलक्टर या अपर जिला मजिस्ट्रेट या अपर उपायुक्त की पंक्ति से नीचे का न हो, ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन करने के लिए जो, राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं और ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और कृत्यों का पालन करने के लिए जो जिला प्राधिकरण द्वारा उसे प्रत्यायोजित किए जाएं, जिला प्राधिकरण का मुख्य कार्यपालक

अधिकारी नियुक्त करेगी ।

26. जिला प्राधिकरण के अध्यक्ष की शक्तियां – (1) जिला प्राधिकरण का अध्यक्ष, जिला प्राधिकरण के अधिवेशनों की अध्यक्षता करने के अतिरिक्त, जिला प्राधिकरण की ऐसी शक्तियों का प्रयोग और कृत्यों का निर्वहन करेगा जो जिला प्राधिकरण उसे प्रत्यायोजित करे ।

(2) जिला प्राधिकरण के अध्यक्ष को, आपात की दशा में, जिला प्राधिकरण की सभी या किन्हीं शक्तियों का प्रयोग करने की शक्ति होगी किन्तु ऐसी शक्तियों का प्रयोग जिला प्राधिकरण के कार्योत्तर अनुसमर्थन के अधीन रहते हुए होगा ।

(3) जिला प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण का अध्यक्ष, साधारण या विशेष लिखित आदेश द्वारा, यथास्थिति, उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन अपनी शक्तियों और कृत्यों में से ऐसी शक्तियां और कृत्य, जिला प्राधिकरण के मुख्य कार्यपालक अधिकारी को ऐसी शर्तों और निबंधनों, यदि कोई हों, जिन्हें वह ठीक समझे, के अधीन रहते हुए, प्रत्यायोजित कर सकेगा ।

27. अधिवेशन – जिला प्राधिकरण का अधिवेशन जब कभी आवश्यक हो ऐसे समय और स्थान पर होगा जिसे अध्यक्ष ठीक समझे ।

28. सलाहकार समितियों और अन्य समितियों का गठन – (1) जिला प्राधिकरण, जब भी वह आवश्यक समझे, अपने कृत्यों के दक्षतापूर्ण निर्वहन के लिए एक या अधिक सलाहकार समितियों और अन्य समितियों का गठन कर सकेगा ।

(2) जिला प्राधिकरण अपने सदस्यों में से उपधारा (1) में निर्दिष्ट समिति का अध्यक्ष नियुक्त करेगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन गठित किसी समिति या उप समिति में विशेषज्ञ के रूप में सहयुक्त किसी व्यक्ति को ऐसे भत्ते संदत्त किए जा सकेंगे जो राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं ।

29. जिला प्राधिकरण के अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति – राज्य सरकार जिला प्राधिकरण को उतने अधिकारी, परामर्शदाता और अन्य कर्मचारी उपलब्ध कराएगी जितने वह जिला प्राधिकरण के कृत्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक समझे ।

30. जिला प्राधिकरण की शक्तियां और कृत्य – (1) जिला

प्राधिकरण आपदा प्रबंधन के लिए जिला योजना, समन्वयन और कार्यान्वयन निकाय के रूप में कार्य करेगा और राष्ट्रीय प्राधिकरण और राज्य प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार जिले में आपदा प्रबंधन के प्रयोजन के लिए सभी उपाय करेगा ।

(2) जिला प्राधिकरण, उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना :–

(i) जिले के लिए जिला मोचन योजना सहित आपदा प्रबंधन योजना तैयार कर सकेगा ;

(ii) राष्ट्रीय नीति, राज्य नीति, राष्ट्रीय योजना, राज्य योजना और जिला योजना के कार्यान्वयन का समन्वय और मानीटरी कर सकेगा ;

(iii) यह सुनिश्चित कर सकेगा कि जिले में आपदाओं के संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान की गई है और आपदाओं के निवारण और उसके प्रभावों के शमन के लिए उपाय जिला स्तर पर सरकार के विभागों द्वारा तथा स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा किए गए हैं ;

(iv) यह सुनिश्चित कर सकेगा कि आपदाओं के निवारण, उनके प्रभावों के शमन, तैयारी के और राष्ट्रीय प्राधिकरण तथा राज्य प्राधिकरण द्वारा यथा अधिकथित मोचन के उपायों का जिला स्तर पर सरकार के सभी विभागों और जिले में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा अनुसरण किया जाता है ;

(v) विभिन्न जिला स्तर के प्राधिकारियों और स्थानीय प्राधिकारियों को आपदाओं के निवारण या शमन के लिए ऐसे अन्य उपाय करने के लिए निदेश दे सकेगा, जो आवश्यक हों ;

(vi) जिला स्तर पर सरकारी विभागों और जिले में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा आपदा निवारण प्रबंधन योजनाओं के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत अधिकथित कर सकेगा ;

(vii) जिला स्तर पर सरकारी विभागों द्वारा तैयार की गई आपदा प्रबंधन योजनाओं के कार्यान्वयन को मानीटर कर सकेगा ;

(viii) जिला स्तर पर सरकारी विभागों द्वारा अपनी योजनाओं और परियोजनाओं में आपदा निवारण और शमन के लिए उपायों के एकीकरण के प्रयोजन के लिए अनुसरित किए जाने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत

अधिकथित कर सकेगा और उनके लिए आवश्यक तकनीकी सहायता उपलब्ध करा सकेगा ;

(ix) खंड (viii) में निर्दिष्ट उपायों के कार्यान्वयन को मानीटर कर सकेगा ;

(x) जिले में किसी आपदा या आपदा की आशंका की स्थिति के मोचन के लिए राज्य की क्षमताओं का पुनर्विलोकन कर सकेगा और उनके उन्नयन के लिए जिला स्तर पर संबंधित विभागों या प्राधिकारियों को ऐसे निदेश दे सकेगा, जो आवश्यक हों ;

(xi) तैयारी उपायों का पुनर्विलोकन कर सकेगा और जिला स्तर पर संबद्ध विभागों या संबद्ध प्राधिकारियों को जहां किसी आपदा या आपदा की आशंका की स्थिति का प्रभावी रूप से मोचन करने के लिए तैयारी उपायों को अपेक्षित स्तरों तक लाना आवश्यक हों, निदेश दे सकेगा ।

(xii) जिले में विभिन्न स्तरों के अधिकारियों, कर्मचारियों और स्वैच्छिक बचाव कार्यकर्ताओं के लिए विशेषज्ञता प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित कर सकेगा और उनका समन्वयन कर सकेगा ;

(xiii) आपदा निवारण या शमन के लिए स्थानीय प्राधिकारियों, सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की सहायता से सामुदायिक प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रमों को सुकर बना सकेगा ;

(xiv) जनता को पूर्व चेतावनी और उचित सूचना के प्रसार के लिए तंत्र की स्थापना कर सकेगा उसका अनुरक्षण कर सकेगा, पुनर्विलोकन और उन्नयन कर सकेगा ;

(xv) जिला स्तर मोचन, योजना और मार्गदर्शक सिद्धांतों को बना सकेगा, उनका पुनर्विलोकन और उन्नयन कर सकेगा ;

(xvi) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के मोचन का समन्वयन कर सकेगा ;

(xvii) यह सुनिश्चित कर सकेगा कि जिला स्तर पर सरकारी विभागों और स्थानीय प्राधिकारी जिला मोचन योजना के अनुसरण में अपनी मोचन योजना तैयार करें ;

(xviii) जिला स्तर पर संबद्ध सरकारी विभाग या जिले की स्थानीय सीमाओं के भीतर अन्य प्राधिकारी के लिए किसी आपदा की आशंका की

स्थिति या आपदा के प्रभावी मोचन के उपाय करने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत अधिकथित कर सकेगा या उन्हें निदेश दे सकेगा ;

(xix) जिला स्तर पर सरकारी विभागों, कानूनी निकायों और जिले में आपदा प्रबंधन में लगे सरकारी और गैर सरकारी संगठनों को सलाह दे सकेगा, उनकी सहायता कर सकेगा और उनके क्रियाकलापों का समन्वयन कर सकेगा ;

(xx) यह सुनिश्चित करने के लिए जिले में आपदा स्थिति की आशंका की या आपदा के निवारण या उसके शमन के लिए उपायों को तत्परता से और प्रभावी रूप से किया जा रहा है, जिले में स्थानीय प्राधिकारियों के साथ समन्वयन कर सकेगा और उनको मार्गनिर्देश दे सकेगा ;

(xxi) जिले में स्थानीय प्राधिकारियों को उनके कृत्यों को करने के लिए आवश्यक तकनीकी सहायता उपलब्ध करा सकेगा या उन्हें सलाह दे सकेगा ;

(xxii) जिला स्तर पर सरकारी विभागों, कानूनी प्राधिकारियों या स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा आपदा निवारण या उनका शमन करने के लिए तैयार की गई विकास योजनाओं में आवश्यक उपबंधों को ध्यान में रखते हुए उनका पुनर्विलोकन कर सकेगा ;

(xxiii) जिला के किसी क्षेत्र में सन्निर्माण की जांच कर सकेगा और यदि उसकी यह राय हो कि आपदा निवारण या उसके शमन के लिए ऐसे सन्निर्माणों के लिए अधिकथित मानकों का पालन नहीं किया जा रहा है या उनका पालन नहीं किया गया है, संबद्ध प्राधिकारी को ऐसी कार्रवाई के लिए जो ऐसे मानकों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो, निदेश दे सकेगा ;

(xxiv) ऐसे भवनों और स्थानों की पहचान कर सकेगा जिनका किसी आपदा की आशंका या आपदा की घटना की स्थिति में राहत केन्द्रों या शिविरों के रूप में प्रयोग किया जा सकेगा और ऐसे भवनों और स्थानों में जल प्रदाय तथा स्वच्छता की व्यवस्था कर सकेगा ;

(xxv) राहत संचय और बचाव सामग्री की स्थापना कर सकेगा या किसी अल्प सूचना पर ऐसी सामग्री उपलब्ध कराने की तैयारी को सुनिश्चित कर सकेगा ;

(xxvi) आपदा प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं के संबंध में राज्य प्राधिकरण को सूचना दे सकेगा ;

(xxvii) जिले में प्रारंभिक स्तर पर कार्यरत गैर सरकारी संगठनों और स्वैच्छिक सामाजिक कल्याण संस्थाओं को आपदा प्रबंधन में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित कर सकेगा ;

(xxviii) यह सुनिश्चित कर सकेगा कि संचार प्रणालियां ठीक हैं और आपदा प्रबंधन कवायद कालिक रूप से की जा रही हैं ;

(xxix) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन कर सकेगा जो उसे राज्य सरकार या राज्य प्राधिकरण द्वारा समनुदेशित किए जाएं या जिले में आपदा प्रबंधन के लिए जो आवश्यक समझे जाएं ।

31. जिला योजना – (1) राज्य के प्रत्येक जिले के लिए आपदा प्रबंधन हेतु एक योजना होगी ।

(2) जिला प्राधिकरण द्वारा, स्थानीय प्राधिकारियों से परामर्श करने के पश्चात् और राष्ट्रीय योजना और राज्य योजना को ध्यान में रखते हुए जिला योजना तैयार की जाएगी जिसे राज्य प्राधिकरण द्वारा अनुमोदित किया जाएगा ।

(3) जिला योजना में निम्नलिखित सम्मिलित होगा –

(क) जिले में ऐसे क्षेत्र जो आपदाओं के विभिन्न रूपों से संवेदनशील हैं ;

(ख) जिला स्तर के सरकारी विभागों और जिले के स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा आपदा के निवारण और शमन के लिए किए जाने वाले उपाय ;

(ग) जिला स्तर के सरकारी विभागों और जिले में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के मोचन के लिए अपेक्षित क्षमता निर्माण और उनकी तैयारी के उपाय ;

(घ) किसी आपदा की दशा में, मोचन योजनाएं और प्रक्रियाएं, जिनमें निम्नलिखित के लिए उपबंध हों –

(i) जिला स्तर के सरकारी विभागों और जिले में स्थानीय निकायों के उत्तरदायित्वों का आबंटन ;

(ii) आपदा का तुरंत मोचन और उससे राहत ;

(iii) आवश्यक संसाधनों का उपापन ;

(iv) संचार सम्पर्क की स्थापना ; और

(v) जनता को सूचना का प्रसार ;

(ङ) ऐसे अन्य विषय जो राज्य प्राधिकरण द्वारा अपेक्षित हों ।

(4) जिला योजना का वार्षिक रूप से पुनर्विलोकन किया जाएगा और उसे अद्यतन किया जाएगा ।

(5) उपधारा (2) और उपधारा (4) में निर्दिष्ट जिला योजना की प्रतियां जिले में सरकारी विभागों को उपलब्ध कराई जाएंगी ।

(6) जिला प्राधिकरण जिला योजना की एक प्रति राज्य प्राधिकरण को भेजेगा जिसे वह राज्य सरकार को अग्रेषित करेगा ।

(7) जिला प्राधिकरण समय-समय पर, योजना के कार्यान्वयन का पुनर्विलोकन करेगा और जिले में सरकार के विभिन्न विभागों को ऐसे अनुदेश जारी करेगा जिन्हें वह कार्यान्वयन के लिए आवश्यक समझे ।

32. जिला स्तर पर विभिन्न प्राधिकारियों द्वारा योजनाएं तैयार करना और उनका कार्यान्वयन – जिला स्तर पर भारत सरकार और राज्य सरकार का प्रत्येक कार्यालय और स्थानीय जिला प्राधिकारी जिला प्राधिकरण के पर्यवेक्षण के अधीन रहते हुए,–

(क) आपदा प्रबंधन योजना तैयार करेंगे जिसमें निम्नलिखित उपवर्णित होगा, अर्थात् :–

(i) जिला योजना में यथाउपबंधित निवारण और शमन उपायों के लिए उपबंध जो संबद्ध विभाग या अभिकरण को समनुदेशित है ;

(ii) जिला योजना में यथा अधिकथित क्षमता निर्माण और तैयारी से संबंधित उपायों को करने के उपबंध ;

(iii) किसी आपदा की आशंका या आपदा की दशा में, मोचन योजनाएं और प्रक्रियाएं ;

(ख) जिला स्तर पर अन्य संगठनों, जिनके अंतर्गत स्थानीय समुदाय और अन्य स्थानीय प्राधिकारी समुदाय और अन्य पणधारी भी हैं, की योजनाओं के साथ अपनी योजना को तैयार और उसके कार्यान्वयन को समन्वित करेंगे ;

(ग) योजना का नियमित रूप से पुनर्विलोकन करेंगे और उसे

अद्यतन करेंगे ; और

(घ) जिला प्राधिकरण को अपनी आपदा प्रबंधन योजना और उसके किसी संशोधन की एक प्रति प्रस्तुत करेंगे ।

33. जिला प्राधिकरण द्वारा अध्यादेश – जिला प्राधिकरण आदेश द्वारा, जिला स्तर पर किसी अधिकारी या किसी विभाग या किसी स्थानीय प्राधिकारी से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह आपदा निवारण या उसके शमन के लिए या उसके प्रभावी रूप से मोचन के लिए ऐसे उपाय करे, जो आवश्यक हों और ऐसा अधिकारी या विभाग ऐसे आदेश का पालन करने के लिए बाध्य होगा ।

34. किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा की दशा में जिला प्राधिकरण की शक्तियां और कृत्य – किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा में समुदाय की सहायता करने, उसका संरक्षण करने या उसे राहत उपलब्ध कराने के प्रयोजन के लिए, जिला प्राधिकरण,–

(क) जिले में किसी सरकारी विभाग और स्थानीय प्राधिकारी के पास उपलब्ध संसाधनों की निकासी और उपयोग के लिए निदेश दे सकेगा ;

(ख) अतिसंवेदनशील या प्रभावित क्षेत्र में या उससे अथवा उसके भीतर यानों के आवागमन को नियंत्रित और निर्बंधित कर सकेगा ;

(ग) किसी अतिसंवेदनशील या प्रभावित क्षेत्र में किसी व्यक्ति के प्रवेश, उसके भीतर, उसके संचरण और उससे उसके प्रस्थान को नियंत्रित और निर्बंधित कर सकेगा ;

(घ) मलवा हटा सकेगा, तलाशी ले सकेगा और बचाव कार्य कर सकेगा ;

(ङ) आश्रय, भोजन, पीने का पानी और आवश्यक सामग्री, स्वास्थ्य देखरेख और सेवाएं उपलब्ध करा सकेगा ;

(च) प्रभावित क्षेत्र में आपात संचार प्रणालियों की स्थापना कर सकेगा ;

(छ) अदावाकृत शवों के निपटारे के लिए इंतजाम कर सकेगा ;

(ज) जिला स्तर पर राज्य सरकार के किसी विभाग या उस सरकार के अधीन किसी प्राधिकारी या किसी निकाय को ऐसे आवश्यक उपाय

करने की सिफारिश कर सकेगा जो उसकी राय में आवश्यक हों ;

(झ) सुसंगत क्षेत्रों में सलाह और सहायता देने के लिए विशेषज्ञों और परामर्शदाताओं की, जो वह आवश्यक समझे अपेक्षा कर सकेगा ;

(ञ) किसी प्राधिकारी या व्यक्ति से किन्हीं सुख-सुविधाओं के अनन्य या अधिमानी उपयोग का उपापन कर सकेगा ;

(ट) अस्थायी पुलों या अन्य आवश्यक संरचनाओं का सन्निर्माण कर सकेगा और ऐसी संरचनाओं को जो जनता के लिए परिसंकटमय है या आपदा के प्रभाव को गंभीर बना सकती है, ध्वस्त कर सकेगा ;

(ठ) यह सुनिश्चित कर सकेगा कि गैर सरकारी संगठन अपने क्रियाकलापों को साम्यापूर्ण और अविभेदकारी रीति से करे ;

(ड) ऐसी अन्य कार्रवाई कर सकेगा जिसका ऐसी किसी स्थिति में किया जाना अपेक्षित या आवश्यक हो ।

अध्याय 5

आपदा प्रबंधन के लिए सरकार द्वारा उपाय

35. केन्द्रीय सरकार द्वारा किए जाने वाले उपाय – (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, ऐसे सभी उपाय करेगी जिन्हें वह आपदा प्रबंधन के प्रयोजन के लिए आवश्यक और समीचीन समझे ।

(2) विशिष्टतया और उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन उपायों में जिन्हें केन्द्रीय सरकार, उस उपधारा के अधीन कर सकेगी, निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों की बाबत उपाय भी हैं, अर्थात् :–

(क) आपदा प्रबंधन के संबंध में भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों, राज्य सरकारों, राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरणों, सरकारी या गैर सरकारी संगठनों के कार्यों का समन्वयन करना ;

(ख) भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों द्वारा अपनी विकास योजनाओं और परियोजनाओं में आपदा के निवारण और शमन के लिए उपायों के एकीकरण को सुनिश्चित करना ;

(ग) भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों द्वारा आपदा के निवारण,

शमन, क्षमता निर्माण और तैयारी के लिए निधियों के समुचित आबंटन को सुनिश्चित करना ;

(घ) यह सुनिश्चित करना कि भारत सरकार के मंत्रालय या विभाग किसी आपदा की आशंका या आपदा के त्वरित और प्रभावी मोचन तैयारी के लिए आवश्यक उपाय करते हैं ;

(ङ) राज्य सरकारों को उनके द्वारा अनुरोध किए जाने पर या उसके द्वारा अन्यथा समुचित समझे जाने पर सहयोग और सहायता देना ;

(च) नौसेना, थल सेना और वायु सेना, संघ के अन्य सशस्त्र बलों या किसी अन्य सिविलियन कार्मिकों को तैनात करना जिनका इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए अपेक्षा की जाए ;

(छ) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए संयुक्त राष्ट्र अभिकरणों, अंतरराष्ट्रीय संगठनों और विदेशी सरकारों के साथ समन्वयन करना ;

(ज) आपदा प्रबंधन के क्षेत्र में शोध, प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रमों के लिए संस्थाओं की स्थापना करना ;

(झ) ऐसे अन्य विषय, जो इस अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए वह आवश्यक या समीचीन समझे ।

(3) केन्द्रीय सरकार बड़ी आपदा द्वारा प्रभावित अन्य देशों को ऐसी सहायता दे सकेगी जिसे वह उचित समझे ।

36. भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों के उत्तरदायित्व – भारत सरकार के प्रत्येक मंत्रालय या विभाग का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह –

(क) राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार आपदा के निवारण, शमन, तैयारी या क्षमता निर्माण के आवश्यक उपाय करे ;

(ख) राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार आपदाओं के निवारण या शमन के लिए उपायों की अपनी विकास योजनाओं और परियोजनाओं में एकीकृत करे ;

(ग) राष्ट्रीय प्राधिकरण के मार्गदर्शक सिद्धांतों या इस निमित्त राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के निदेशों के अनुसार किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा का प्रभावी और त्वरित मोचन करे ;

(घ) आपदाओं के निवारण, शमन या तैयारी के लिए आवश्यक उपबंध समाविष्ट करने की दृष्टि से उसके द्वारा प्रशासित अधिनियमितियों, अपनी नीतियों, नियमों और विनियमों का पुनर्विलोकन करे ;

(ङ) आपदा के निवारण, शमन या क्षमता निर्माण और तैयारी के उपायों के लिए निधियों का आबंटन करे ;

(च) राष्ट्रीय प्राधिकरण और राज्य सरकारों को निम्नलिखित के लिए सहायता प्रदान करे –

(i) आपदा प्रबंधन के संबंध में शमन, तैयारी और मोचन योजनाएं तैयार करना, क्षमता निर्माण, डाटा संग्रहण और कार्मिकों की पहचान तथा प्रशिक्षण ;

(ii) प्रभावित क्षेत्र में बचाव और राहत कार्य करना ;

(iii) किसी आपदा से क्षति का निर्धारण ;

(iv) पुनर्वास और पुनर्निर्माण करना ।

(छ) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा का तत्परता से और प्रभावी रूप से मोचन करने के प्रयोजन के लिए अपने संसाधन राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या राज्य कार्यकारिणी समिति को उपलब्ध कराना, जिनमें निम्नलिखित उपाय भी हैं,–

(i) किसी भेद्य या प्रभावित क्षेत्र में आपात संचार सुविधाएं उपलब्ध करना ;

(ii) कार्मिकों और राहत सामग्री का प्रभावित क्षेत्र तक या उससे परिवहन ;

(iii) निष्क्रमण, बचाव, अस्थायी आश्रय और अन्य तत्काल राहत प्रदान करना ;

(iv) अस्थायी पुल, घाट और हवाई पट्टियां स्थापित करना ;

(v) किसी प्रभावित क्षेत्र में पीने का पानी, आवश्यक रसद, स्वास्थ्य देखरेख और सेवाएं उपलब्ध करना ;

(ज) ऐसे अन्य कार्य करना जो आपदा प्रबंधन के लिए आवश्यक समझे जाएं ।

37. भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों की आपदा प्रबंधन योजनाएं – (1) भारत सरकार का प्रत्येक मंत्रालय या विभाग –

(क) निम्नलिखित विशिष्टियां विनिर्दिष्ट करते हुए आपदा प्रबंधन योजना तैयार करेगा, अर्थात् :–

(i) उसके द्वारा आपदा के निवारण और शमन के लिए राष्ट्रीय योजना के अनुसार किए जाने वाले उपाय ;

(ii) राष्ट्रीय प्राधिकरण और राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार अपनी विकास योजनाओं में शमन के उपायों के एकीकरण की बाबत विनिर्देश ;

(iii) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के संबंध में कार्रवाई की तैयारी और क्षमता निर्माण के संबंध में उसकी भूमिका और उत्तरदायित्व ;

(iv) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के तत्परता से और प्रभावी रूप से मोचन की बाबत उसकी भूमिका और उत्तरदायित्व ;

(v) उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट तैयारी की उसकी भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों की वर्तमान स्थिति ;

(vi) उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट उसके उत्तरदायित्वों का पालन करने में समर्थ बनाने के लिए किए जाने वाले अपेक्षित उपाय ;

(ख) खंड (क) में निर्दिष्ट योजना का वार्षिक रूप से पुनर्विलोकन और अद्यतन करेगा ;

(ग) यथास्थिति, खंड (क) या खंड (ख) में निर्दिष्ट योजना की एक प्रति केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित करेगा जिसे सरकार उसके अनुमोदन के लिए राष्ट्रीय प्राधिकरण को भेजेगी ।

(2) भारत सरकार का प्रत्येक मंत्रालय या विभाग –

(क) उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन जब आपदा प्रबंधन योजना तैयार की जा रही हो तब उसमें विनिर्दिष्ट क्रियाकलापों के वित्तपोषण के लिए उपबंध करेगा ;

(ख) राष्ट्रीय प्राधिकरण की उपधारा (1) के खंड (क) में निर्दिष्ट योजना के कार्यान्वयन से संबंधित स्थिति रिपोर्ट, जब भी अपेक्षित हो, देगा ।

38. राज्य सरकार द्वारा उपाय करना – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक राज्य सरकार राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों में विनिर्दिष्ट सभी उपाय तथा ऐसे और उपाय करेगी जिन्हें वह आपदा प्रबंधन के प्रयोजन के लिए आवश्यक या समीचीन समझे ।

(2) उन उपायों के अंतर्गत जिन्हें राज्य सरकार उपधारा (1) के अधीन कर सकेगी, निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों की बाबत उपाय भी हैं, अर्थात् :–

(क) राज्य सरकार के विभिन्न विभागों, राज्य प्राधिकरण, जिला प्राधिकरणों, स्थानीय प्राधिकारी और अन्य गैर सरकारी संगठनों के कार्यों का समन्वय ;

(ख) आपदा प्रबंधन में राष्ट्रीय प्राधिकरण और राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य प्राधिकरण और राज्य कार्यकारिणी समिति तथा जिला प्राधिकरणों को सहयोग और उनकी सहायता ;

(ग) भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों का आपदा प्रबंधन में ऐसा सहयोग या सहायता जिनके लिए उनके द्वारा अनुरोध किया जाए या जो उसके द्वारा अन्यथा उचित समझे जाएं ;

(घ) राज्य सरकार के विभागों द्वारा आपदा के निवारण, शमन, क्षमता निर्माण और तैयारी के लिए राज्य योजना तथा जिला योजनाओं के उपबंधों के अनुसार उपायों के लिए निधियों का आबंटन ;

(ङ) राज्य सरकार के विभागों द्वारा अपनी विकास योजनाओं और परियोजनाओं में आपदा के निवारण या शमन के लिए उपायों के एकीकरण को सुनिश्चित करना ;

(च) राज्य के विभिन्न भागों में विभिन्न आपदाओं की संवेदनशीलता को कम करने या शमन करने के लिए राज्य विकास योजना या उपायों में एकीकरण ;

(छ) राज्य के विभिन्न विभागों द्वारा राष्ट्रीय प्राधिकरण और राज्य प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शन सिद्धांतों के अनुसार आपदा प्रबंधन योजनाएं तैयार करने को सुनिश्चित करना ;

(ज) संवेदनशील समुदायों के स्तर तक पर्याप्त चेतावनी प्रणालियों की स्थापना ;

(झ) यह सुनिश्चित करना कि राज्य सरकार के विभिन्न विभाग और जिला प्राधिकरण समुचित तैयारी के लिए उपाय करें ;

(ञ) यह सुनिश्चित करना कि आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा में राज्य सरकार के विभिन्न विभागों के संसाधन, किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के प्रभावी मोचन, बचाव और राहत के प्रयोजन के लिए, यथास्थिति, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या राज्य कार्यकारिणी समिति को उपलब्ध कराए गए हैं ;

(ट) किसी आपदा से पीड़ित व्यक्तियों का पुनर्वास करना और उन्हें पुनर्निर्माण में सहायता देना ;

(ठ) ऐसे अन्य विषय जिन्हें वह इस अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक या समीचीन समझे ।

39. राज्य सरकार के विभागों के उत्तरदायित्व – राज्य सरकार के प्रत्येक विभाग का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह –

(क) राष्ट्रीय प्राधिकरण और राज्य प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार आपदाओं के निवारण, शमन तैयारी और क्षमता निर्माण के लिए आवश्यक उपाय करे ;

(ख) अपनी विकास योजनाओं और परियोजनाओं में आपदा के निवारण और शमन के लिए उपायों को एकीकृत करे ;

(ग) आपदा के निवारण, शमन, क्षमता-निर्माण और तैयारी के लिए निधियां आबंटित करे ;

(घ) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा का राज्य योजना के अनुसार और राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति और राज्य कार्यकारिणी समिति के मार्गदर्शक सिद्धांतों या निदेशों के अनुसार प्रभावी रूप से और तत्परता से मोचन करे ;

(ङ) आपदाओं के निवारण, शमन या उसके लिए तैयारी के आवश्यक उपबंध सम्मिलित करने की दृष्टि से उसके द्वारा प्रशासित अधिनियमितियों, अपनी नीतियों, नियमों और विनियमों का पुनर्विलोकन करे ;

(च) निम्नलिखित के लिए राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य कार्यकारिणी समिति और जिला प्राधिकरणों द्वारा, यथा अपेक्षित,

सहायता प्रदान करे,—

(i) शमन, तैयारी और मोचन, क्षमता निर्माण, डाटा संग्रहण और आपदा प्रबंधन के संबंध में कर्मचारिवृंद की पहचान और उनके प्रशिक्षण के लिए योजनाएं तैयार करना ;

(ii) किसी आपदा से नुकसान का निर्धारण करना ;

(iii) पुनर्वास और पुनर्निर्माण का कार्य करना ;

(छ) जिला स्तर पर अपने प्राधिकारियों द्वारा जिला योजना को कार्यान्वित करने के लिए राज्य प्राधिकरण के परामर्श से संसाधनों की व्यवस्था करे ;

(ज) राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरणों को राज्य में किसी आपदा के तत्परता से प्रभावी रूप से मोचन करने के प्रयोजनों के लिए, जिनके अंतर्गत निम्नलिखित के लिए उपाय करना भी है, अपने संसाधन उपलब्ध कराए —

(i) संवेदनशील या प्रभावित क्षेत्र में आपात संचार सुविधाएं उपलब्ध कराना ;

(ii) कार्मिकों और राहत सामग्री का प्रभावित क्षेत्र तक या उससे बाहर परिवहन प्रदान करना ;

(iii) निष्क्रमण, बचाव, अस्थायी आश्रय या अन्य तत्काल राहत प्रदान करना ;

(iv) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के किसी क्षेत्र से व्यक्तियों या पशुओं का निष्क्रमण करना ;

(v) अस्थायी पुल, घाट या हवाई पट्टियां स्थापित करना ;

(vi) प्रभावित क्षेत्र में पीने का पानी, आवश्यक रसद, स्वास्थ्य देखरेख सेवाएं उपलब्ध कराना ;

(झ) ऐसे अन्य कार्य करना जो आपदा प्रबंधन के लिए आवश्यक हों ।

40. राज्य सरकार के विभागों की आपदा प्रबंधन योजना — राज्य सरकार का प्रत्येक विभाग, राज्य प्राधिकरण द्वारा अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुरूप,—

(क) एक आपदा प्रबंधन योजना तैयार करेगा जिसमें

निम्नलिखित अधिकथित होगा :–

(i) उन आपदाओं के प्रकार जिनसे राज्य के विभिन्न भाग संवेदनशील हैं ;

(ii) आपदा के निवारण या उसके प्रभावों के शमन या दोनों के लिए नीतियों का उस विभाग द्वारा विकास योजनाओं और कार्यक्रमों के साथ एकीकरण ;

(iii) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा की दशा में और उन आपातकालीन सहायता कार्यों में जिनके किए जाने की उनसे अपेक्षा है, राज्य के उक्त विभाग की भूमिका और उत्तरदायित्व ;

(iv) उपखंड (iii) के अधीन ऐसी भूमिका या उत्तरदायित्वों या आपातकालीन सहायता कार्य को करने की उसकी तैयारियों की वर्तमान स्थिति ;

(v) धारा 37 के अधीन भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों को उनके उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने के लिए समर्थ बनाने हेतु किए जाने वाले प्रस्तावित क्षमता निर्माण और तैयारी के उपाय ;

(ख) खंड (क) में निर्दिष्ट योजना का वार्षिक रूप से पुनर्विलोकन और उन्हें अद्यतन करना ; और

(ग) राज्य प्राधिकरण को, यथास्थिति, खंड (क) या खंड (ख) में निर्दिष्ट योजना की प्रति देना ।

(2) राज्य सरकार का प्रत्येक विभाग, उपधारा (1) के अधीन योजना तैयार करते समय, उसमें विनिर्दिष्ट क्रियाकलापों के वित्तपोषण के लिए उपबंध करेगा ।

(3) राज्य सरकार का प्रत्येक विभाग राज्य कार्यकारिणी समिति को उपधारा (1) में निर्दिष्ट आपदा प्रबंधन योजना के कार्यान्वयन के संबंध में कार्यान्वयन स्थिति की रिपोर्ट देगा ।

अध्याय 6

स्थानीय प्राधिकारी

41. स्थानीय प्राधिकारी के कृत्य – (1) स्थानीय प्राधिकारी, जिला प्राधिकरण के निदेशों के अधीन रहते हुए,–

(क) यह सुनिश्चित करेगा कि उसके अधिकारी और कर्मचारी आपदा प्रबंधन के लिए प्रशिक्षित हैं ;

(ख) यह सुनिश्चित करेगा कि आपदा प्रबंधन से संबंधित संसाधनों का इस प्रकार अनुरक्षण किया जा रहा है जिससे कि वे किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा की दशा में सदैव उपयोग के लिए उपलब्ध रहेंगे ;

(ग) यह सुनिश्चित करेगा कि उसके अधीन या उसकी अधिकारिता के भीतर सभी सन्निर्माण परियोजनाएं राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण और जिला प्राधिकरण द्वारा आपदाओं के निवारण और शमन के लिए अधिकथित मानकों और विनिर्देशों के अनुरूप हैं ;

(घ) प्रभावित क्षेत्र में राज्य योजना और जिला योजना के अनुसार राहत, पुनर्वास और पुनर्निर्माण के क्रियाकलाप करेगा ।

(2) स्थानीय प्राधिकारी ऐसे अन्य उपाय कर सकेगा जिन्हें वह आपदा प्रबंधन के लिए आवश्यक समझे ।

अध्याय 7

राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान

42. राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान – (1) ऐसी तारीख से जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त नियत करे, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के नाम से एक संस्थान का गठन किया जाएगा ।

(2) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान में उतने सदस्य होंगे, जितने केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

(3) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के सदस्यों की पदावधि और उनमें रिक्तियां तथा ऐसी रिक्तियों को भरे जाने की रीति वह होगी जो विहित की जाए ।

(4) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान का एक शासी निकाय होगा जिसका गठन केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के सदस्यों में से ऐसी रीति से किया जाएगा जो विहित की जाए ।

(5) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान का शासी निकाय ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगी तथा ऐसे कृत्यों का निर्वहन करेगी जो विनियमों द्वारा

विहित किए जाएं ।

(6) शासी निकाय द्वारा अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कृत्यों के निर्वहन में अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया और शासी निकाय के सदस्यों की पदावधि तथा उनकी रिक्तियों को भरे जाने की रीति वह होगी जो विनियमों द्वारा विहित की जाए ।

(7) इस धारा के अधीन विनियम बनाए जाने तक केन्द्रीय सरकार ऐसे विनियम बना सकेगी और इस प्रकार बनाए गए किसी विनियम को राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उपांतरित या विखंडित कर सकेगा ।

(8) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा अधिकथित विस्तृत नीतियों और मार्गदर्शक सिद्धांतों के भीतर रहते हुए कार्य करेगा और आपदा प्रबंधन, दस्तावेजीकरण और आपदा प्रबंधन की नीतियों, निवारणतंत्र और शमन के उपायों से संबंधित राष्ट्रीय स्तर की सूचना के आधार के विन्यास के क्षेत्र में प्रशिक्षण और अनुसंधान की योजना बनाने और उनका संवर्धन करने के लिए उत्तरदायी होगा ।

(9) उपधारा (8) में अंतर्विष्ट उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, राष्ट्रीय संस्थान, अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए,—

(क) आपदा प्रबंधन में प्रशिक्षण मापदंडों का विकास, अनुसंधान और दस्तावेजीकरण तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अयोजन कर सकेगा ;

(ख) ऐसी व्यापक मानव संसाधन विकास योजना तैयार कर सकेगा और उसे कार्यान्वित कर सकेगा जिसके अंतर्गत आपदा प्रबंधन के सभी पहलू आते हों ;

(ग) राष्ट्रीय स्तर की नीति बनाने में सहायता प्रदान कर सकेगा ;

(घ) सरकारी कृत्यकारियों सहित पणधारकों के लिए प्रशिक्षण और अनुसंधान कार्यक्रमों के विकास के लिए प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थानों की अपेक्षित सहायता कर सकेगा और राज्य स्तर के प्रशिक्षण संस्थानों के संकाय सदस्यों को प्रशिक्षण दे सकेगा ;

(ङ) राज्य स्तर की नीतियों, रणनीतियों, आपदा प्रबंधन ढांचे में राज्य सरकारों और राज्य प्रशिक्षण संस्थानों को सहायता तथा अपने कृत्यकारियों, सिविल सोसाइटी के सदस्यों, कार्पोरेट सेक्टर और

जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों सहित पणधारकों और सरकार के क्षमता निर्माण के लिए राज्य सरकारों या राज्य प्रशिक्षण संस्थानों को यथाअपेक्षित सहायता दे सकेगा ;

(च) आपदा प्रबंधन के लिए शैक्षिक और वृत्तिक पाठ्यक्रमों सहित शैक्षिक सामग्री का विकास कर सकेगा ;

(छ) बहुविपत्ति के शमन, तैयारी और उसके मोचन के उपायों से सहबद्ध महाविद्यालय या स्कूल अध्यापकों और छात्रों, तकनीकी कार्मिकों तथा अन्य व्यक्तियों सहित पणधारकों के बीच जागरूकता पैदा कर सकेगा ;

(ज) पूर्वोक्त उद्देश्यों का संवर्धन करने के लिए देश के भीतर या देश के बाहर अध्ययन पाठ्यक्रम, सम्मेलन, व्याख्यान, सेमिनार कर सकेगा, उनका आयोजन कर सकेगा और उन्हें सुकर बना सकेगा ;

(झ) पत्रिकाओं, अनुसंधान पत्रों और पुस्तकों का प्रकाशन करा सकेगा और पूर्वोक्त उद्देश्यों को अग्रसर करने के लिए पुस्तकालयों की स्थापना और उनका अनुरक्षण कर सकेगा ;

(ञ) ऐसे सभी अन्य विधिपूर्ण कार्य कर सकेगा जो उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक या आनुषंगिक हों ; और

(ट) ऐसे कोई अन्य कृत्य कर सकेगा जो उसे केन्द्रीय सरकार द्वारा समनुदेशित किए जाएं ।

43. राष्ट्रीय संस्थान की अधिकारी और अन्य कर्मचारी – केन्द्रीय सरकार राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान को उतने अधिकारी, परामर्शदाता और अन्य कर्मचारी उपलब्ध कराएगी जितने वह उसके कृत्यों का निर्वहन करने के लिए आवश्यक समझे ।

अध्याय 8

राष्ट्रीय आपदा मोचन बल

44. राष्ट्रीय आपदा मोचन बल – (1) किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के विशेषज्ञतापूर्ण मोचन के प्रयोजन के लिए एक राष्ट्रीय आपदा मोचन बल का गठन किया जाएगा ।

(2) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उक्त बल का गठन ऐसी रीति से किया जाएगा और बल के सदस्यों की सेवा की शर्तें

जिनके अंतर्गत उनके लिए अनुशासन संबंधी उपबंध भी हैं, वे होंगी जो विहित की जाएं ।

45. नियंत्रण, निदेशन, आदि – बल का साधारण अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण राष्ट्रीय प्राधिकरण में निहित होगा और उसके द्वारा उनका प्रयोग किया जाएगा तथा बल की कमान और उसका अधीक्षण केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय आपदा मोचन बल के महानिदेशक के रूप में नियुक्त किए जाने वाले अधिकारी में निहित होगा ।

अध्याय 9

वित्त, लेखा और संपरीक्षण

46. राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा से निपटने के लिए राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली एक निधि का गठन कर सकेगी और उसमें निम्नलिखित जमा किए जाएंगे –

(क) ऐसी रकम जिसे केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सम्यक् विनियोग के पश्चात्, प्रदान करे ;

(ख) ऐसे कोई अनुदान आपदा प्रबंधन के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा दिए गए कोई अनुदान ।

(2) केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय प्राधिकरण के परामर्श से अधिकथित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार आपातकालीन मोचन, राहत और पुनर्वास के व्ययों को चुकाने के लिए उपयोजित किए जाने हेतु राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति को राष्ट्रीय आपदा मोचन निधि उपलब्ध कराई जाएगी ।

47. राष्ट्रीय आपदा शमन निधि – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, आपदा के शमन के प्रयोजन के लिए अनन्य रूप से परियोजनाओं के लिए राष्ट्रीय आपदा शमन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली एक निधि का गठन कर सकेगी और उसमें ऐसी रकम जमा की जाएगी जो केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सम्यक् विनियोग के पश्चात्, प्रदान करे ।

(2) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन निधि का उपयोजन राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा किया जाएगा ।

48. राज्य सरकार द्वारा निधियों की स्थापना – (1) राज्य सरकार, राज्य प्राधिकरण और जिला प्राधिकरणों का गठन करने के लिए अधिसूचनाओं के जारी किए जाने के ठीक पश्चात् इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित निधियों की स्थापना करेगी, अर्थात् :–

(क) राज्य आपदा मोचन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली निधि ;

(ख) जिला आपदा मोचन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली निधि ;

(ग) राज्य आपदा शमन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली निधि ;

(घ) जिला आपदा शमन निधि के नाम से ज्ञात होने वाली निधि ।

(2) राज्य सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि –

(i) उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन स्थापित निधियां राज्य कार्यकारिणी समिति को उपलब्ध हैं ;

(ii) उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन स्थापित निधियां राज्य प्राधिकरण को उपलब्ध हैं ;

(iii) उपधारा (1) के खंड (ख) और खंड (घ) के अधीन स्थापित निधियां जिला प्राधिकरण को उपलब्ध हैं ।

49. मंत्रालयों और विभागों द्वारा निधियों का आबंटन – (1) भारत सरकार का प्रत्येक मंत्रालय या विभाग, अपने वार्षिक बजट में, अपनी आपदा प्रबंधन योजना में वर्णित क्रियाकलापों और कार्यक्रमों को करने के प्रयोजनों के लिए निधियों का उपबंध करेगा ।

(2) उपधारा (1) के उपबंध यथावश्यक परिवर्तनों सहित राज्य सरकार के विभागों को लागू होंगे ।

50. आपात उपापन और लेखा-जोखा – जहां किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा के कारण, राष्ट्रीय प्राधिकरण या राज्य प्राधिकरण अथवा जिला प्राधिकरण का यह समाधान हो जाता है कि बचाव या राहत के लिए रसद या सामग्री का तत्काल उपापन या संसाधनों का तत्काल उपयोजन आवश्यक है वहां, –

(क) वह संबद्ध विभाग या प्राधिकारी को उपापन करने के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और ऐसी दशा में, निविदाएं आमंत्रित करने के लिए अपेक्षित मानक प्रक्रिया का त्यजन किया गया समझा जाएगा ;

(ख) यथास्थिति, राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण द्वारा प्राधिकृत नियंत्रक अधिकारी द्वारा रसद या सामग्री के उपयोजन के बारे में प्रमाणपत्र ऐसी रसद या सामग्री के आपात उपापन के लेखा-जोखा प्रयोजन के लिए विधिमान्य दस्तावेज या बीजक माना जाएगा ।

अध्याय 10

अपराध और शास्तियां

51. बाधा डालने, आदि के लिए दंड – जो कोई, युक्तियुक्त कारण के बिना, –

(क) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के किसी अधिकारी या कर्मचारी अथवा राष्ट्रीय प्राधिकरण या राज्य प्राधिकरण अथवा जिला प्राधिकरण द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के लिए इस अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों के निर्वहन में बाधा डालेगा ; या

(ख) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण द्वारा या उसकी ओर से दिए गए किसी निदेश का पालन करने से इंकार करेगा,

तो वह दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से, अथवा दोनों से, दंडनीय होगा और यदि ऐसी बाधा या निदेशों का पालन करने से इंकार करने के परिणामस्वरूप जीवन की हानि होती है या उनके लिए आसन्न खतरा पैदा होता है, तो दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, दंडनीय होगा ।

52. मिथ्या दावे के लिए दंड – जो कोई जानबूझकर, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण के किसी अधिकारी से आपदा के परिणामस्वरूप कोई राहत, सहायता, मरम्मत, सन्निर्माण या अन्य फायदे अभिप्राप्त करने के लिए ऐसा दावा करेगा जिसके बारे में वह यह जानता है या यह विश्वास करने का उसके पास कारण है कि वह मिथ्या है, तो वह दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से भी, दंडनीय होगा ।

53. धन या सामग्री आदि के दुरुपयोजन के लिए दंड – जो कोई, जिसे किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा में राहत पहुंचाने के लिए आशयित कोई धन या सामग्री सौंपी गई है या अन्यथा कोई धन या

माल उसकी अभिरक्षा या अधिपत्य में है और वह ऐसे धन या सामग्री या उसके किसी भाग का दुरुपयोजन करेगा या अपने स्वयं के उपयोग के लिए उपयोजन करेगा अथवा उसका व्ययन करेगा या जानबूझकर किसी अन्य व्यक्ति को ऐसा करने के लिए विवश करेगा, तो वह दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से भी, दंडनीय होगा ।

54. मिथ्या चेतावनी के लिए दंड – जो कोई, जिसे किसी आपदा या उसकी गंभीरता या उसके परिमाण के संबंध में आतंकित करने वाली मिथ्या संकट-सूचना या चेतावनी देता है, तो वह दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से दंडनीय होगा ।

55. सरकार के विभागों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध सरकार के किसी विभाग द्वारा किया गया है वहां विभागाध्यक्ष ऐसे अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही की जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा, जब तक कि वह यह साबित नहीं कर देता कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध सरकार के किसी विभाग द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध विभागाध्यक्ष से भिन्न किसी अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसा अधिकारी उस अपराध का दोषी माना जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

56. अधिकारी की कर्तव्य पालन में असफलता या उसकी ओर से इस अधिनियम के उपबंधों के उल्लंघन के प्रति मौनानुकूलता – ऐसा कोई अधिकारी, जिस पर इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन कोई कर्तव्य अधिरोपित किया गया है और जो अपने पद के कर्तव्यों का पालन नहीं करेगा या करने से इंकार करेगा या स्वयं को उससे विमुख कर लेगा तो, जब तक कि उसने अपने से वरिष्ठ अधिकारी की अभिव्यक्त लिखित अनुमति अभिप्राप्त न कर ली हो या उसके पास ऐसा करने के लिए कोई अन्य विधिपूर्ण कारण न हो, ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, दंडनीय होगा ।

57. अध्यपेक्षा के संबंध में किसी आदेश के उल्लंघन के लिए शास्ति – यदि कोई व्यक्ति धारा 65 के अधीन किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करेगा तो वह ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, अथवा दोनों से, दंडनीय होगा ।

58. कंपनियों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध, किसी कंपनी या निगमित निकाय द्वारा किया गया है, वहां ऐसा प्रत्येक व्यक्ति, जो अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारोबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था, और साथ ही वह कंपनी भी ऐसे उल्लंघन के दोषी समझे जाएंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परंतु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को इस अधिनियम में उपबंधित किसी दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा किया गया है और यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है, वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजन के लिए –

(क) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम भी है ; और

(ख) फर्म के संबंध में "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।

59. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी – धारा 55 और धारा 56 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए कोई अभियोजन, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या ऐसी सरकार द्वारा साधारण या विशेष आदेश

द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी अधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना संस्थित नहीं किया जाएगा ।

60. अपराधों का संज्ञान – कोई भी न्यायालय इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित द्वारा परिवाद किए जाने पर करने के सिवाय नहीं करेगा,–

(क) राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, जिला प्राधिकरण या, यथास्थिति, उस प्राधिकरण या सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई अन्य प्राधिकारी या अधिकारी ; या

(ख) ऐसा कोई व्यक्ति, जिसने अभिकथित अपराध की और राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, जिला प्राधिकरण या पूर्वोक्तानुसार प्राधिकृत किसी प्राधिकारी या अधिकारी को परिवाद करने के अपने आशय की विहित रीति में कम-से-कम तीस दिन की सूचना दे दी है ।

अध्याय 11

प्रकीर्ण

61. विभेद का प्रतिषेध – आपदा के पीड़ित व्यक्तियों को प्रतिपूर्ति और राहत देते समय लिंग, जाति, समुदाय, उद्भव या धर्म के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जाएगा ।

62. केन्द्रीय सरकार की निदेश जारी करने की शक्ति – तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह आपदा प्रबंधन को सुकर बनाने या उसमें सहायता करने के लिए, यथास्थिति, भारत सरकार के मंत्रालयों या विभागों या राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या किसी राज्य सरकार, राज्य प्राधिकरण, राज्य कार्यकारिणी समिति, कानूनी निकायों या उनके किन्हीं अधिकारियों या कर्मचारियों को लिखित में निदेश जारी करे और ऐसा मंत्रालय या विभाग या सरकार या प्राधिकरण, कार्यकारिणी समिति, कानूनी निकाय, अधिकारी या कर्मचारी ऐसे निदेश का पालन करने के लिए आबद्ध होगा ।

63. बचाव कार्यों के लिए उपलब्ध कराई जाने वाली शक्तियां – संघ या राज्य का कोई अधिकारी या प्राधिकारी, उससे राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, किसी राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण द्वारा या ऐसी किसी समिति या प्राधिकरण द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा अनुरोध किए जाने पर, उस समिति या प्राधिकरण या उस व्यक्ति को,

आपदा के निवारण या उसके शमन या बचाव या राहत कार्यों के संबंध में कोई कृत्य करने के लिए ऐसे अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराएगा, जिनके लिए अनुरोध किया गया है ।

64. कतिपय परिस्थितियों में नियम, आदि बनाना या उनमें संशोधन करना – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए यदि, यथास्थिति, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण को यह प्रतीत होता है कि आपदाओं के निवारण या उनके शमन के प्रयोजनों के लिए, यथास्थिति, किसी नियम, विनियम, अधिसूचना, मार्गदर्शक सिद्धांत, अनुदेश, आदेश, स्कीम या उपविधि में उपबंध करना या उनमें संशोधन करना अपेक्षित है तो वह उस प्रयोजन के लिए, यथास्थिति, नियमों, विनियम, अधिसूचना, मार्गदर्शक सिद्धांतों, अनुदेश, आदेश, स्कीम या उपविधियों में संशोधन की अपेक्षा कर सकेगा और समुचित विभाग या प्राधिकारी ऐसी अपेक्षाओं का अनुपालन करने के लिए आवश्यक कार्रवाई करेगा ।

65. बचाव कार्य आदि के लिए संसाधनों, रसद, यानों आदि की अध्यपेक्षा करने की शक्ति – (1) यदि राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण या उसके द्वारा इस निमित्त यथा प्राधिकृत किसी अधिकारी को यह प्रतीत होता है कि,–

(क) किसी प्राधिकारी या व्यक्ति के पास किन्हीं संसाधनों की तत्काल भेजने के प्रयोजन के लिए आवश्यकता है ;

(ख) बचाव कार्य के प्रयोजन के लिए किन्हीं परिसरों की आवश्यकता है या उनकी आवश्यकता संभावित है ; या

(ग) आपदा से प्रभावित क्षेत्रों से संसाधनों के परिवहन या प्रभावित क्षेत्र को संसाधनों के परिवहन या बचाव, पुनर्वास या पुनः सन्निर्माण के संबंध में परिवहन के प्रयोजनों के लिए किसी यान की आवश्यकता है या उसकी आवश्यकता संभावित है,

तो ऐसा प्राधिकारी लिखित आदेश द्वारा, यथास्थिति, ऐसे संसाधनों या परिसरों ऐसे यान की अध्यपेक्षा कर सकेगा और ऐसे और आदेश भी कर सकेगा जो उसे अध्यपेक्षा के संबंध में आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों ।

(2) जब भी उपधारा (1) के अधीन किसी संसाधन, परिसर या यान की अध्यपेक्षा की जाती है वहां ऐसी अध्यपेक्षा की अवधि उस अवधि से अधिक नहीं होगी जिसके लिए ऐसे संसाधन, परिसर या यान उस उपधारा में उल्लिखित किसी भी प्रयोजन के लिए अपेक्षित हैं ।

(3) इस धारा में,–

(क) "संसाधन" के अन्तर्गत मानव और सामग्री संसाधन हैं ;

(ख) "सेवाओं" के अन्तर्गत सुविधाएं हैं ;

(ग) "परिसर" से कोई भूमि, भवन या भवन का कोई भाग अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत कोई झोंपड़ी, छप्पर या कोई अन्य संरचना या उसका भाग भी है ; और

(घ) "यान" से परिवहन के प्रयोजन के लिए उपयोग किया गया या उपयोग किए जाने के लिए सक्षम कोई यान अभिप्रेत है चाहे वह यांत्रिक शक्ति से या अन्यथा नोदित हो ।

66. प्रतिपूर्ति का संदाय – (1) जब भी धारा 65 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट कोई समिति, प्राधिकरण या अधिकारी, उस धारा के अनुसरण में किसी परिसर की अध्यपेक्षा करता है वहां हितबद्ध व्यक्तियों को प्रतिपूर्ति का संदाय किया जाएगा जिसकी रकम निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए अवधारित की जाएगी, अर्थात् :–

(i) परिसर के संबंध में संदेय किराया, या यदि इस प्रकार कोई किराया संदेय नहीं है तो उसके परिक्षेत्र में उसके समान परिसर के लिए संदेय किराया ;

(ii) यदि परिसर की अध्यपेक्षा के परिणामस्वरूप हितबद्ध व्यक्ति अपने आवास या कारबार के स्थान में परिवर्तन करने के लिए बाध्य होता है तो ऐसे परिवर्तन से अनुषंगी युक्तियुक्त व्यय (यदि कोई हों) :

परंतु जहां कोई हितबद्ध व्यक्ति इस प्रकार अवधारित प्रतिपूर्ति की रकम से व्यथित होकर, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार को तीस दिन के भीतर, मामले को किसी मध्यस्थ को निर्दिष्ट करने के लिए आवेदन करता है तो संदाय की जाने वाली प्रतिपूर्ति की रकम वह होगी जो, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त नियुक्त मध्यस्थ अवधारित करे :

परंतु यह और कि जहां प्रतिपूर्ति को प्राप्त करने के लिए हकदारी के संबंध में या प्रतिपूर्ति रकम के प्रभाजन के संबंध में कोई विवाद है वहां विवाद को, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी मध्यस्थ को अवधारण के लिए निर्दिष्ट किया जाएगा और उसे

ऐसे मध्यस्थ के निर्णय के अनुसार अवधारित किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा में "हितबद्ध व्यक्ति" पद से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो धारा 65 के अधीन अध्यपेक्षित परिसर पर, अध्यपेक्षा से तुरंत पूर्व वास्तविक रूप में काबिज था, या उस दशा में जहां कोई व्यक्ति इस प्रकार वास्तविक रूप में काबिज नहीं था वहां ऐसे परिसर का स्वामी अभिप्रेत है ।

(2) जब कभी धारा 65 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट कोई समिति, प्राधिकरण या अधिकारी उस धारा के अनुसरण में किसी यान की अध्यपेक्षा करता है तो उसके स्वामी को प्रतिकर का संदाय किया जाएगा जिसकी रकम, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा ऐसे यान के किराए के लिए उस परिक्षेत्र में विद्यमान भाड़ा या दरों के आधार पर अवधारित की जाएगी :

परन्तु जहां ऐसे अवधारित किए गए प्रतिकर की रकम से व्यथित ऐसे यान का स्वामी विहित समय के भीतर मामले को किसी मध्यस्थ को निर्दिष्ट करने के लिए, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार को आवेदन करता है तो संदत्त की जाने वाली प्रतिकर की रकम वह होगी जो, इस निमित्त यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा नियुक्त मध्यस्थ अवधारित करे :

परन्तु यह और कि जहां अध्यपेक्षा किए जाने के ठीक पूर्व यान या जलयान, अवक्रय करार के कारण स्वामी से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति के कब्जे में था वहां अध्यपेक्षा की बाबत संदेय कुल प्रतिकर के रूप में, इस उपधारा के अधीन अवधारित रकम उस व्यक्ति और स्वामी के बीच ऐसी रीति में प्रभावित की जाएगी जिसमें वे सहमत हों और करार के व्यतिक्रम में ऐसी रीति से प्रभाजित की जाएगी जो, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा नियुक्त मध्यस्थ इस निमित्त विनिश्चय करे ।

67. चेतावनी, आदि की संसूचना के लिए मीडिया को निदेश – राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण या कोई जिला प्राधिकरण किसी प्राधिकारी या किसी श्रव्य या श्रव्य-दृश्य मीडिया या संसूचना के ऐसे साधनों पर नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति को, जो किसी आपदा की आशंका की स्थिति या आपदा की बाबत किसी चेतावनी या मंत्रणाओं को कार्यान्वित करने के लिए उपलब्ध हों, निदेश देने की सरकार को सिफारिश कर सकेगा और संसूचना के उक्त साधन और यथा अभिहित मीडिया ऐसे निदेश का पालन करेगा ।

68. आदेशों या विनिश्चयों का अधिप्रमाणन – राष्ट्रीय प्राधिकरण या राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या राज्य प्राधिकरण या राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण का प्रत्येक आदेश या विनिश्चय, राष्ट्रीय प्राधिकरण या राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति या राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण के ऐसे अधिकारियों द्वारा अधिप्रमाणित किया जाएगा जो इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत हों ।

69. शक्तियों का प्रत्यायोजन – यथास्थिति, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य कार्यकारिणी समिति लिखित साधारण या विशेष आदेश द्वारा अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य या किसी अधिकारी को ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के यदि कोई हों अधीन रहते हुए जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं, इस अधिनियम के अधीन अपनी ऐसी शक्तियों और कृत्यों को, जो वह आवश्यक समझे, प्रत्यायोजित कर सकेगी ।

70. वार्षिक रिपोर्ट – (1) राष्ट्रीय प्राधिकरण, प्रत्येक वर्ष ऐसे प्ररूप में और ऐसे समय पर, जो विहित किया जाए, अपनी वार्षिक रिपोर्ट तैयार करेगा, जिसमें पूर्व वर्ष के दौरान अपने क्रियाकलापों का सही और पूरा विवरण दिया जाएगा और उसकी प्रतियां केन्द्रीय सरकार को भेजेगा और वह सरकार उसकी प्राप्ति के एक मास के भीतर उसे संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखवाएगी ।

(2) राज्य प्राधिकरण, प्रत्येक वर्ष, ऐसे प्ररूप में और ऐसे समय पर जो विहित किया जाए एक वार्षिक रिपोर्ट तैयार करेगा, जिसमें पूर्व वर्ष के दौरान किए गए उसके क्रियाकलापों का सही और पूरा विवरण दिया जाएगा और उसकी प्रतियां राज्य सरकार को भेजेगा और वह सरकार, जहां उस राज्य के विधान-मंडल में दो सदन हैं वहां राज्य विधान-मंडल के प्रत्येक सदन के समक्ष और जहां ऐसे विधान-मंडल में केवल एक ही सदन है वहां उस सदन के समक्ष रखवाएगी ।

71. न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन – किसी न्यायालय को (उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को छोड़कर) केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य सरकार, राज्य प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण द्वारा इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में या इसके अधीन कृत्यों के संबंध में की गई किसी बात या कार्रवाई, किए गए आदेश, दिए गए निदेश या अनुदेश या मार्ग निदेशन के संबंधों में कोई वाद या कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं होगी ।

72. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव – इस अधिनियम के उपबंध,

तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में या इस अधिनियम से भिन्न किसी विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

73. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई – इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए नियमों या विनियमों के उपबंधों के अधीन केन्द्रीय सरकार या राष्ट्रीय प्राधिकरण या राज्य सरकार या राज्य प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण या स्थानीय प्राधिकारी या केन्द्रीय सरकार या राष्ट्रीय प्राधिकरण या राज्य सरकार या राज्य प्राधिकरण या जिला प्राधिकरण या स्थानीय प्राधिकारी के किसी अधिकारी या कर्मचारी या ऐसी सरकार या प्राधिकरण के निमित्त कार्यरत किसी व्यक्ति द्वारा सद्भावपूर्वक किए गए किसी कार्य या किए जाने के लिए तात्पर्यित या किए जाने के लिए आशयित किसी कार्य की बाबत किसी न्यायालय में कोई वाद या अभियोजन या अन्य कार्यवाही ऐसे प्राधिकरण या सरकार या ऐसे अधिकारी या कर्मचारी या ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध नहीं होगी ।

74. विधिक प्रक्रिया से उन्मुक्ति – केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रीय प्राधिकरण, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, राज्य सरकार, राज्य प्राधिकरण, राज्य कार्यकारिणी समिति या जिला प्राधिकरण के अधिकारी और कर्मचारी अपनी शासकीय क्षमता में उनके द्वारा संसूचित या प्रसारित किसी आसन्न आपदा की बाबत, ऐसी संसूचना या प्रसारण के अनुसरण में उनके द्वारा की गई कार्रवाई या जारी निदेश की बाबत विधि प्रक्रिया से उन्मुक्त रहेंगे ।

75. केन्द्रीय सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन राष्ट्रीय प्राधिकरण की संरचना और सदस्यों की संख्या तथा उसकी उपधारा (4) के अधीन राष्ट्रीय प्राधिकरण के सदस्यों की पदावधि और सेवा की शर्तें ;

(ख) धारा 7 की उपधारा (2) के अधीन सलाहकार समिति के सदस्यों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;

(ग) धारा 8 की उपधारा (3) के अधीन राष्ट्रीय कार्यकारिणी

समिति के अध्यक्ष की शक्तियां और उसके कृत्य तथा धारा 8 की उपधारा (4) के अधीन राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा अपनी शक्तियों का प्रयोग और अपने कृत्यों का निर्वहन करने में अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया ;

(घ) धारा 9 की उपधारा (3) के अधीन राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा गठित उपसमिति से सहयुक्त व्यक्तियों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;

(ङ) धारा 42 की उपधारा (2) के अधीन राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के सदस्यों की संख्या, उपधारा (3) के अधीन सदस्यों की पदावधि और उनकी रिक्तियां तथा ऐसी रिक्तियों को भरे जाने की रीति और उपधारा (4) के अधीन राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के शासी निकाय के गठन की रीति ;

(च) धारा 44 की उपधारा (2) के अधीन बल के गठन की रीति, अनुशासनिक उपबंधों सहित बल के सदस्यों की सेवा की शर्तें ;

(छ) वह रीति जिसमें धारा 60 के खंड (ख) के अधीन राष्ट्रीय प्राधिकरण, राज्य प्राधिकरण, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार या प्राधिकारी या अधिकारी को अपराध की सूचना और परिवाद करने के आशय की सूचना दी जाएगी ;

(ज) वह प्ररूप जिसमें और वह समय जिसके भीतर धारा 70 के अधीन वार्षिक रिपोर्ट तैयार की जानी है ;

(झ) अन्य कोई विषय जो विहित किया जाए या किया जा सके या जिसके संबंध में नियमों द्वारा उपबंध किया जाना है ।

76. विनियम बनाने की शक्ति – (1) राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान, केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए, इस अधिनियम और तद्धीन बनाए गए नियमों से संगत विनियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगा ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे विनियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के संबंध में उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) शासी निकाय द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियां और उनके द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कृत्य ;

(ख) शासी निकाय द्वारा अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कृत्यों के निर्वहन में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया ;

(ग) ऐसा कोई अन्य विषय जिसके लिए इस अधिनियम के अधीन विनियमों द्वारा उपबंध किए जा सकेंगे ।

77. नियमों और विनियमों का संसद् के समक्ष रखा जाना – इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम और राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान द्वारा बनाया गया प्रत्येक विनियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम या विनियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं या दोनों सदन इस बात के लिए सहमत हो जाएं कि नियम या विनियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो वह नियम या विनियम केवल, यथास्थिति, ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा या निष्प्रभाव हो जाएगा । तथापि, ऐसे परिवर्तन या निष्प्रभाव होने से उस नियम या विनियम के अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

78. राज्य सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) राज्य सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 14 की उपधारा (2) के अधीन राज्य प्राधिकरण की संरचना और सदस्यों की संख्या तथा उसकी उपधारा (5) के अधीन राज्य प्राधिकरण के सदस्यों की पदावधि और सेवा की शर्तें ;

(ख) धारा 17 की उपधारा (2) के अधीन सलाहकार समिति के सदस्यों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;

(ग) धारा 20 की उपधारा (3) के अधीन राज्य कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष की शक्तियां और उसके कृत्य तथा धारा 20 की उपधारा (4) के अधीन राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा अपनी

शक्तियों का प्रयोग और अपने कृत्यों का निर्वहन करने में अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया ;

(घ) धारा 21 की उपधारा (3) के अधीन राज्य कार्यकारिणी समिति द्वारा गठित उप समिति से सहयुक्त व्यक्तियों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;

(ङ) धारा 25 की उपधारा (2) के अधीन जिला प्राधिकरण की संरचना और उसके सदस्यों की संख्या तथा धारा 25 की उपधारा (3) के अधीन जिला प्राधिकरण के मुख्य कार्यकारी अधिकारी द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियां और निर्वहन किए जाने वाले कृत्य ;

(च) धारा 28 की उपधारा (3) के अधीन विशेषज्ञों के रूप में जिला प्राधिकरण द्वारा गठित किसी समिति से सहयुक्त व्यक्तियों को संदेय भत्ते ;

(छ) अन्य कोई विषय जो विहित किया जाए या किया जा सके या जिसके संबंध में नियमों द्वारा उपबंध किया जाना है ।

(3) इस अधिनियम के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, राज्य विधान-मंडल के प्रत्येक सदन के, जहां वह दो सदनों से मिलकर बना है या जहां ऐसा विधान-मंडल एक सदन का है, वहां उस सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

79. कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसा आदेश कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हो और जो कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत हो :

परंतु इस अधिनियम के प्रारंभ से दो वर्ष के अवसान के पश्चात् ऐसा कोई आदेश नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र यथास्थिति, संसद् या विधान-मंडल के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।